बुनियादी तालीम के दो साल

दूसरी बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा परिषद,

जामियानगर, दिल्ली, अप्रैल, १९४१,

की रिपोर्ट

बुनियादी तालीम के दो साल

दूसरी बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा परिषद,

जामियानगर, दिल्ली, अप्रैल, १९४१,

की रिपोर्ट

हिन्दुस्तानी तालीमी संघ

सेवाग्राम, वर्धा, सी पी.

प्रस्तावना

गान्धीजी का सन्देश

(हिन्दी अनुवाद)

मुझे उम्मीद है कि कॉन्फ्रेन्स यह महसूस करेगी कि किसी प्रयत्न की सफलता सरकार की सहायता से ज्यादा खुद अपनी सहायता पर निर्भर है, क्योंकि सरकार की नीयत चाहे जितनी अच्छी हो फिर भी उसे सावधानी के साथ चलना पडता। हमारे प्रयोग को पक्का होने के लिए कहीं-न-कहीं तो खोट और बाहरी हस्तक्षेप से बचा रहना चाहिए।

अनुक्रमणिका

दो शब्द

बुनियादी तालीम की दूसरी कॉन्फ्रेंस का हाल आपके सामने है। इसके पढ़ने से आपको अंदाज़ा हो सकेगा कि बुनियादी तालीम का काम करनेवाले क्या सोच रहे हैं और क्या कर रहे हैं। कभी-कभी ऐसा होता है कि आदमी ख़ाली सोच के मैदान में अपना घोड़ा दौड़ाता है, लेकिन वह मैदान ऐसा बड़ा है कि लगाम पर हाथ न हो तो आदमी न जाने कहा-कहा भटकता फिरे। कभी ऐसा होता है कि काम के चक्कर में आदमी कोल्हू के बैल की तरह दिन भर चलता है मगर शाम को वहीं होता है जहा से सुबह चला था। वह तो जब सोच-विचार कर काम साधता है और काम की आँखों पर पट्टी नहीं बँधी होती बल्कि सोच-विचार की रोशनी सामने उजाला करती जाती है, तब ही काम ठीक-ठीक चलता है।

इस रिपोर्ट से आपको मालूम होगा कि बुनियादी तालीम का काम करने वाले इसी अंदाज़ से अपना काम करना चाहते हैं। वे यह भी जानते हैं कि उन्हें बहुत कुछ और सोचना है और बहुत कुछ और करना है। अपने खयाल और अपने काम की जाच के लिए ये फिर भी मिलेंगे और उनके मिलने का हाल अगली कॉन्फ्रेंसों की रिपोर्टों से आपके सामने आयेगा। इस किताब में उनके दूसरी मरतबा मिलने का हाल दर्ज है।

जो लोग बे-सोचे और बे-काम किये दूसरों के खयालों और कामों पर राय देना अपना हक़ समझते हैं, उनका काम तो इस रिपोर्ट के बगैर भी चल सकता है। वे शायद इसे न पढ़ें और पढ़ें तो ज़्यादा फ़ायदा न उठा सकें। लेकिन जो लोग इस काम में लगे हुए हैं और वे जो इसकी जरूरत समझते हैं, ज़रूर इससे फ़ायदा उठा सकेंगे। यह उन्हें कमहिम्मती की मायूसी से भी बचायेगी और बेहक़ उमीद के नशे से भी। यह हिम्मत भी बढ़ायेगी और गलतियाँ भी जतायेगी और क्या अजब है कि सोच-विचार और काम की नई राहें भी सुझाये।

जामिया नगर, दिल्ली
११ सितम्बर १९४१

ज़ाकिर हुसैन

१९४०–४१ में बुनियादी शिक्षा की प्रगति

(अ) भूमिका

मैं हिन्दुस्तानी तालीमी सघ की ओर से बडे हर्ष के साथ आप सबका बुनियादी तालीम की इस दूसरी कॉन्फ्रेस मे स्वागत करता हूँ। लगभग डेढ़ साल हुए कि हम बम्बई सरकार के निमन्त्रण पर पूना में अक्तूबर १९३९ में पहली बार इकट्ठे हुए थे। यह पहली कॉन्फ्रेंस ऐसे समय हुई थी जब हमें बुनियादी तालीम के काम का सिर्फ एक साल का व्यावहारिक अनुभव हुआ था और यह एक साल भी ज़्यादातर बुनियादी स्कूलों मे इसका प्रयोग शुरू करने की तैयारी में ही बीता था। इसलिए हमारा अनुभव कम भी था और नाकाफी भी। लेकिन यह अच्छी बात हुई कि इस कॉन्फ्रेंस में बुनियादी तालीम के सरकारी और गैर-सरकारी कार्यकर्ता देश के हर हिस्से से आकर शामिल हुए। इन लोगों ने अपने अनुभवों के आधार पर बुनियादी तालीम के मूल सिद्धान्तो पर चर्चाएँ की और इन चर्चाओं के नतीजो का सार कॉन्फ्रेस के अन्त मे निर्णयो के रूप मे रख दिया गया। सबसे महत्वपूर्ण निर्णय यह था —

"पिछले दो वर्षों मे बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा ने एकसी और सन्तोषजनक प्रगति की है, और सरकारी अफ़सरो तथा निजी काम करनेवालो ने अपने प्रयोगों और अनुभवो के जो विवरण दिये है उनसे यह आशा होती है कि बुनियादी तालीम धीरे-धीरे देश की मौजूदा शिक्षा-पद्धति मे क्रातिकारी परिवर्तन कर देगी।"

पहली कॉन्फ्रेंस के लिए जब हम इकट्ठे हुए थे तब हमारे अनुभव तो नाकाफ़ी थे ही, लेकिन उस समय एक गम्भीर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सकट का बादल भी छाया हुआ था। उधर तो यूरोप मे महायुद्ध शुरू हो गया था और इधर हमारे राष्ट्रीय जीवन में कांग्रेसी मन्त्रिमन्डल स्तीफे दे चुके थे या देने वाले थे।

सारा वातावरण अनिश्चित और चिन्तापूर्ण था। हरेक के मुँह पर यही सवाल था, "कांग्रेस के झमेले में पड़ जाने के बाद बुनियादी तालीम का क्या होगा? इस चिन्ता को पूना कॉन्फ्रेस ने नीचे लिखे प्रस्ताव मे प्रगट किया था —

"बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा का काम देश के भविष्य के लिए इतना अधिक महत्वपूर्ण है कि भविष्य मे चाहे जो राजनैतिक परिवर्त्तन हो, यह तो बिना किसी रुकावट के जारी रहना ही चाहिए।"

सौभाग्य से बुनियादी तालीम का काम झमेले मे नही पड़ा। बुनियादी तालीम इस राजनैतिक संकट को पार कर गयी और अब वह राजनैतिक लगाव से छुटकारा पाकर अपनी आन्तरिक खूबियों के बल पर डेढ साल से शिक्षा के पुन-र्संगठन की एक योजना की तरह चल रही है। इस तरह आज हम दो साल के और कहीं-कही तीन साल के अनुभवों से फ़ायदा उठाकर और मज़बूत होकर कॉन्फ्रेस मे जमा हो रहे है।

यह सही है कि आज की परिस्थिति उस समय की परिस्थिति से अच्छी नहीं है। आज हमे एक ऐसी बडी दुखदायी आफत ने घेर रक्खा है जैसी मनुष्य जाति के इतिहास मे शायद ही कोई मिले। आज यूरोप मे जीवन को पवित्र और मूल्यवान बनानेवाली तमाम वस्तुएं जिस निरंकुश निर्दयता के साथ नष्ट की जा रही हैं उनकी वीभत्सता कल्पना से बाहर है। इधर हमारे देश मे राजनैतिक और नैतिक स्वाधीनता के एक राष्ट्र-व्यापी आन्दोलन की लहर फैल रही है। हमारे बहुत से नेता और सहयोगी या तो जेल में हैं या जेल जाने की तैयारियाँ कर रहे हैं। इसलिए इस बात पर बड़ी गभीरता से विचार किया गया कि ऐसे राजनैतिक संकट के समय बुनियादी तालीम की कॉन्फ्रेस करना संभव भी होगा या नहीं।

ऐसी परिस्थिति मे अगर हम बुनियादी तालीम पर चर्चा करने के लिए इकट्ठे हुए हैं तो इसका यह मतलब नहीं है कि अपने चारो ओर की दुखद घटनाओ के प्रति हमारे भाव कठोरतापूर्ण उदासीन है या नामधारी दार्शनिकों के से निर्लिप्त हैं। बल्कि जो कुछ हो रहा है उसे हम दिल से महसूस करते हैं। हम तो अपने इस अटल विश्वास को जतलाने के लिये जमा हुए हैं कि शिक्षा मानव-सभ्यता की रचना करनेवाली एक सजीव शक्ति है। हमारा उद्देश्य यह नहीं है कि शिक्षा-पद्धतियो को कूट-पीट कर ठीक करने के उपायों और मार्गों की चर्चा

करें बल्कि हम तो सबके सहयोग से ऐसी दिली कोशिश करना चाहते हैं कि शिक्षा का ढाँचा ही बदल जाय और शिक्षा के द्वारा समाज की व्यवस्था बदल जाय। मुझे आशा है कि अपनी चर्चा मे हम इस लक्ष्य को सदा सामने रक्खेंगे।

हमारे सामने तीन दिन के काम का प्रोग्राम है। चर्चा के लिए हमने बुनियादी तालीम के व्यावहारिक प्रयोग की तीन मुख्य समस्याओं को चुना है, या यूँ कहना चाहिए कि बुनियादी तालीम की मूल समस्या के तीन पहलुओं को चुना है। यह समस्या है, "बच्चे के भीतर रहनेवाली प्रच्छन्न संभावनाओं को प्रगट करने का सबसे अच्छा तरीका कौनसा है। उत्पादक उद्योग के माध्यम और बच्चे के भौतिक और सामाजिक चौगिर्द की सहायता से उसके व्यक्तित्व को विकास करने का सबसे अच्छा कौनसा तरीका है?"

"बुनियादी स्कूलो का काम" सबसे महत्त्वपूर्ण सवाल है, इसलिए पहले हम इसी पर विचार करेंगे। जैसा कि मै कह चुका हूँ हम बुनियादी स्कूलो के दो साल या तीन साल के काम के बाद यहाँ इकट्ठा हो रहे है। इन स्कूलों मे से बहुत से स्कूलों के प्रतिनिधि यहाँ मौजूद है और अपने-अपने काम की रिपोर्ट पेश करेंगे। इन रिपोर्टों से हमें काफी मसाला मिल जायगा कि हम बुनियादी तालीम की सबसे मूल समस्या को हल कर सकें कि बुनियादी शिक्षा की योजना से जो आशाएँ की जाती हैं उन्हे पूरा करने में बुनियादी स्कूलो के काम से किस हद तक सफलता मिली है। इस नयी शिक्षा का बच्चों के विकास पर क्या प्रभाव पड़ा है? क्या उनकी बुद्धि का विकास हो रहा है? क्या वे अपने सामाजिक और भौतिक चौगिर्द से जागरूक हो रहे है? क्या उनमे वैज्ञानिक कौतूहल और जिज्ञासा बढ रही है? क्या उनमें, खेल-कूद में या काम में, घर मे या स्कूल मे, कायदे और अनुशासन के साथ काम करने की आदतें पैदा होरही है? क्या वे पहले से ज्यादा साफ-सुथरे और खुश नज़र आते हैं? क्या उनमें अच्छी नागरिकता, सहयोग के साथ काम करने की आदत और समाज-सेवा के लक्षण दिखायी पड़ते हैं? क्या हमने बच्चों के माता-पिता और अभिभावको की उदासीनता और विरोध की पहली सीढ़ी पार कर ली है? क्या स्कूल और देहाती समाज के बीच अच्छे सम्बन्ध के लक्षण मालूम पडते है? क्या गॉव पर स्कूल के प्रभाव के कुछ चिन्ह नजर आते है?"

हमे इस योजना की व्यावहारिक कठिनाइयो को समझने और अपनी कमियों का अन्दाज़ लगाने का भी हार्दिक प्रयत्न करना चाहिए। प्राप्त हुए नतीजों से हमे ईमानदारी के साथ इस बात का पता लगाने की कोशिश करनी चाहिए कि बुनियादी स्कूलो मे आज जिस बुनियादी तालीम का प्रयोग हो रहा है वह वास्तव मे दस्तकारी के आधार पर शिक्षा है या केवल दूसरे विषयो के साथ दस्तकारी की शिक्षा है। क्या शिक्षक लोग ठीक तैयारी के साथ इस कठिन काम का बीड़ा उठा रहे है? अकेले और दूर के देहाती स्कूलो के बुनियादी शिक्षकों मे यह प्रवृत्ति तो नही है कि फिर पुराने ढर्रे की आसान पद्धति का सहारा लेने लगे? हमे बुनियादी स्कूलो के शिक्षको की कठिनाइयो को भी खूब अच्छी तरह समझने की कोशिश करनी चाहिए।

चर्चा का दूसरा विषय पहले विषय से ही जुड़ा हुआ है। वास्तव में यह बुनियादी स्कूलो के काम की समस्या का एक सजीव अग है। इसका उद्देश्य यह जॉचना है कि अनुबन्ध शिक्षा-पद्धति के पिछले तीन साल के अनुभवो पर बुनियादी शिक्षा का पाठ्यक्रम किस हद तक पूरा उतरा है। जाकिर हुसेन कमेटी की रिपोर्ट मे यह जतला दिया गया था कि बुनियादी पाठ्यक्रम काम-चलाऊ तौर पर बनाया गया था ताकि वह अनुबन्ध शिक्षा के प्रयोग का आधार बन सके। रिपोर्ट मे लिखा है:—

"मौजूदा शिक्षा-पद्धति को जड़ से बदलने की इच्छा रखनेवाले इस तरह के पाठ्यक्रम के लिए यह ज़रूरी है कि हमारी रिपोर्ट मे बतलाये हुए तरीके पर पूरी तरह प्रयोग और अनुभव हो। क्योकि ऐसे प्रयोगात्मक अनुभवो के बाद ही सारे संभावित अनुबन्धो को विश्वास के साथ अमल मे लाया जा सकता है। इस पाठ्यक्रम को तैयार करने मे हमने कोई बात उठा नहीं रक्खी है। शिक्षक होने के नाते शिक्षा सम्बन्धी जो हमारे अनुभव थे उनका हमने पूरा-पूरा उपयोग किया है और दूसरे मित्रों के सुझावों से भी लाभ उठाया है। फिर भी हम यह कह देना चाहते हैं कि यह पाठ्यक्रम अभी काम-चलाऊ है जो यह दिखाने के लिए तैयार किया गया है कि अनुबन्ध शिक्षा के जिन सिद्धान्तो की हमने हिमायत की है वे अमल मे लाये जा सकते है और उनके अनुसार पक्का पाठ्यक्रम भी बनाया जा सकता है। जैसे-जैसे ट्रेनिंग स्कूलों और कालिजो और नये बुनियादी स्कूलों

के शिक्षक इस योजना को वैज्ञानिक तौर पर अमल मे लावेगे और अपने नतीजों और अनुभवो को लिखते रखते जायँगे, वैसे-वैसे पाठ्यक्रम मे धीरे-धीरे सुधार भी किये जा सकेगे। इस योजना की सफलता और ठीक-ठीक व्यावहारिक प्रयोग के लिए शिक्षको मे इसी तरह की प्रयोगात्मक प्रवृत्ति का होना लाजिमी है।"

अभी हमारा अनुभव इतना नहीं हुआ है कि हम पाठ्यक्रम की अच्छाइयो और बुराइयो को बारीकी के साथ जॉच सके और न अभी तक हमे पाठ्यक्रम को सच्ची वैज्ञानिक भावना से अमल में लाने के काफी मौके ही मिले हैं। लेकिन हमने बुनियादी तालीम के कार्यकर्त्ताओं से पूछा है कि वे अनुभवो के आधार पर यह राय दे कि दस्तकारी और बच्चे के भौतिक और सामाजिक चौगिर्द को केन्द्र बनाकर पाठ्यक्रम पर अमल करने मे किस हद तक सफलता मिली है, अनुबन्ध कहॉ तक स्वाभाविक हुआ है और कहॉ तक जबरन और बनावटी हुआ है, दस्तकारी और चारो ओर के जीवन से बच्चे ने स्वाभाविक रूप मे ऐसी किन-किन बातो का ज्ञान प्राप्त किया है जो पाठ्यक्रम मे नही है? प्रदर्शिनी के द्वारा इन अनुभवो को आलेखो, नकशो वगैरा के रूप में व्यक्त करने की भी कोशिश की गयी है।

बुनियादी तालीम के कार्यकर्त्ताओं से यह भी कहा गया है कि वे 'अनुबन्ध शिक्षा-पद्धति' के टेढे सवाल पर भी अपने-अपने अनुभव कॉन्फ्रेस के सामने रक्खे।

यह महसूस किया गया कि पिछले दो वर्षों के अनुभवों के आधार पर बुनियादी दस्तकारी कताई के पाठ्यक्रम मे कुछ सुधार की जरूरत है। इसलिए हिन्दुस्तानी तालीमी सघ ने यह काम दस्तकारी विशेषज्ञो की एक कमेटी के सुपुर्द कर दिया। इन लोगों ने एक प्रायोगिक पाठ्यक्रम बनाया है जो कॉन्फ्रेस में पेश किया जायगा।

"शिक्षको की ट्रेनिग" का तीसरा विषय भी हमारी मुख्य समस्या का एक पहलू है, क्योंकि बुनियादी स्कूलों का काम बहुत हद तक ट्रेनिग स्कूलों में शिक्षकों की तैयारी पर निर्भर है। इस विषय पर हम लोग जरा विश्वास के साथ चर्चा कर सकते हैं, क्योंकि पिछले तीन वर्षों मे २२ ट्रेनिग केन्द्र और कई अनुभवी शिक्षा-शास्त्री बुनियादी तालीम के लिए शिक्षको की ट्रेनिंग का प्रयोग करते रहे हैं। हमे आशा है कि अब हमें इतना अनुभव प्राप्त हो गया है कि हम इस समस्या की कुछ कठिनाइयों को हल कर सके। हिन्दुस्तानी तालीमी संघ की मुकर्रर की

हुई दस्तकारी विशेषज्ञों की एक कमेटी ने ट्रेनिंग स्कूलों के लिए बुनियादी दस्तकारी कताई का एक विस्तृत पाठ्यक्रम सैद्धान्तिक और व्यावहारिक तैयार किया है जो कॉन्फ्रेंस के सामने रक्खा जायगा।

कॉन्फ्रेस की एक ख़ास बैठक "बुनियादी शिक्षा मे कला का स्थान और नयी बुनियादी दस्तकारियो की सम्भावना" पर विचार करने के लिए रक्खी गयी है। हमारा विश्वास है कि कला के द्वारा आत्म-भाव प्रकाशन बुनियादी शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अग है। लेकिन बात यह है कि कुशल कार्यकर्त्ताओं के अभाव में बुनियादी तालीम का यह पहलू अभी तक अधूरा ही है। हमने इलाहाबाद ट्रेनिंग कॉलेज के प्रिसिपल डॉ. इबादुर्रहमान खा से प्रार्थना की है कि वे इस विषय की चर्चा शुरू करें, क्योंकि इस दिशा में उन्होंने ही रास्ता बनाया है। हमें आशा है कि दूसरे ट्रेनिग स्कूल और बुनियादी स्कूल भी बुनियादी तालीम के इस पहलू पर ज़्यादा ध्यान देंगे।

कॉन्फ्रेस का काम शुरू होने से पहले मैं पिछले तीन वर्षो मे बुनियादी शिक्षा की प्रगति का एक सक्षिप्त विवरण आपके सामने रखना चाहता हूँ जिससे आगे होने वाली चर्चा मे मदद मिले। यह योजना किस तरह शुरू हुई और बढ़ी इसका परिचय तो आपको है ही, इसलिए इन शुरू की मंज़िलो को मैं बहुत ही सक्षेप मे बयान करूंगा।

बुनियादी तालीम की योजना के विकास में पहला कदम था वर्धा शिक्षा सम्मेलन। इस सम्मेलन मे गाधीजी ने अपनी बुनियादी शिक्षा की कल्पना को समझाया और उसे सम्मेलन में आनेवाले शिक्षा-शास्त्रियों और राष्ट्रीय कार्यकर्त्ताओं के सामने चर्चा के लिए पेश किया। कॉन्फ्रेस ने पूरे बहस—मुबाहसे के बाद बुनियादी शिक्षा के चारो मौलिक सिद्धान्तों को मान लिया और इसकी योजना को ठोस रूप देने के लिए डॉ. ज़ाकिर हुसैन की सदारत में एक कमेटी नियुक्त कर दी गयी। इसके बाद राष्ट्रीय महासभा (काग्रेस) ने अपने हरिपुरा (१९३८) के अधिवेशन मे ज़ाकिर हुसैन कमेटी की रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया और बुनियादी शिक्षा को राष्ट्रीय शिक्षा की नीति मान लिया।

अप्रैल १९३८ में बुनियादी तालीम के व्यावहारिक कार्यक्रम को संगठित रूप से अमल में लाने के लिए हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के नाम से एक शिक्षा का

बोर्ड बनाया गया, और उसी समय शिक्षकों की ट्रेनिंग के लिए वर्धा मे बुनियादी शिक्षा की पहली संस्था विद्या-मंदिर ट्रेनिंग स्कूल खोली गयी। धीरे-धीरे मध्य-प्रात, संयुक्त-प्रात, बिहार और बम्बई की सरकारों ने और काश्मीर रियासत ने प्रयोग के ढग पर बुनियादी शिक्षा जारी करने की ओर कदम बढाये। बुनियादी तालीम के बोर्ड और स्पेशल अफ़सर मुकर्रर किये गये, ट्रेनिंग स्कूल खोले गये और नये बुनियादी स्कूल खोलने या पुराने प्रायमरी स्कूलो को बुनियादी स्कूलों मे बदलने के लिए आवश्यक प्रबन्ध किये गये। कुछ राष्ट्रीय शिक्षा-सस्थाओं ने भी बुनियादी शिक्षा का काम हाथ मे लिया। दिल्ली की जामिया मिल्लिया इस्लामिया और मच्छलीपट्टम की आन्ध्र जातीय कलाशाला ने ट्रेनिंग केन्द्र खोले। इधर पूना के महाराष्ट्र विद्यापीठ ने और अहमदाबाद के गुजरात विद्यापीठ ने शिक्षकों की ट्रेनिंग और बुनियादी शिक्षा की शुरुआत मे बबई सरकार को सहयोग दिया।

इसी अर्से मे सारे देश मे शिक्षा के पुनर्संगठन की एक लहर फैलती हुई मालूम होने लगी। सयुक्तप्रात, मध्यप्रात और बिहार की प्रान्तीय सरकारों ने प्रायमरी से लगाकर यूनिवर्सिटी तक की सारी शिक्षा की जॉच करने और उस पर रिपोर्ट देने के लिए शिक्षा-पुनर्सगठन कमेटियाँ नियुक्त की। शिक्षा के सेन्ट्रल ऐड्वाइजरी बोर्ड ने भी बबई के तत्कालीन प्रधान मन्त्री और शिक्षा-मन्त्री श्री. बालासाहब खेर की सदारत मे एक कमेटी इस उद्देश्य से नियुक्त की कि वह वर्धा योजना को ऐबट और वुड रिपोर्ट तथा दूसरे सम्बन्धित कागज़ पत्रों की रोशनी मे जॉचे और उसके बारे मे अपनी सिफारिशें पेश करे।

बुनियादी तालीम शुरू होने के एक ही वर्ष के भीतर सयुक्त-प्रात की सरकार के खोले हुए रिफ्रैशर ट्रेनिंग केन्द्रों के अलावा १० ट्रेनिंग-केन्द्र बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग या दुबारा ट्रेनिंग के काम मे लगे हुए थे। सरकारी और निजी कोशिशो मे कुछ नये बुनियादी स्कूल भी खोले गये और कुछ प्रायमरी स्कूलो के कुछ दर्जों को बुनियादी बना दिया गया। इस तरह शिक्षा की यह नयी विचार-धारा धीरे-धीरे अमली जामा पहनने लगी।

दूसरे वर्ष, यानी १९३९-४० मे बुनियादी शिक्षा की प्रगति धीमी पर एक-सी रही। ट्रेनिंग स्कूलों ने एक साल के अनुभवों से लाभ उठा कर शिक्षकों की दूसरी टोलियों की ट्रेनिंग शुरू कर दी। तीन ट्रेनिंग स्कूल नये भी खोले गये।

नार्मल स्कूल के अध्यापकों और निरीक्षकों (सुपरवाइजर) की ट्रेनिंग के लिए वर्धा में विद्या-मन्दिर ट्रेनिंग इन्स्टीट्यूट के नाम से एक ऊँचे दर्जे का कॉलेज खोला गया। बम्बई सरकार ने उर्दू बुनियादी स्कूलों के लिए शिक्षक तैयार करने के लिये जलगाँव में, और मद्रास सरकार ने तामिलनाड के लिए शिक्षक तैयार करने के लिये कोयम्बटूर में, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल खोले। जैसे-जैसे शिक्षक तैयार होते गये वैसे-वैसे बुनियादी स्कूलों की संख्या बढ़ने लगी और बहुत से प्रायमरी स्कूलों को भी बुनियादी स्कूल बनाया जाने लगा। धीरे-धीरे बेसिक स्कूलों के शिक्षकों और इंतज़ामी अफ़सरों को बुनियादी शिक्षा के नये तरीके में अपनी कुशलता का विश्वास होने लगा और बुनियादी शिक्षा का काम ठीक ढंग पर आने लगा।

इतना हो चुकने पर बुनियादी शिक्षा के कार्यकर्त्ताओं और संगठन-कर्त्ताओं ने यह महसूस किया कि अगर वे लोग अपने व्यावहारिक अनुभवों को इकट्ठा करने और आगे के लिए नीति निर्धारित करने की गरज से एक जगह मिलें तो बहुत लाभ होगा। इस इरादे से बम्बई सरकार के न्यौते पर अक्तूबर १९३९ में पूना में बुनियादी तालीम की पहली कॉन्फ्रेंस का आयोजन किया गया। इस कान्फ्रेंस में देश-भर के बुनियादी शिक्षा के कार्यकर्त्ताओं के प्रतिनिधि और बहुत से दर्शक, शिक्षा-शास्त्री तथा बुनियादी शिक्षा में दिलचस्पी रखनेवाले राष्ट्रीय कार्यकर्त्ता शामिल हुए। सेन्ट्रल ऐड्वाइजरी बोर्ड की नियुक्त की हुई खेर कमेटी के सदस्यों को ख़ास तौर पर इस कान्फ्रेंस में बुलाया गया।

इसके बाद घटना-चक्र ने पलटा खाया और बुनियादी शिक्षा के प्रयोग को शुरू करनेवाले कांग्रेसी मंत्रि-मंडलों ने स्तीफ़े दे दिये। लेकिन यह आशंका कि कांग्रेसी मंत्रि-मंडलों के चले जाने से बुनियादी शिक्षा को धक्का पहुँचेगा निर्मूल साबित हुई और १९३९-४० के लिए बुनियादी शिक्षा के कार्यक्रम का जो ढाँचा बनाया गया था वह बिना किसी ज़ाहिरा रद्दो-बदल या कमी-बेशी के पूरा हो गया।

इसी अर्से में प्रान्तीय शिक्षा पुनसंगठन कमेटियों की रिपोर्टें भी पूरी होकर प्रकाशित हो गयीं। कमेटियों ने बुनियादी शिक्षा-योजना के मूल सिद्धान्तों को मान लिया और कइयों ने तो स्थानीय हालतों के मुताबिक कुछ छोटे-मोटे सुधार करके बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा के पाठ्यक्रम को भी अपना लिया। मध्यप्रान्त और संयुक्तप्रान्त की रिपोर्टों को तो प्रान्तीय सरकारों ने भी मान लिया।

दूसरे वर्ष के अन्त मे मध्य-प्रान्त, संयुक्त-प्रान्त, बिहार, उडीसा और बंबई की प्रान्तीय सरकारे और काश्मीर की रियासत तथा कुछ गैर-सरकारी संस्थाएँ बुनियादी शिक्षा के काम को शिक्षा के एक प्रयोग की तरह चला रही थीं। इस समय १२ ट्रेनिंग स्कूल, ट्रेनिंग कालेज, ७ रिफ्रेशर ट्रेनिंग केन्द्र और ५००० से ऊपर बुनियादी स्कूल, बुनियादी शिक्षा के इस प्रयोग मे लगे हुए थे।

विभिन्न प्रान्तो और देशी रियासतो मे तीसरे साल में बुनियादी शिक्षा की प्रगति की रिपोर्टें तो वहॉ की संस्थाऐ या वहॉ के अधिकारी पेश करेंगे। मैं तो सिर्फ़ उडीसा मे बुनियादी शिक्षा के विकास की कहानी का सक्षेप में जिक्र करना चाहता हूँ क्योंकि यह इस तीसरे साल की सबसे ज़्यादा स्फूर्तिदायक घटना है। इसका विस्तृत वर्णन तो उड़ीसा के कार्यकर्त्ता ही आपको सुनायेंगे, मै तो सघ की ओर से उड़ीसा निवासियों के उन प्रयत्नो का हृदय से अभिनन्दन करता हूं जो उन्होंने बुनियादी शिक्षा का काम बन्द करने के सरकारी निर्णय के बावजूद भी जारी रक्खे हैं। हमें आशा है कि इस तरह पूरी तौर से जनता के हाथों मे पड़कर यह प्रयोग गाधीजी के सदेश मे कही गयी आशाओ को पूरा करेगा कि प्रयत्न की सफलता सरकार से ज़्यादा स्वावलम्बन पर निर्भर है।

इस रिपोर्ट से आप लोगों को यह जाहिर हो गया होगा कि पिछले तीन वर्षों मे बुनियादी शिक्षा ने धीमी चाल से लेकिन उत्तरोत्तर प्रगति की है। हमारे अन्तिम उद्देश्य—सात से चौदह वर्ष के देश भर के बालको के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा—के मुक़ाबले मे तीन साल के ये कारनामे तुच्छ नजर आते हैं, लेकिन निरुत्साह का कोई कारण नहीं है। शिक्षा के पुनर्संगठन के किसी कार्यक्रम की सफलता या असफलता उसके विस्तार से नहीं बल्कि उसकी खूबियो से जॉची जाती है। प्रयोग के इस प्रारम्भिक काल मे हमें अपनी सारी शक्तियॉ ईमानदारी के साथ सच्चे काम मे लगा देनी चाहिए, सख्या बढाने पर नहीं। अगर हम थोड़े से भी स्कूलों मे बुनियादी शिक्षा की मूल कल्पना का विकास करने में और इस नये तरीक़े द्वारा थोड़े भी बच्चो की आन्तरिक प्रवृतियो को जगाने में पूरी तरह सफल हो जायँ, तो हमे अपना सौभाग्य समझना चाहिए। किसी भी महान प्रयत्न को प्रकाश मे आने और चारो तरफ़ फैलने से पूर्व शान्त तैयारी के अन्धकारमय ज़माने में से गुज़रना पड़ता है।

हमें यह मान लेना चाहिए कि बुनियादी शिक्षा की यह तैयारी की मंजिल है। जमीन तैयार करने और बीज डालने का प्रारम्भिक काम हो चुका है। बुनियादी शिक्षा का विचार देश के कोने कोने मे फैल गया है और बहुत से बुनियादी स्कूल और ट्रेनिंग स्कूल, सरकार की सहायता से या उसके बिना, इस विचार को अमल मे लाने की कोशिश मे लगे हुए है।

अब तो हमे विश्वास और धीरज के साथ काम करना चाहिए और इस विचार को अमली जामा पहनाने की हर मंज़िल पर बारीकी से निगाह रखनी चाहिए। हमे अपनी छोटी-से छोटी कामयाबी की याददाश्त रखनी चाहिए और उसे दूसरे कार्यकर्ताओं को बतलाना चाहिए। इसी तरह हमे ईमानदारी के साथ अपनी हर गलती को भी दूसरो को जता देना चाहिए। हमे न तो अपनी गलतियों और असफलताओं से निरुत्साह होना चाहिए और न छोटी-मोटी सफलताओं पर संतोष कर लेना चाहिए। जबतक हम बच्चे की प्रवृत्तियों को जगाने, उसके व्यक्तित्व का विकास करने और उसमे समाज सेवा तथा नागरिकता के भाव भरने के तमाम उपायों की खोज-बीन करके अपने प्रयोगों के नतीजे लिपिबद्ध न कर ले तबतक हमें चैन से न बैठना चाहिए।

कॉन्फ्रेस के सामने यही महान कार्य है। मुझे आशा है कि हम अगले तीन दिनों मे अपने तीन साल के काम के नतीजों का मूल्य आँकने की ईमानदारी से कोशिश करेंगे और उस पर अगले साल के काम की नींव डालेंगे। हमें हर साल इसी तरह करते जाना चाहिए जबतक कि हम, बुनियादी शिक्षा के शिक्षक और कार्यकर्ता की हैसियत से, समय आने पर बुनियादी शिक्षा को देश भर मे फैलाने के योग्य न बन जाये। हमे आशा है कि वह समय अब कुछ दूर नहीं है।

(आ) रिपोर्टें

उड़ीसा

(आचार्य हरिहरदास)

(१)

उड़ीसा मे बुनियादी तालीम का जो काम हो रहा है उसकी रिपोर्ट तो हमारे मंत्री आपको सुनायेंगे। इससे आपको उड़ीसा के बुनियादी स्कूलो का हाल और वहाँ की परिस्थिति मालूम हो जायगी। इसलिए मैं इन बातों के बारे मे कुछ नही कहूँगा। देहात के बच्चों पर बुनियादी स्कूलो का जो असर हुआ है उसी के बारे में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूँ।

बुनियादी तालीम शुरू करते समय उड़ीसा की सरकार ने जो बोर्ड बनाया था वह गैर-सरकारी (non-official) था। इसलिए जब सरकारी तौर पर उस बोर्ड को तोड दिया गया तो इससे हमारी कोई विशेष हानि नहीं हुई। सरकार की तरफ से जो दो-तीन आदमी बोर्ड मे थे वे छोडकर चले गये, पर बाक़ी सब सदस्य पहले ही की तरह काम कर रहे हैं।

जब बुनियादी स्कूलो के बन्द किये जाने की चर्चा चली तो बच्चो को बहुत रंज हुआ। वे कहते थे, "गुरुजी आप हमे छोड़कर न जाइये।" लेकिन जब स्कूल ही न रहे तो शिक्षक बेचारे क्या करते? उस वक्त तक हमारा नया बोर्ड न बना था। नया बोर्ड बनने के बाद हमने बन्द किये जानेवाले स्कूलों को जारी रखने की स्कीम बनायी। इस काम के लिए ५,००० रु० की ज़रूरत महसूस हुई। आपको सुनकर खुशी होगी कि डेढ़ महिने मे हमे बिना माँगे ही १,५०० रु० मिल गये।

१५ सरकारी स्कूलों के बजाय अब हम १० स्कूल चला रहे हैं जिनमे लगभग ५०० बच्चे पढ़ रहे हैं। बुनियादी तालीम के लिए लोगो मे कितना उत्साह है इसका पता इस बात से लग जाता है कि हमारे ये स्कूल गैर-सरकारी है, फिर भी इतनी तादाद मे लड़के पढ़ रहे हैं। इतना ही नही, और भी स्कूलों के लिए लोगो की माँग है। मगर हम लाचार है। लोगों की माँग के अनुसार नये स्कूल खोलकर अभी हम अपना काम और अपनी जिम्मेदारी बढाना नही चाहते। कारण यह है कि न तो हमारे पास खर्च के लिए पैसा है और न काम के लिए कार्यकर्ता।

हरिहर दास

(२)

मुझे ज्यादा कुछ नही कहना है। उड़ीसा मे बुनियादी तालीम की जो रिपोर्ट पढ़ी जानेवाली है उसकी प्रस्तावना के तौर पर मै कुछ बाते कहूँगा ।

उड़ीसा मे बुनियादी तालीम के प्रयोग को 'बुनियादी स्कूलों का काम (Basic schools at work) के बजाय 'बुनियादी स्कूलों की लड़ाई' (Basic schools at war) कहना ज्यादा उपयुक्त होगा क्योंकि शुरू से अबतक उसे कितनी ही कठिनाइयों से मुकाबला करना पड़ा है। एक तरफ लोगो के निजी स्वार्थ (Vested interests), दूसरी तरफ जनता के अन्ध-विश्वास और तीसरी तरफ नौकरशाही, इन तीनो से हमे झगडना पडा है। शुरू-शुरू मे हमे अपनी पूरी शक्ति पुराने विचारो का विरोध करने मे लगानी पडी। इससे हम सभलने भी न पाये थे कि सरकार ने बुनियादी तालीम का प्रयोग ही बन्द कर दिया। पर इन चौदह महीनो में हमे जो अनुभव हुआ उससे हमे लगा कि बुनियादी स्कूल स्थायी चीज़ बन गये है और इन्होने जनता के दिलो मे घर कर लिया है। बच्चो के माँ-बाप और घरवाले समझने लगे है कि इनमे पढकर बच्चे उपयोगी शिक्षा प्राप्त करते है। बच्चो में नागरिकता और कर्तव्य-परायणता की भावना कहाँ तक पैदा हुई है, इसका अन्दाजा लगाना तो देहाती जनता के लिए बहुत मुश्किल है। वे तो सिर्फ़ यह देखते है कि बच्चे अब हँसी-खुशी से स्कूल जाते है, घर जाकर ऊधम नही मचाते हैं, और घरवालो को काम-धन्धे मे मदद देते है। हमारी दृष्टि से महत्त्व की बात यह है कि बच्चे देहाती वातावरण की जडता से बाहर निकलते है या नही। अबतक के अनुभवो से हमे काफी आशा हो चली है। पच्छिम से लौटे शिक्षा-शास्त्रियों ने भी हमारे स्कूलो का निरीक्षण करके यह राय दी है कि बुनियादी स्कूलो की पढाई पुराने प्रायमरी स्कूलों की पढ़ाई से कहीं अच्छी है।

गोपबन्धु चौधरी

(३)

उडीसा सरकार ने १९३८ मे बुनियादी शिक्षा का एक बोर्ड (Board of Basic Education) बनाया और श्री गोपबन्धु चौधरी को इसका प्रधान नियुक्त किया। जून १९३९ में पहला बुनियादी स्कूल और एक ट्रेनिंग स्कूल खोला

गया । उड़ीसा के प्रयोग मे विशेषता यह थी वह ठेठ देहाती क्षेत्र मे शुरू किया गया और पुराने ढरे की शिक्षा से उसे बिलकुल अछूता रखा गया । बोर्ड को लगभग पूरी स्वतन्त्रता थी कि अपनी पसन्द के अनुसार काम और प्रबन्ध करे । इसलिए जो लोग भी इस काम के सम्पर्क मे आये उन पर इस स्वतन्त्र वातावरण और आत्म-निर्भरता का असर पड़े बिना न रहा ।

कॉग्रेसी मंत्रि-मन्डल के त्यागपत्र दे देने के बाद उडीसा की सरकार ने बुनियादी शिक्षा की योजना पर खूब सोच-विचार करके फरवरी १९४० में ९५ बुनियादी स्कूल (पाँच स्कूल सात दर्जे वाले और दस स्कूल चार दर्जे वाले) खोलना मंजूर किया और ट्रेनिग स्कूल को भी जारी रक्खा । शुरू की तमाम कठिनाइयों के होते हुए भी इन स्कूलो ने आठ ही महीनो मे काफी उन्नति की । इसका श्रेय शिक्षकों के उत्साह और अथक परिश्रम को है । श्रीमती रमादेवी और आश्रम के दूसरे साथी कार्यकर्ताओं के प्रभाव से और स्कूलो के काम से गाँव के लोगो को इस नयी योजना की उपयोगिता पर पूरा विश्वास हो गया । गॉव के लोगो ने बहुत-सी पुरानी और कट्टर समाजी शकाओ को छोड़ दिया और वे नये विचारो का स्वागत करने लगे । इसी अर्से में असेम्बली के कुछ सदस्यो और कुछ सरकारी अफ़सरों ने स्कूलों का निरीक्षण किया और काम के बारे मे बड़ी अच्छी राय प्रगट की ।

छै महीने की ट्रेनिग के बाद जब शिक्षकों का इम्तिहान लिया गया तो २८ में से २७ शिक्षक योग्य समझे गये । ट्रेनिग स्कूल के काम के बारे मे दो ख़ास बातों का ज़िक्र कर देना ज़रूरी है । एक तो इसमे देहाती वातावरण में देहाती साधनो से देहाती मनोवृत्ति के शिक्षक तैयार करने की कोशिश की गयी जो बुनियादी शिक्षा की दृष्टि से बहुत महत्व की बात थी । दूसरे, ट्रेनिग स्कूल के आमद-ख़र्च की जॉच करने से पता लगा कि जहॉ दूसरी जगह हर शिक्षक की ट्रेनिग पर क़रीब १५० रु. खर्च होता है, वहॉ उडीसा के इस ट्रेनिग स्कूल मे एक शिक्षक पर सिर्फ़ २० रु. खर्च हुए । इसके अलावा हर शिक्षक ने दस्तकारी से ४॥) रु. कमाये । इस तरह देखा जाय तो शिक्षको ने कुल १२१ दिन मे अपनी ट्रेनिंग के ख़र्च का २२½% भार उठा लिया ।

बुनियादी दस्तकारी से हर बच्चे की आमदनी क़रीब आठ आने हुई। इस सम्बन्ध मे ध्यान देने की बात यह है कि बुनियादी शिक्षा के पाठ्यक्रम मे काम के दिन २८८ और रोज़ाना काम का समय ३ घन्टे २० मिनट मान कर साल के अन्त मे हर बच्चे की कमाई ३ रु. ९ आ. लगायी गयी है। इसमे भी पहले १४४ दिन की कमाई १ रु. ६ पाई और बाक़ी १४४ दिन की २ रु. ८ आ. ६ पाई मानी गयी है। उडीसा के बुनियादी स्कूलो के बच्चो ने कुल १५४ दिन तक डेढ़ घन्टा रोज काम करके आठ आने कमाये है। अर्थात् पाठ्यक्रम के हिसाब मे और उनकी कमाई मे बहुत थोडा फ़र्क़ रहा।

ऊपर के नतीजो के बावजूद भी सरकार ने पिछले फरवरी महीने मे बुनियादी शिक्षा का प्रयोग बन्द कर दिया। इस सम्बन्ध मे डॉ जाकिर हुसेन और हिन्दुस्तानी तालीमी संघ की ओर से निकाले गये वक्तव्यो मे काफी रोशनी डाली गयी है। यहाँ मैं डॉ जाकिर हुसैन के शब्दो मे सिर्फ़ इतना ही कहूँगा कि उडीसा की सरकार ने इस प्रयोग के बाक़ी सब पहलुओ पर तो ध्यान दिया लेकिन इसकी तालीमी अच्छाइयों और ख़ूबियो पर ध्यान नही दिया।

सरकार के इस निर्णय का कुछ लोगों को तो पहले ही से आभास होने लगा था, लेकिन अधिकाश लोगो को, जिन्हे यह विचार न हुआ था, इससे निराशा हुई। बच्चो और गॉववालो पर तो मानो अचानक वज्रपात ही हो गया। वे बुनियादी स्कूलो के बजाय किसी दूसरी तरह के स्कूलो से सहमत ही नहीं होते। इन स्कूलो के काम के बारे मे गॉव के लोगो की आम धारणा यह थी कि नयी शिक्षा देहाती जनता की बहुत सी बुनियादी आवश्यकताओ को पूरा करने की कोशिश करती है। इसलिए जो लोग इस प्रयोग में लगे हुए थे उनका यही विचार हुआ कि इसे जारी रखा जाय। इसे अपनी मेहनत से और जनता की सहायता से चलाने का मूल विचार तो शायद आश्रम मे पैदा हुआ। बाद मे गाधी जी के सन्देश और हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के उत्साह-वर्द्धन ने कार्यकर्त्ताओं में एक साथ मिलकर प्रयत्न करने की भावना जगा दी। लोभ-लालच और सरकार की तरफ़ से नौकरी की आशायें दिलायी जाने पर भी १२ शिक्षक अपने क़ाम पर जमे रहे।

' लोगों ने सरकार से मिन्नतें की कि इस प्रश्न पर दुबारा विचार करे और अपने निर्णय को बदल दे, पर सरकारी अफ़सरों के कानों पर जूँ तक न रेंगी। नतीजा यह हुआ कि आम जनता में इसे जारी रखने के लिए और भी जोश पैदा हुआ और "उत्कल मौलिक शिक्षा परिषद्" के नाम से एक नया बोर्ड स्थापित किया गया जिसके प्रधान आचार्य हरिहर दास बनाये गये। इस परिषद् में बुनियादी स्कूलों के शिक्षक और तालीमी संघ, चर्खा संघ, ग्रामोद्योग संघ, हरिजन सेवक संघ, सर्वेन्ट्स ऑफ इन्डिया सोसायटी व सर्वेन्ट्स ऑफ पीपल्स सोसायटी के सदस्य और बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा में दिलचस्पी रखनेवाले लोग शामिल हैं।

बुनियादी स्कूलों को २० शिक्षकों की सहायता से चलाने के लिए ५००० रु. का मामूली और अस्थायी बजट बनाया गया है। परिषद ने शिक्षकों को १५ रु. मासिक वेतन देना निश्चय किया है। गाँवों के लोग चीज़ों से और सामान से मदद कर रहे हैं। मसलन्, शिक्षकों के लिए खाने की चीज़ें—नाज, दाल, वगैरा—और स्कूल के मकानों को बनाने और मरम्मत करने का सामान वे लोग दे रहे हैं।

इस समय नौ स्कूलों में कुल ४२५ बच्चे शिक्षा पा रहे हैं। कुछ स्कूलों में तो बच्चों की संख्या एक दम ३५ से ७० तक जा पहुँची है। दूसरे इलाकों में नये बुनियादी स्कूल खोलने की माँगें बराबर आ रही हैं। हालाँकि धन के लिए अभी कोई अपील नहीं निकाली गयी है, फिर भी मित्रों से कुछ रुपया मिल रहा है। कुछ और शिक्षक भी आ गये हैं जिससे हमारा उत्साह और भी बढ़ा है।

इस समय परिषद के सामने ख़ास कठिनाइयाँ ये हैं:—

(१) बदली हुई परिस्थिति में सारे काम का दुबारा संगठन करना।

(२) काम के उत्पादक पहलू पर काफ़ी ज़ोर देना।

(३) अगर स्कूलों के मौजूदा मकान न मिल सकें तो दूसरे मकानों का प्रबन्ध करना।

(४) आगे के लिए शिक्षकों की ट्रेनिंग का प्रबन्ध करना।

(५) देहातों में होनेवाले दूसरे रचनात्मक कामों और बुनियादी शिक्षा के बीच परस्पर सहकारिता स्थापित करना।

हम आशा करते हैं कि हमारी कोशिशें सफल होंगी और हम इस कठिन काम को पूरा कर सकेंगे।

शरत्चन्द्र महाराणा

बिहार

बिहार में बुनियादी शिक्षा का प्रयोग जून १९३८ में शुरू हुआ। प्रयोग शुरू करने से पहले रायसाहब रामशरण उपाध्याय और बाबू शिवकुमार लाल को शिक्षा-विभाग की ओरसे पन्द्रह दिन की ट्रेनिंग के लिए वर्धा भेजा गया ताकि वे बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग का प्रबन्ध कर सकें। ७ सितम्बर १९३८ को पटना ट्रेनिंग स्कूल में ६० शिक्षकों को भर्ती किया गया और उन्हें पहले और दूसरे बुनियादी दर्जों को पढाने की योग्यता देने के लिए छ महीने की ट्रेनिंग का एक जरूरी कोर्स पूरा कराया गया। दिसम्बर १९३८ में बिहार सरकार ने शिक्षा-मंत्री की अध्यक्षता में एक बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड नियुक्त किया जिसके मंत्री रायसाहब राम शरण उपाध्याय नियुक्त किये गये। बिहार के शिक्षा-विभाग के डायरेक्टर इस बोर्ड के पदेन (ex-officio) सदस्य है और श्री आर्यनायकम, श्री बद्रीनाथ वर्मा, नज़ीर अहमद साहब, मुहम्मदसद्दीक साहब, श्री लक्ष्मी नारायण और श्रीमती आशादेवी इसके सदस्य है। दिसम्बर १९३८ से गवर्नर साहब के ऐड्वाइज़र इस बोर्ड के प्रधान है। बोर्ड का काम यह था कि वह चम्पारन जिले के बेतिया थाने के सघन इलके में हिन्दुस्तानी तालीमी संघ की बनायी हुई बुनियादी शिक्षा की योजना प्रयोग के तौर पर जारी करने का इन्तज़ाम करे। फरवरी १९३८ मे सरकार ने इसी बेतिया थाने मे, वृन्दावन के आस-पास के सघन इलके में, पन्द्रह बुनियादी स्कूल खोलने की योजना मजूर की। इस योजना का इरादा यह था कि १९३८ में पहले दर्जे से शुरू होकर इन स्कूलों में हर साल एक-एक ऊंचा दर्जा बढाया जाय ताकि ये पूरे बुनियादी स्कूल बन जायें और १९४६ मे पूरे सात साल की बुनियादी शिक्षा पाये हुए विद्यार्थियो की पहली टोली निकालें। प्रयोग की सफलता के लिए सरकार ने चम्पारन डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के चेयरमैन की सहमति से यह योजना भी मजूर की कि सघन इलके के कुछ प्राइमरी स्कूलों और एक मिडिल स्कूल को धीरे-धीरे बुनियादी स्कूल बना दिया जाय और इनके योग्य शिक्षकों को बुनियादी ट्रेनिग के बाद बुनियादी स्कूलों में लगा दिया जाय। अप्रैल १९३९ से इस सघन इलके के स्वीकृत स्कूलों मे से ३५ स्कूलों

में पहला बुनियादी दर्जा शुरू कर दिया गया। अभ्यास और व्यावहारिक प्रयोग के लिए पटना ट्रेनिंग स्कूल से लगे हुए प्रैक्टिसिंग स्कूल में जनवरी १९३८ से ही पहले दो दर्जों में बुनियादी योजना के अनुसार काम शुरू कर दिया गया था। बुनियादी शिक्षा का प्रचार और संगठन करने के लिए बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड ने मई १९३९ में शिक्षकों का एक ट्रेनिंग कैम्प वृन्दावन में चलाया और बुनियादी शिक्षा का काम करनेवालों या इसमें दिलचस्पी रखने वालों के लाभ के लिए बुनियादी शिक्षा की कई नुमायशों, ट्रेनिंग कोर्सों और व्याख्यानों का बन्दोबस्त किया। १९४०-४१ में बुनियादी शिक्षा के प्रयोग के कार्यक्रम को जोरदार और ठोस बनाने का काम किया गया।

गये साल (१९४०–४१) भी यह प्रयोग बिहार के बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड के आधीन रहा। बोर्ड के सदस्य भी वही रहे जो पिछले साल थे, सिर्फ़ मिस्टर जे. एस. आर्मर की जगह अब शिक्षा विभाग के नये डायरेक्टर ए. एस. ख़ां साहब बोर्ड के पदेन सदस्य हो गये हैं।

ख़र्च

बुनियादी शिक्षा के प्रयोग का पूरा खर्च बिहार की सरकार उठा रही है। गये साल का कुल खर्च १,११,३५४ रु. हुआ जिसकी विगत नीचे दी जाती है –

(१) बेसिक एज्युकेशन बोर्ड के कर्मचारियों का वेतन, जरूरी खर्च और सफर ख़र्च	३ ११३ रु०
(२) पटना का बेसिक ट्रेनिंग स्कूल	४२,५७८ रु०
(३) सघन हलके के बुनियादी स्कूल	६२,५२० रु०
(अ) एक मुश्त ख़र्च—कच्चे मकान और सामान	३७,७३३ रु०
(आ) चालू खर्च—कर्मचारियों का वेतन, जरूरी ख़र्च, कपास, बीज, मकानों का किराया और मरम्मत वग़ैरा	२४,७०७ रु०
(४) बुनियादी स्कूलों का संगठन और निरीक्षण—कर्मचारियों का वेतन, जरूरी खर्च और सफर खर्च	६,११३ रु०
कुल	१,११,३५४ रु०

इस खर्च में पटना के बेसिक ट्रेनिंग स्कूल से लगे हुए प्रैक्टिसिंग स्कूल का ख़र्चा ६,५५८ रु० शामिल नहीं है। यह स्कूल मिडिल तक का अंग्रेज़ी स्कूल है

और इसे पहले दर्जे से बुनियादी स्कूल बनाया जा रहा है। जब तक यह पूरा बुनियादी स्कूल न बन जाय तब तक इसे सेकन्डरी स्कूलों की श्रेणी में ही माना जायगा।

पटना का बेसिक ट्रेनिंग स्कूल

पटना का ट्रेनिंग स्कूल सन् १८६३ में खोला गया था। बिहार प्रांत में शिक्षकों की ट्रेनिंग की यह सबसे पुरानी संस्था है और इसके पीछे ७८ साल की सेवाओं का गौरवपूर्ण इतिहास है। १९३८ में इसे बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग देने के लिये चुना गया और १९४० में इसे पूरा बेसिक ट्रेनिंग स्कूल बना दिया गया।

१९४०-४१ में इस स्कूल ने शिक्षकों की ट्रेनिंग के लिये पाँच तरह के कोर्स चलाये:—

(१) जुलाई १९३९ में जो दूसरा ज़रूरी कोर्स शुरू किया गया था वह १९४० में भी गर्मियों की छुट्टियों तक जारी रहा। ट्रेनिंग पानेवाले शिक्षकों में से अच्छे-अच्छे २३ शिक्षकों को छाँटकर सघन हलके में काम करने के लिये भेज दिया गया।

(२) बाकी के २४ कच्चे-शिक्षकों की ट्रेनिंग दिसम्बर १९४० तक जारी रक्खी गयी ताकि बुनियादी स्कूलों में तीसरा दर्जा खुलने पर इन्हें जनवरी १९४१ से सघन हलके में भेज दिया जाय।

(३) जिन २७ शिक्षकों ने पहले ज़रूरी कोर्स में ट्रेनिंग पायी थी उन्हें जुलाई १९४० से एक साल की आगे की ट्रेनिंग दी जा रही है ताकि वे पाँचवे दर्जे तक को पढ़ाने की योग्यता प्राप्त कर लें।

(४) पुराने स्कूलों को बुनियादी स्कूल बनाने की वजह से जो शिक्षक बेकार हो गये हैं उनमें से छः चुने हुए शिक्षकों को बुनियादी शिक्षा की पद्धति की ख़ास ट्रेनिंग देने का इंतज़ाम किया गया है।

(५) तीसरे प्रारम्भिक कोर्स के लिये जनवरी १९४१ में ३० विद्यार्थियों की एक नयी टोली भर्ती की गयी है। यह कोर्स १९४१ तक चलेगा। जनवरी १९४२ में बुनियादी स्कूलों में जो चौथा दर्जा शुरू होगा, उसके लिये इन्हें ट्रेनिंग दी जा रही है।

३१ मार्च १९४१ को पटना के बेसिक ट्रेनिंग स्कूल में ट्रेनिंग पानेवाले शिक्षकों की कुल सख्या ६३ थी जिनमें १२ मुसलमान, १ हरिजन और ५० सवर्ण हिंदू थे। इन ६३ शिक्षकों मे ५ तो इंटरमीजियेट पास है, ३७ मैट्रिक पास हैं और बाकी २१ मैट्रिक तक की योग्यता वाले है। मैट्रिक तक की योग्यता वालों में से एक तो आलिम है, दो हिन्दी विशारद हैं और तीन ई. टी. हैं। वज़ीफे सबको दिये जाते है। प्रारम्भिक कोर्स मे ट्रेनिंग पानेवाले बुनियादी स्कूलों के शिक्षको को उनके वेतन के बराबर वजीफा दिया जाता हैं।

ट्रेनिंग स्कूल मे गये साल तीन बुनियादी दस्तकारियो की शिक्षा दी गयी (१) कताई और बुनाई, (२) खेती और बाग़वानी और (३) गत्ते का काम। हर दस्तकारी मे कच्चे शिक्षको की प्रगति का विवरण आगे दिया जाता है।

कताई और धुनाई—साल भर में कुल ३ मन ३६ सेर सूत तैयार हुआ (इसमे ३५ सेर सूत प्रैक्टिसिग स्कूल के बच्चों का भी शामिल है)। इस सूत से ३४२ रु. ८ आ. ६ पा. कपड़ा तैयार हुआ। इस वक्त स्टॉक मे १ मन १६ सेर सूत है जिसकी कीमत ८० रु. उठेगी। ख़ास बात यह है कि कच्चे-शिक्षको ने कताई के लिए खुद हाथ से रुई धुनकर पूनियाँ बनायीं। तीसरे और चौथे दर्जे के बच्चे भी पूनियाँ बनाने लगे है।

बाग़वानी और खेती—स्कूल मे साग-भाजी की दो फ़सले बोयी गयी जिनसे २८ रु. २ आ ९ पा. की आमदनी हुई। कच्चे-शिक्षकों ने हितहापुर के फ़ार्म मे बड़े उत्साह से काम किया, जिसकी मज़दूरी लगायी जाय तो क़रीब ८० रु. होती है।

गत्ते का काम—वर्धा मे ट्रेनिग पाये हुए एक ग्रेजुएट की मदद से ट्रेनिग स्कूल और प्रैक्टिसिंग स्कूल दोनो मे गत्ते का काम सिखाया जा रहा है। कच्चे-शिक्षको ने ऐल्बम, फाइले, ब्लाटिग पैड, पेंसिल रखने की तश्तरियाँ, वगैरा कितनी ही चीजे बनायी है। वे अपनी कापियो और स्कूल के रजिस्टरो पर जिल्दें भी चढ़ा लेते हैं। इस काम से १३ रु. १५ आ. की आमदनी हुई है।

बुनाई—अन्तिम कोर्स में ट्रेनिग पानेवाले शिक्षकों की एक टोली बुनाई का काम सीखती हैं। बुनाई का काम शुरू करने की मंजूरी फरवरी में मिली, इस लिए इस साल के अन्त तक यह काम शुरु नही हो सका था। अभी तक १०

करघे लगाये गये हैं जिनमें एक पुरानी चाल का देशी करघा भी है। बुनाई का दूसरा सामान भी मगवा लिया गया है और अब इस काम की शुरुआत हो गयी है।

ट्रेनिग स्कूल के तमाम कच्चे-शिक्षक स्कूल की होस्टल मे रहते हैं। हेडमास्टर सुपरिन्टेन्डेन्ट और असिस्टेन्ट सुपरिन्टेन्डेन्ट के अलावा ट्रेनिग स्कूल के और भी कई अध्यापक स्कूल के अहाते मे ही रहते है। होस्टल का सामूहिक जीवन ऐसा रक्खा गया है कि उसमे कच्चे-शिक्षको को नागरिकता की शिक्षा के काफ़ी मौके मिलते रहे। व्याख्यानो, सभाओ और पुस्तकालय मे निरीक्षित अध्ययन के द्वारा कच्चे-शिक्षकों की योग्यता बढ़ाने की ओर भी ध्यान दिया जाता है। कच्चे-शिक्षको को ऐम्बुलेस (रोगियो की परिचर्या और प्राथमिक चिकित्सा) की ट्रेनिग भी दी जाती है।

इंस्पेक्टरों के बोर्ड की सिफारिश को मानकर बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड और सरकार ने यह व्यवस्था कर दी है कि ट्रेनिग स्कूल और सघन हलके के व्यावहारिक क्षेत्र के बीच एक गहरा और सजीव सम्पर्क बना रहे। ट्रेनिग स्कूल के अध्यापक और विशेषज्ञ सघन हलके मे जाकर एक ओर तो बुनियादी योजना के दैनिक काम की वास्तविक समस्याओं का अध्ययन करते है, ओर दूसरी ओर बुनियादी स्कूलों के शिक्षको को नयी-नयी बाते बतलाकर उनमे अपने काम के प्रति उत्साह और विश्वास पैदा करते है।

बुनियादी शिक्षा का साहित्य

बुनियादी शिक्षा देनेवाले शिक्षकों और पानेवाले बच्चों, दोनो के लिए एक नये साहित्य के निर्माण की आवश्यकता है। इस कमी को पूरा करने के लिए बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड ने एक बेसिक लिटरेचर कमेटी (बुनियादी साहित्य समिति) बना दी है। इस कमेटी की देख-रेख मे इस साल बुनियादी स्कूलों के बच्चो के लिए किताबे तैयार करने का काम हाथ मे ले लिया गया है। यह काम ख़ास तौर पर एक अध्यापक के सुपुर्द कर दिया गया है और यह बडे सतोष की बात है कि छोटे दर्जों के बच्चो की पुस्तको का मसाला और उनकी भाषा, दोनो का आदर्श लग-भग निश्चित कर लिया गया है। बोर्ड ने तीसरे दर्जे के लिए एक किताब का मसविदा पसद भी कर लिया है और इस किताब को सचित्र रूप में प्रकाशित करने का ज़िम्मा हिन्दुस्तानी तालीमी संघ ने ले लिया है। दूसरे दर्जे के लिए भी एक

किताबें तैयार हो चुकी है और लिटरेचर कमेटी के सामने विचार के लिए रक्खी जानेवाली हे। किताबों के लिए मसाला इकट्ठा करने में इन चीज़ों से मदद ली जाती है: (१) बुनियादी दर्जों के लिए तैयार किये हुए पढ़ाई के मसाले के चुने हुए नमूने, (२) स्कूल में होने वाले कामों और उनके नतीजों, अध्ययनों, सेवाओं, घटनाओं, इत्यादि की लिखतें, और (३), देहाती जीवन, आबादी, पेशे, रस्म-रिवाज़, मेले और त्यौहार इत्यादि के बारे में सूचनाएं और आँकड़े।

बुनियादी स्कूल

वृन्दावन के आस-पास के सघन हलके में बुनियादी स्कूलों की कुल संख्या २७ है। दिसम्बर १९४० तक इनमें से २४ स्कूलों में पहला और दूसरा दो बुनियादी दर्जे थे और ३ स्कूलों में सिर्फ पहला दर्जा। दूसरे दर्जे में वे बच्चे थे जो अप्रेल-मई १९३९ में भर्ती हुए थे। इनमें से जिन बच्चों ने आवश्यक योग्यता प्राप्त कर ली है वे अप्रेल १९४१ में तीसरे दर्जे में चढ़ा दिये जायंगे। जो बच्चे जनवरी १९४० में पहले दर्जे में दाखिल हुए थे वे जनवरी १९४१ में दूसरे दर्जे में चढ़ा दिये गये।

शिक्षक—बुनियादी स्कूलों के लिए शिक्षकों की कुल स्वीकृत संख्या ८९ है। लेकिन १९४०-४१ में यह संख्या ८२ ही रही। यह कमी इसलिए रही कि कुछ शिक्षक अयोग्यता की वजह से या दूसरे कारणों से छोड़कर चले गये। अभी काम चलाने के लिए एक-एक शिक्षक दो-दो दर्जों को साथ पढ़ाता है। इस प्रयोग के नतीजों को हम दिलचस्पी के साथ देख रहे हैं। लेकिन अच्छी बात तो यही है कि एक शिक्षक को एक ही दर्जा दिया जाय। इसी कमी को पूरा करने के लिए सरकार और बोर्ड के सामने यह सुझाव रक्खा जाने वाला है कि ट्रेनिंग स्कूल में कुछ बाहर के शिक्षक भी भर्ती कर लिए जायँ और उन्हें वज़ीफ़ा न दिया जाय। बुनियादी स्कूलों के तमाम शिक्षक बुनियादी ट्रेनिंग पाये हुए हैं। इनमें से ६२ शिक्षक मैट्रिक पास हैं, ७ मिडिल पास हैं, १२ मैट्रिक तक पढ़े हुए हैं और एक इलाहाबाद के हिन्दी साहित्य सम्मेलन का विशारद है। मुसलमान शिक्षकों की संख्या १९ है।

विद्यार्थियों की संख्या और हाज़िरी—३१ मार्च १९४१ को २७ बुनियादी स्कूलों में विद्यार्थियों की कुल संख्या २०४४ थी। इसके पहले साल

यही संख्या १५२५ थी । इन २०४४ विद्यार्थियों को इस प्रकार बॉटा जा सकता है, १८५९ लडके और १८५ लडकियाँ, १५६६ सवर्ण हिन्दू (१४०७ लड़के और १५९ लड़कियाँ) १६० अन्य हिन्दू (१५४ लडके और ६ लडकियाँ) ३१८ मुसलमान (२९८ लड़के और २० लड़कियाँ) पिछले साल के मुकाबले में इस साल हिन्दू विद्यार्थियों की सख्या बढकर ११६२ से १५६६ हो गयी और मुसलमान विद्यार्थियों की २०७ से ३१८, लेकिन अन्य हिन्दू विद्यार्थियें की सख्या १६० से घट कर १३६ रह गयी । विद्यार्थियों की सख्या का औसत प्रति स्कूल ७६ रहा और प्रति शिक्षक २७ । २०४४ विद्यार्थियों में से ५४२ पहले दर्जे मे है, ५६६ दूसरे दर्जे मे और ९३७ तीसरे में ।

पहले दर्जे मे विद्यार्थियो की औसत हाजिरी कुल सख्या की आधी रही लेकिन दूसरे दर्जे मे यह औसत करीब कुल सख्या का तीन चौथाई से कुछ कम रहा इससे मालूम होता है कि पहले दर्जे मे जो बच्चे स्कूल न आते थे वे दूसरे दर्जे मे खुशी से आने लगे । लेकिन कोशिश यह है कि औसत हाज़िरी कुल सख्या की कम से कम ७५% रहे और हलके के तमाम स्कूली उम्र के बच्चे स्कूल आने लगे । कोशिश तो यही की जायगी कि बच्चे अपने आप ही स्कूल आने लगें, लेकिन अगर ऐसा न हुआ तो हाज़िरी ठीक रखने के लिए किसी न किसी रूप मे ज़ोर तो डालना ही पड़ेगा ।

बुनियादी स्कूलों की इमारतें—बुनियादी शिक्षा के प्रयोग के साथ-साथ हमारा बोर्ड बुनियादी स्कूलों की इमारतों के बारे में भी प्रयोग कर रहा है । चूंकि बुनियादी शिक्षा की योजना का उद्देश सारे देश मे सबके लिए मुफ्त शिक्षा की व्यवस्था करना है, इसलिए अगर बुनियादी स्कूलों के लिए सरकारी इमारतो जैसे पक्के और मॅहगे मकान बनवाये जायॅ, तो प्रातीय सरकारे बुनियादी शिक्षा का खर्च ही न उठा सकेगी । इसलिए बुनियादी स्कूलों के मकान बनाने के लिए ऐसा मसाला लेना पडेगा जो देहात मे ही आसानी से मिल सके । लेकिन साथ ही यह भी देखना होगा कि ये मकान काफी लम्बे-चोड़े हों, उनमे खूब हवा और रोशनी आती हो और उनकी सफाई भी आसानी से हो सकती हो । सबसे सस्ते मकान का नमूना बॉस की टट्टियो का बनाया गया । इसकी दीवारो पर लम्बी घास लपेट दी जाती है और छत पर फूस का छप्पर होता है । इस तरह का मकान

जिसमें ६०० वर्ग फुट का एक पढ़ाई का कमरा, २०० वर्ग फुट का भंडार का कमरा, शिक्षक के लिए एक कोठरी और एक रसोई मिलाकर कुल २५० रु. में तैयार हो गया। लेकिन ऐसा मकान स्कूल के लिए उपयोगी नहीं जान पड़ा। गर्मी और हवा के दिनो मे तो हमेशा यह डर लगा रहता है कि कहीं फूस के छप्पर मे आग न लग जाय। यह भी अनुभव हुआ कि फर्श को नमी और ठंड से बचाने के लिए मकान की चौकी काफी ऊँची होनी चाहिए। इनकी मरम्मत का सालाना खर्च करीब ८५ रु. तक पड़ जाता है और करीब-करीब हर चौथे साल बाँस की टट्टियाँ, घास और छप्पर बदलने पड़ते है। इसलिए इस तरह के मकान उपयोगी नहीं माने जा सकते।

पिछले दिनो बोर्ड के इंजीनियर-मैम्बर प्रो. सद्दीक की देखरेख मे दूसरे और तीसरे दर्जो के लिये अनुकूल मकानो के सिलसिले मे प्रयोग किये गये है। दूसरे दर्जे के लिए जो कमरे बनाये गये है उनकी दीवारें बाँस की टट्टियों की है जिन पर मिट्टी का पलस्तर चढ़ाया गया है। इनको छाने के लिए लकड़ी की थूनियो पर खपरैल की छत डाली गयी है। कमरे की चौकी ज़मीन से २ फुट ऊँची रक्खी गयी है। इस तरह का एक कमरा बनाने मे शिक्षक के मकान सहित ५०० रु० खर्च होता है। लकड़ी की थूनियों के बजाय अब ईंटो के खम्भे लगा दिये गये हैं और बीच-बीच की थूनियों के बजाय धरन लगायी गई है, क्योंकि कमरे के बीच की थूनियाँ आड़ पैदा करती थीं। इस तरह के मकान की लागत ४६७ रु० कूती गई थी लेकिन ठेकदारो के हिसाब से ६०१ रु. लगता था। इसलिए हमने ठेके-दारो के मार्फ़त मकान न बनवा कर स्थानीय मज़दूरी और सामान से अपने ही विभाग के मार्फत मकान बनवाये जिससे एक मकान मे ५०९ रु. की लागत लगी। अभी ऐसा मालूम होता है कि तीन साल के प्रयोग के बाद हमने स्कूल की इमारत का जो नमूना बनाया है उसमे कुछ सुधार करके बुनियादी स्कूलों के लिए एक निश्चित नमूना बनाया जा सकता है। शिक्षको के रहने के मकानो मे अभी कोई सुधार नहीं किया गया है।

स्कूलों के लिए सामान—किताबे, नक़शे, चार्ट और पढ़ाई के दूसरे सामान के अलावा स्कूलो को चौकियाँ, डेस्कें, बच्चो के बैठने की स्टूलें, काले तख्ते, चर्खे, तकलियाँ, धुनकियाँ, परेते, इत्यादि भी दिये जाते हैं। बुनियादी

स्कूलों का उद्देश्य यह होना चाहिए कि वे अपने जरूरी सामान के बारे में स्वावलम्बी बन जायें। लेकिन यह तभी सम्भव हो सकता है जब कि बुनियादी स्कूल में पूरे सात दर्जे हों और उसमें (१) कताई और बुनाई, (२) खेती-बाड़ी और इसकी सहायक दस्तकारियाँ टोकरी बनाना रस्सी बनाना इत्यादि, (३) गत्ते, लकड़ी और धातु के काम, (४) चमड़े का काम और (५) मिट्टी के बरतन बनाना, ये सब दस्तकारियाँ चल रही हों। इस दिशा में कुछ काम शुरू करने के इरादे से गये साल स्थानीय कारीगरों और मिस्त्रियों की सहायता से स्कूल में ही कुछ लकड़ी का सामान तैयार कराया गया। इससे बचत तो हुई ही है लेकिन इसके सिवा बच्चों को दस्तकारियों की प्रक्रियाएँ देखने का और शिक्षकों को उनके अनुबन्ध से शिक्षा देने का मौक़ा भी मिला है।

जिनिंग फैक्टरियों से आने वाली गाँठों की कपास हाथ-कताई के लिये ठीक नहीं साबित हुई, इसलिये अब स्कूलों के अहातों में ही कपास पैदा करने का इन्तजाम किया जा रहा है। यह प्रयोग अगली जुलाई से शुरू हो जायगा। इस अर्से में कपास के लिये स्थानीय बन्दोबस्त कर लिया जायगा। ताँत का इन्तज़ाम तो हो भी गया है। धुनने के लिये बच्चे घास की सादड़िऐं अपने-आप बना लेते हैं।

बुनियादी पाठ्यक्रम पर अमल

गये साल अनुबन्ध करने की पद्धति का विकास करने में और भी प्रगति हुई। इससे पहले साल की रिपोर्ट में कहा गया था कि पाठ्यक्रम में नियत किये हुए ३ घंटे २० मिनिट के बजाय दस्तकारी के लिये सिर्फ़ २ घंटे रोज़ दिये गये। १९४० में दस्तकारी के काम और अनुबन्ध के काम के व्यावहारिक प्रयोग पर गौर करके मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि दस्तकारी के काम का सिर्फ़ एक साल का अनुभव रखनेवाले शिक्षकों के लिये यह सम्भव नहीं है कि वे पाठ्यक्रम में नियत किये हुए समय से कम में दस्तकारियों की शिक्षा सम्बन्धी सम्भावनाओं को प्रकाशित कर सकें और उनके अनुबन्ध से बच्चों के ज्ञान की वृद्धि कर सकें। बल्कि अनुभव तो यह हुआ कि अनुबन्ध का काम अगर सचाई के साथ किया जाय तो उसे दस्तकारी से भी ज़्यादा समय देना पड़ता है। इसके अलावा यह भी देखा गया कि दस्तकारी का काम लगातार उतनी ही देर (१० मिनिट से लगाकर ३० मिनिट तक) सफलता के साथ कराया जा सकता है जितनी देर बच्चे उसमें दिल-

चस्पी लेते रहे और उसे पूरी लगन के साथ करते रहे। बुनियादी शिक्षा मे चूँकि दस्तकारी ही शिक्षा का माध्यम है, इसलिए काम करने की शास्त्रीय कला और काम की अच्छाई को केवल मात्र उसके परिणाम और बचत के पहलुओं से ज्यादा महत्व दिया जाता है। इसलिए मैंने बुनियादी स्कूलो के शिक्षको को यह हिदायत भिजवा दी कि दस्तकारी के काम और अनुबन्ध के बीच समय का बँटवारा करने मे इस सिद्धान्त को ध्यान मे रक्खे। मै जानता था कि शुरू मे इसका नतीजा यह होगा कि दस्तकारी को जो पहले ही कम समय दिया जाता है उसमे और भी कमी हो जायगी। लेकिन मुझे विश्वास था कि अगर मेरी हिदायत के फलस्वरूप शिक्षको मे जॉच और खोज की भावना पैदा हो जाय और ऐसी ही भावना वे बच्चो मे पैदा कर सकें, तो दस्तकारियो में उनकी दिलचस्पी उत्तरोत्तर बढती जायगी और फिर काम की गति और उत्पादन दोनों अपने आप बढ़ते चले जायगे। इसलिये गये साल दस्तकारी के समय मे कोई बढ़ोतरी नही की गई। नतीजो को देखने से पता लगता है कि जो कार्रवाई की गयी वह ठीक थी। उम्मीद है कि जैसे-जैसे शिक्षकों को दस्तकारी की कला और अनुबन्ध शिक्षा मे कुशलता प्राप्त होती जायगी वैसे वैसे दस्तकारी का रोजाना समय बढता जायगा।

काम के नतीजों के कुछ आकडे आगे दिये जाते हैं—

वृन्दावन के स्कूल के पहले दर्जे मे कताई की ज़्यादा से ज़्यादा गति	एक घटे मे १० नंबर के ९० तार
दूसरे दर्जे की ज़्यादा से ज़्यादा गति	,, ,, १२ ,, १२० ,,
पहले दर्जे की औसत गति	,, ,, १० ,, ४५ ,,
दूसरे दर्जे की औसत गति	,, ,, १४ ,, ५६ ,,

हमने अपने स्कूलो मे बिहार चर्खे का प्रचार किया है क्योंकि यह स्थानीय भी है और सस्ता भी। दूसरे ग्रेड के बच्चे इसी चर्खे पर कताई करते है। इस पर ज्यादा से ज्यादा गति एक घटे में १२ नबर के १५० तार और औसत गति एक घटे मे १५ नंबर के ७५ तार आयी है। बिहार चर्खे पर कताई की गति और सूत का नबर यरवदा चर्खे से कम रहते हैं।

बच्चो के सूत से बुने हुए कपड़े की बिक्री से २,११२ रु० ३ आ० प्राप्त हुए। इसमे स्कूलों के बागों में पैदा होनेवाली साग भाजी की बिक्री भी शामिल है। बच्चो का तैयार किया हुआ माल जो स्टाक मे मौजूद है उसकी क़ीमत

२६८ रु० ३ आ० ९ पाई कूती गई है। इसलिये बच्चों के काम से गये साल कुल आमदनी २,३८० रु० १३ आने ९ पाई हुई। इसमें से अगर कच्चे माल और बुनाई, रंगाई वग़ैरा की क़ीमत निकाल दी जाय तो बच्चों की कमाई १,२८६ रु० १३ आने ९ पाई होती है।

बोर्ड के कुछ महत्वपूर्ण निर्णय

गये साल बिहार के बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड ने दो महत्वपूर्ण बातों के बारे में अपनी स्पष्ट नीति निश्चित की है। एक तो योजना को फैलाना, और दूसरे बुनियादी स्कूलों में धार्मिक शिक्षा।

योजना को फैलाने के बारे में बोर्ड ने यह निश्चय किया है कि जब तक चालू प्रयोगों के फलस्वरूप बुनियादी शिक्षा की कोई पद्धति न बन जाय और जब तक शिक्षकों और निरीक्षकों की संख्या न बढ़ाई जाय, तबतक बोर्ड सघन हलके के बाहर बुनियादी स्कूल खोलने में असमर्थ है और न उन बुनियादी स्कूलों से अपना सम्बन्ध रख सकता है जो निजी संस्थाओं द्वारा इस हलके से बाहर खोले जायँ।

धार्मिक शिक्षा के बारे में बोर्ड ने यह निश्चय किया है कि अगर कोई जाति चाहे तो स्कूल के पाठ्यक्रम में धार्मिक शिक्षा के लिए गुंजायश हो सकती है, लेकिन शर्त यह है कि इस तरह की धार्मिक शिक्षा देने योग्य शिक्षक या तो स्कूल में हो या उस धार्मिक शिक्षा की मांग करनेवाली जाति उसका इन्तजाम करे।

बुनियादी स्कूलों के लिए पुस्तकें और साहित्य

शिक्षकों की अनुबन्धित दस्तकारी के काम की लिखतों के आधार पर दूसरे और तीसरे दर्जे के लिए किताबों के मसविदे तैयार किये जा रहे हैं। इस सम्बन्ध में पहले पटना ट्रेनिंग स्कूल के विवरण में कहा जा चुका है।

बिहार में बुनियादी शिक्षा के प्रयोग के विषय में जो कुछ बतलाया गया है उससे पता लगेगा कि हमारे प्रयोग का क्षेत्र काफ़ी बड़ा है। सबसे बड़ी बात यह है कि लड़ाई से उत्पन्न होनेवाले संकट और खिंचाव के समय में भी यह प्रयोग पहले ही की तरह चल रहा है। इसका श्रेय हमारे प्रान्त के गवर्नर साहब के ऐड्वाइज़र मिस्टर ई० आर० जे० आर० कज़िन्स को है जो अपनी योग्यता और अनुभव से हमारी रहनुमाई कर रहे हैं।

बम्बई

बम्बई प्रान्त मे बुनियादी शिक्षा का प्रयोग नवम्बर १९३८ में शुरू हुआ। पहले साल के काम का कुछ हाल पूना के बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा-सम्मेलन की रिपोर्ट 'एक क़दम आगे' में छप चुका है। सन् १९३९ के अन्त मे सरकार की नियुक्त की हुई बेसिक ऐज्युकेशन ऐड्वाइज़री कमेटी ने इस प्रयोग के विस्तार की तैयारी करने की एक योजना प्रधान-मन्त्री के सामने रक्खी। प्रधान-मन्त्री ने इस योजना के बारे में कमेटी के मेम्बरों और शिक्षा-विभाग के अफसरों से बातचीत की लेकिन कुछ ही दिन बाद कांग्रेसी मंत्रिमंडल ने त्यागपत्र दे दिया और नयी सरकार ने रुपये की कमी के कारण प्रयोग को उसी रूप मे रखना उचित समझा।

सघन हलके के स्कूल

इस तरह १९४०-४१ मे सूरत, धारवाड़, सतारा और पूर्व-खानदेश के सघन हलकों के स्कूल बदस्तूर चलते रहे फ़र्क़ सिर्फ़ इतना हुवा कि इनमे तीसरा दर्जा भी शुरू हो गया। गये साल इन सघन हलकों में कुल स्कूलों की संख्या ५८ (९ उर्दू के और ४९ दूसरी भाषाओं के) रही। इनमें से ९ स्कूल लड़कियों के थे और ४९ लड़कों के। बुनियादी स्कूलों मे शिक्षा पानेवाले बच्चों की कुल संख्या २८५० थी। ये तमाम स्कूल डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के हैं। पर इनका अतिरिक्त ख़र्च सरकार उठाती है।

छुट-पुट बुनियादी स्कूल

सघन हलकों के स्कूलों के अलावा दूसरे जिलों के २३ स्कूलों मे बुनियादी शिक्षा का प्रयोग चल रहा था। लेकिन इनकी निगरानी का कोई उचित प्रबन्ध न हो सका और ये अच्छी प्रगति नही कर सके। इसलिए बेसिक एज्युकेशन ऐड्वाइज़री कमेटी की सिफ़ारिश पर सरकार ने इनमें बुनियादी शिक्षा का प्रयोग बन्द कर दिया। सिर्फ़ पूना मे तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ के तीन स्कूलों को और खेड़ा जिले के थामणा गाव मे श्री नरहरि भाई परीख की देखरेख मे चलनेवाले एक स्कूल का प्रयोग जारी रखने की अनुमति दी गयी है।

ट्रेनिंग स्कूल

पिछले साल खोले गये चार ट्रेनिंग स्कूलों मे से कतारगाम, लोणी और धारवाड़ के तीन ट्रेनिंग स्कूल गये साल भी चालू रहे। जलगाव का चौथा स्कूल

वहाँ के कुछ मुसलमानों के विरोध के कारण बन्द कर दिया गया। इन ट्रेनिंग स्कूलों मे ज्यादातर मैट्रिक पास उम्मीदवार ही लिये जाते है, पर कुछ ऐसे शिक्षकों को भी लिया जाता है जो एक साल की साधारण ट्रेनिग पा चुके हों। इन शिक्षकों को दूसरे साल की ट्रेनिग के सर्टिफिकेट दे दिये गये। इस तरह गये साल १०३ शिक्षकों को बुनियादी ट्रेनिग दी गयी।

निगरानी

निगरानी की व्यवस्था पहले साल ही की तरह रही। निरीक्षक लोग स्कूलों मे जाते रहे और शिक्षको को सलाह देते रहे। नमूने के पाठो, देहात-सुधार का काम और देहातियो के मनोरजन की योजना भी बदस्तूर रही। ट्रेनिग केन्द्रो के हेडमास्टर और बेसिक ऐज्युकेशन ऐड्वाइज़री कमेटी के सदस्य भी सघन हलको के स्कूलो मे समय-समय पर जाते रहे है।

पाठ्यक्रम और पढ़ाई की प्रगति

स्कूलो मे जाकिर हुसैन कमेटी का पाठ्यक्रम बेसिक ऐज्युकेशन ऐड्वाइजरी कमेटी के सुझाये हुए कुछ सुधारों के साथ चलाया जाता है जिन्हें सरकार ने मंजूर कर लिया है। हालाकि साधारण प्रगति संतोषजनक है, पर अनुकूल साहित्य न होने से शिक्षकों को बड़ी कठिनाई हो रही है। समाज-विज्ञान के विषय में तो यह कमी बहुत ही खटक रही है क्योंकि पाठ्यक्रम मे दी हुई बातों का ज्ञान देने-वाली पुस्तके ही नहीं है। इसलिए शिक्षक लोग इस विषय को ठीक तरह से नहीं पढ़ा सकते। निरीक्षको और ट्रेनिग केन्द्रो के अध्यापकों ने कुछ साहित्य तैयार करने की कोशिश की है, लेकिन यह बिल्कुल नाकाफ़ी है। ऐड्वाइज़री कमेटी ने इतिहास के पाठ्यक्रम मे कुछ परिवर्तन सुझाये है और उनका सुझाव सरकार के पास सम्मति के लिये भेज दिया गया है।

बुनियादी पाठ्यक्रम में पहले पॉच दर्जो मे खेती-बाडी को साधारण विषय माना गया है, बुनियादी दस्तकारी नहीं। लेकिन हमारे बहुत से बुनियादी स्कूलों में खेती के लिए जमीन का इन्तजाम नहीं है, इसलिये यह विषय छोड़ना पड़ा है।

दस्तकारी के साथ गणित का अनुबन्ध तो बडी आसानी से हो जाता है, लेकिन दूसरे विषयो का अनुबन्ध करने मे शिक्षकों को सफलता नहीं मिली है। अनुबन्ध शिक्षा सफल तभी हो सकती है जब शिक्षक का ज्ञान भंडार भरपूर हो

और इतने पर भी यह एक ऐसी कला है जिसका विकास धीरे-धीरे हो सकता है।

सूत की खपत

बच्चों के काते हुए सूत की खपत का सवाल बहुत टेढ़ा है। सरकार तमाम सूत चर्खा संघ को नक़द क़ीमत पर बेचना चाहती है, पर चर्खा संघ लेने को तैयार नहीं है। सितम्बर १९४१ तक तो संघ किसी तरह सूत खरीदने को राज़ी हो गया है, पर इसके बाद इकट्ठा होनेवाले सूत का क्या होगा इस प्रश्न का कोई संतोषजनक हल अभी तक नहीं हो सका है। सरकार इस बात को महसूस नहीं करती है कि सूत कोई बिकनेवाली चीज़ नहीं है। चाहिए तो यह कि सरकार इस सूत की खादी बुनवाकर बेच दे या सरकारी कामों में ले ले। लेकिन दफ्तरी घिस-घिस कुछ नहीं होने देती और स्कूलों में रखने का ठीक इंतज़ाम न होने से बच्चों का उत्साह से काता हुआ यह सूत खराब ही होता दीखता है।

बुनियादी स्कूलों की ज़रूरतें

सरकार बदलने के बाद ही ऐडूवाइज़री कमेटी को यह लगने लगा कि शिक्षकों और अफ़सरों दोनों में ही बुनियादी शिक्षा के लिए उत्साह ठंडा पड़ रहा है। लड़ाई की वजह से रुपये की कमी भी कोई नया काम शुरू करने के रास्ते में एक बड़ी अड़चन थी। उधर कमेटी यह चाहती थी कि बुनियादी शिक्षा का काम कम–से–कम एक छोटे से प्रयोग की तरह तो चलता रहे। इसलिए उसने बुनियादी शिक्षा के मौजूदा काम को चलाने के लिए कम–से–कम ज़रूरतों के बारे में कुछ प्रस्ताव बनाये। कमेटी ने सरकार से प्रार्थना की कि स्कूलों में दस्तकारी के काम के लिए और कच्चा माल और सूत रखने के लिए जगह का इंतज़ाम करे और स्कूल की सफ़ाई और प्रकृति–निरीक्षण तथा खेती–बाड़ी और खेल–कूद के लिये ज़मीन का भी इंतज़ाम करे। कमेटी का एक साल का अनुभव यह था कि दफ्तरी घिस–घिस की वजह से स्कूलों को सामान और कच्चा माल मिलने में और बच्चों का काता हुआ सूत बेचने में हमेशा दिक्क़त रहती है। इसलिए कमेटी ने यह सुझाव रक्खा कि इस काम की और बुनियादी स्कूलों के और भी छोटे-मोटे कामों की देख–भाल के लिए एक कमेटी बना दी जाय। उसने यह भी सुझाया कि सब सामान देने के लिए एक अलग दफ्तर क़ायम किया जाय। कमेटी ने जब यह देखा कि शिक्षकों को दस्तकारी में कुशल बनाने के लिए और

उनमे बुनियादी शिक्षा के प्रति उचित भावना उत्पन्न करने के लिए एक साल की ट्रेनिग काफी नहीं है, तो उसने यह सुझाया कि ट्रेनिग स्कूलो में सिर्फ मैट्रिक पास शिक्षक भर्ती किये जायँ और उन्हे कम-से-कम दो साल की ट्रेनिग दी जाय। कमेटी ने यह प्रस्ताव भी रक्खा कि उम्मीदवारो का चुनाव भेंट और बातचीत (interview) के बाद किया जाय। कमेटी का प्रस्ताव यह भी था कि इन मैट्रिक पास बुनियादी शिक्षकों को कम-से-कम ३० रुपये महीना वेतन दिया जाय और उनका ग्रेड ५५ रुपये का रक्खा जाय। कमेटी का यह भी ख्याल था कि चूँकि बुनियादी स्कूलों के शिक्षकों और बुनियादी ट्रेनिग स्कूलों के अध्यापकों को दूसरे शिक्षकों से ज्यादा काम करना पडता है, इसलिए उन्हे इसका कुछ मुआवजा दिया जाना चाहिए। कमेटी की राय थी कि बुनियादी शिक्षकों को ५ रुपये महीना और ट्रेनिग स्कूल के अध्यापकों को २० रुपये महीना या वेतन का १५% (दोनो मे जो कम हो) अतिरिक्त भत्ते के रूप मे दिया जाय।

सरकार ने ऐडवाइजरी कमेटी के ये तमाम प्रस्ताव नामजूर कर दिये। ये सिफारिशें कमेटी ने एकमत से की थी। कमेटी का कार्यकाल ३१ जनवरी १९४१ को खतम हो गया और सरकार की नामजूरी इसके बाद आयी। ८ अप्रैल १९४१ को सरकार ने बारह आदमियों की नयी ऐडवाइजरी कमेटी नियुक्त की है।

मध्य-प्रान्त

सन् १९३८-३९ मे प्रान्तीय सरकार ने जाकिर हुसैन कमेटी के बनाये हुए बुनियादी पाठ्यक्रम को इस शर्त पर मंजूर किया कि इसे जारी करने के आर्थिक पहलू कि जाँच की जाय। इसलिए अक्तूबर १९३९ मे प्रान्त के जिला बोर्डो के प्रतिनिधियो की कान्फ्रेस बुलायी गयी ताकि वे बुनियादी शिक्षा के आर्थिक पहलू को ठीक तरह समझ सके। बातचीत के नतीजे से यह मालूम हुआ कि पर्याप्त सरकारी सहायता के बिना वे लोग बुनियादी पाठ्यक्रम जारी करने की पूरी ज़िम्मेदारी लेने को तैयार नही है। सरकार ने तो इस उद्देश्य से विद्या-मंदिर ट्रेनिग इन्स्टीट्यूट पहले ही खोल दिया था कि उसमे सरकारी नार्मल स्कूलों के अध्यापकों को ट्रेनिग दी जाय ताकि वे प्रायमरी स्कूलों के लिए बुनियादी शिक्षक तैयार कर सकें। यह काम पूरा होने पर अप्रैल १९४० मे विद्या मंदिर ट्रेनिग इन्स्टीट्यूट बन्द कर दिया गया।

बुनियादी पाठ्यक्रम जारी करने मे कितना खर्च पड़ता है इसका अन्दाज़ा लगाने के लिए सरकार ने दो चुने हुए सघन हलको मे प्रयोग के तौर पर बुनियादी शिक्षा जारी करना तय किया। इस काम के लिए सरकार ने मराठी हिस्से के लिए वर्धा तहसील और हिन्दी हिस्से के लिए सिवनी तहसील को चुना और इन दोनो तहसीलों के प्रायमरी स्कूलों को अपने अधिकार मे ले लिया। इन क्षेत्रों के अलावा उन्हीं स्कूलो में बुनियादी शिक्षा जारी करने की अनुमति दी गयी जहाँ दस्तकारी का काफ़ी सामान और बुनियादी शिक्षा देनेवाले शिक्षक उपलब्ध हों। सरकार ने यह सोचकर कि इन दो सघन हलको के लिये बुनियादी शिक्षकों की जरूरत दो बेसिक नार्मल स्कूलों से पूरी हो सकती है। १ मई १९४० से वर्धा के विद्यामंदिर ट्रेनिंग स्कूल को और सिवनी के नार्मल स्कूल को बेसिक नार्मल स्कूल बना दिया गया।

सघन हल्के के स्कूलों के शिक्षक नार्मल की ट्रेनिंग तो पहले ही पाये हुए थे इसलिए उन्हे एक साल बुनियादी दस्तकारी कताई और बुनियादी शिक्षा की पद्धति की ट्रेनिंग देना ठीक समझा गया। इस इरादे से एक साल का एक पाठ्यक्रम तैयार किया गया और शिक्षकों की दो टोलियों मे देना तय किया गया। पहली टोली ट्रेनिंग १९४०-४१ मे पूरी हो गयी और दूसरी टोली की १९४१-४२ मे होगी। बेसिक नार्मल स्कूलों का १९४०-४१ का खर्च और १९४१ ४२ का बजट आगे दिया गया है।

७ नवम्बर १९४० को सरकार ने वर्धा को जिला कौंसिल के ३९ स्कूलों को अस्थायी तौर पर अपने अधिकार मे ले लिया और इन स्कूलों के काम की निगरानी के लिए एक विशेष अफ़सर को नियुक्त कर दिया। स्कूलों के लिए दस्तकारी का सामान और मरजाम भी सरकार ने दिया। इस सघन हलके के खर्च के ऑकड़े आगे दिये गये हैं। इसी तरह १ मई १९४१ से सरकार ने सिवनी ज़िला कौंसिल के ३० स्कूलों को भी चार वर्ष के लिए अपने अधिकार में ले लिया। इस हलके के खर्च के आँकडे भी आगे दिये गए हैं। दोनों सघन हलको मे बुनियादी शिक्षा के प्रयोग के नतीजो को सरकार गौर से देख रही है। इसकी निगरानी के लिए मुकर्रर किये गये अफसरों की रिपोर्ट प्राप्त होने पर सरकार यह निश्चय करेगी कि बुनियादी शिक्षा की प्रगति मे आगे कौनसा कदम बढ़ाया जाय।

बुनियादी शिक्षा के लिए पुस्तकों और रीडरो का अभाव बड़ी कठिनाई पैदा कर रहा हैं। ऐसा साहित्य तैयार कराना विशेषज्ञो का काम है और इसमें समय लगेगा। दोनो बेसिक नार्मल स्कूलों के अध्यापक इस काम मे लगे हैं। बुनियादी स्कूलो के लिए पुस्तके चुनने और पसंद करने के लिए एक अस्थायी टैक्स्ट बुक कमेटी भी बना दी गई है।

सघन हलको के अलावा बुनियादी स्कूलो की संख्या गये साल २२ रही। इनकी जाँच की रिपोर्टों से पता लगता है कि लोकल बोर्ड इन्हे दस्तकारी का काफ़ी सामान नहीं दे सके।

आँकड़े

बेसिक नार्मल स्कूलो का ख़र्चः—

	१९४०–४१ मे ख़र्च हुआ	१९४१–४२ का अनुमानित ख़र्च
बेसिक नार्मल स्कूल, वर्धा	२६,७१७ रु.	३९,७२६ रु.
बेसिक नार्मल स्कूल, सिवनी	२६,१८२ रु.	३५,३३९ रु.

वर्धा तहसील के सघन हलके का ख़र्च :—

(१) दस्तकारी का सामान	२,६४६ रु०	११,८०६ रु०
(२) मुआयना	१,४०० रु०	२,५५१ रु०
(३) स्कूलो के मकानो की मरम्मत	४९६ रु०	४४४ रु०
(४) सरकारके के नियुक्त किये अतिरिक्त शिक्षक	३२५ रु०	१,२०० रु०
(५) शिक्षको को सफ़र ख़र्च	१७८ रु०	२०० रु०
कुल	५,०४५ रु०	१६,१६५ रु०

सिवनी तहसील के सघन हलके का ख़र्च —

१९४०–४१	१९४१–४२	४२–४३	४३–४४	४४–४५	४५–४६
के लिए मंजूर या संभावित					(दो महीने का)
		(१) दस्तकारी का सामान			
५,०४०)	८,३६०)	१२,८६४)	२१,३३८)	२६,६७९)	—

(२) मुआयना और सफ़र खर्च --

२,७१२)	२,८२०)	२,३२०)	२,४३६)	२,४४१)	४५८)

(३) मकान मरम्मत .--

५००)	७५०)	३००)	३००)	३००)	—

(४) अतिरिक्त शिक्षक —

३६०)	५०१)	३,४७७)	९,९००)	१०,८०१)	१,८००)

कुल जोड़ --

८,६१२)	१२,४३१)	१८,९६१)	३३,९७४)	४०,२२०)	२,२५८)

संयुक्त-प्रांत

अगस्त १९३८ में इलाहाबाद का बेसिक ट्रेनिंग कालेज इस उद्देश्य से खोला गया कि इसमें ऐसे शिक्षक तैयार किये जायँ जो बेसिक ट्रेनिंग केन्द्रों में जिला बोर्डों और म्युनिसिपैलिटियों के प्राईमरी स्कूलों के शिक्षको को ट्रेनिंग देकर उन्हें पहले दर्जे को बुनियादी पद्धति से पढ़ाने के योग्य बना दें। स्त्रियों के लिए एक इसी तरह का ट्रेनिग केन्द्र बनारस मे खोला गया पर बाद मे यह भी इलाहाबाद के बेसिक ट्रेनिंग कालेज में ही शामिल कर दिया गया।

बेसिक ट्रेनिग कालेज मे पहले साल ४५ पुरुप ग्रेजुएटो और २८ महिलाओं को दाखिल किया गया।

जनवरी १९३८ में बेसिक ट्रेनिंग कालेज मे वर्नाक्युलर स्कूलो के ९८ शिक्षकों को दस्तकारी की ट्रेनिंग देने का कोर्स शुरू किया गया ताकि ये शिक्षक रिफ्रैशर कोर्स के केन्द्रो मे जाकर काम करे।

हमारे प्रात की सरकार ने यह निश्चय किया कि इस प्रान्त मे बुनियादी शिक्षा का उद्देश्य स्कूलों को स्वावलम्बी बनाने का न रक्खा जाय, लेकिन दस्तकारी के लिए ज़रूरी सामान का जितना हिस्सा हो सके स्कूलो मे ही तैयार किया जाय। इस बातको ध्यान मे रखकर कागज़ बनाने का काम शुरू किया गया और स्कूलों में कला और दस्तकारी के लिए ज़रूरी कागज़ तैयार करने के प्रयोग किये गये। इसी तरह कताई और बुनाई का भी यही उद्देश्य रक्खा गया कि उससे स्कूल में काम आनेवाली चीज़ें तैयार हो सके। चित्रकारी के लिये बॉस की छड़ियो की

कूँचियाँ बनाई गयीं और बाज़ार में मिलनेवाले मामूली रंगों को बबूल के गोंद के साथ मिलाकर रंग भरने का सस्ता साधन तैयार कर लिया गया। मिट्टी की गोल बत्तियाँ बनाकर और एक के ऊपर एक जमाकर मिट्टी के बरतन बनाना सिखाया गया और इस तरह रंग के प्याले व स्कूल मे काम आनेवाली कई तरह की चीज़ें बना ली गयीं। बाग़वानी, मधु-मक्खी पालन, वगैरा को भी ट्रेनिंग में शामिल किया गया और गत्ते का काम भी सिखाया गया। गत्ते के काम में जिल्दसाज़ी को बुनियादी दस्तकारी माना गया।

बेसिक ट्रेनिंग कालेज सिर्फ़ ट्रेनिंग केन्द्र ही नहीं है बल्कि बुनियादी तालीम के प्रयोगों के लिए एक प्रयोगशाला भी है। यहाँ बुनियादी पाठ्यक्रम पर अमल करके देखा जा रहा है और बच्चो व शिक्षको के लिए किताबें भी तैयार की जा रही हैं। कला को तमाम दस्तकारियो का आधार बनाया गया है।

बेसिक ट्रेनिंग कालेज में ट्रेनिंग पाये हुए अध्यापकों की मदद से मई १९३९ में सात रिफ्रैशर कोर्स के केन्द्र क़ायम किये गये। हर केन्द्र में छः ग्रेज्यु-एट और १४ दस्तकारी शिक्षक रक्खे गये। इन केन्द्रों में जिला बोर्डों और म्युनि-सिपैलिटियों के २५० शिक्षक भी चुनकर भेजे गए। एक रिफ्रैशर कोर्स तीन महीने का होता है।

पहले कोर्स मे ज़िला बोर्डो और म्युनिसिपैलिटियों के १,७२० शिक्षको को ट्रेनिंग दी गयी और इनकी मदद से अगस्त १९३९ मे सारे प्रान्त में १,७०० बुनियादी दर्जे शुरू किये गये। दूसरे और तीसरे कोर्सों में क़रीब ३,४०० शिक्षकों को ट्रेनिंग दी गयी और फरवरी १९४० तक प्रान्त भर के क़रीब ५०० स्कूलों में पहला बुनियादी दर्जा खोल दिया गया। बुनियादी स्कूलो की संख्या का औसत ९० प्रति ज़िला बोर्ड या म्युनिसिपैलिटी है। फरवरी १९४० से इन स्कूलो में दूसरा दर्जा खोलने के लिए शिक्षको को ट्रेनिंग देने का इन्तज़ाम किया गया।

जुलाई १९३९ मे बेसिक ट्रेनिंग कालेज मे पुरुष और स्त्री शिक्षकों की दूसरी टोली की ट्रेनिंग शुरू हुई। यह टोली अप्रैल १९४० मे पास होकर निकली और जुलाई १९४० मे इन नये अध्यापको को ज़िला बोर्डों और म्युनिसिपैलिटियों के शिक्षको को ट्रेनिंग देने के लिए जुदा-जुदा केन्द्रो में भेज दिया गया। इस तरह हर केन्द्र में ग्रेजुएट अध्यापको की संख्या ११ हो गयी। जो ९८ दस्तकारी

शिक्षक रिफ्रैशर कोर्स के केन्द्रों मे काम करते थे उन्हे वहाँ से वापस बुला लिया गया और अपने-अपने जिले के बुनियादी स्कूलो का सुपरवाइज़र बनाकर भेज दिया गया। इनमें से सबसे होशियार शिक्षको को सरकारी नार्मल स्कूलो से लगे हुए मॉडल स्कूलो मे और सेन्ट्रल ट्रेनिंग स्कूलों मे भेज दिया गया है।

जिन ग्रैजुएटों को १९३८ ३९ मे ट्रेनिंग दी गयी थी उन्हे जुलाई १९४० से बेसिक ट्रेनिग कालेज मे वापस बुलवा कर तीसर और चौथे दर्जों को पढाने का तरीक़ा और पाठ्यक्रम पर अमल करना सिखाया गया। इनकी ट्रेनिंग दिसम्बर १९४० मे पूरी हुई।

बेसिक ट्रेनिग कालेज मे ट्रेनिंग पायी हुई महिलाओं को लड़कियों के सरकारी नार्मल स्कूलों में या इन से लगे हुए मॉडल स्कूलो मे बुनियादी शिक्षा शुरू करने के लिए भेजा गया था। जुलाई १९४० मे इन्हे भी वापिस बुलवा लिया गया है और इनकी जगह वे शिक्षिकाऐ भेज दी गयीं है जो अप्रैल १९४० में ट्रेनिंग पास करके निकली हैं।

हर नार्मल स्कूल (लड़कों का और लड़कियो का) के एक अध्यापक और एक ड्राइंग-मास्टर को बेसिक ट्रेनिग कालेज में रिफ्रैशर कोर्स पूरा कराया गया। इनकी मदद से अब नार्मल स्कूलों मे भी बुनियादी तालीम जारी करने का इन्तज़ाम किया गया है। उद्देश्य यह है कि धीरे धीरे यह योजना सब नार्मल स्कूलो मे जारी हो जाय ताकि नये बुनियादी स्कूल खोलने के लिए शिक्षको को सीधी नार्मल स्कूलो में ही ट्रेनिग मिल जाय।

इंस्पैक्टरो को भी धीरे-धीरे बेसिक ट्रेनिग कालेज मे ट्रेनिग दी जा रही है। अभी तक ४९ सब डिपुटी इंस्पैक्टरो को ट्रेनिग दी जा चुकी है और ४८ की तीन महीने की ट्रेनिग चल रही है। दो साल के अन्दर तमाम सब-डिपुटी इन्स्पैक्टरो को बेसिक ट्रेनिग कालेज मे बुलवा कर ट्रेनिग दे दी जायगी ताकि वे अपने-अपने ज़िलो के बुनियादी स्कूलो की निगरानी कर सके।

अभी तक ८,६२२ शिक्षकों को ट्रेनिंग दी जा चुकी है और ४,७३८ स्कूलों में पहला बुनियादी दर्जा शुरू हो गया है। इसके करीब आधे स्कूलो मे दूसरा दर्जा भी खुल गया है। सरकार का इरादा यह है कि इन मौजूदा स्कूलों को चौथे दर्जे तक के बुनियादी स्कूल बना देने के बाद दूसरे और स्कूलो मे बुनियादी तालीम

शुरू की जाय। नवम्बर १९४० से बुनियादी स्कूलों के बालवर्गों को भी बुनियादी तरीके पर चलाया जा रहा है। इस तरह बहुत से स्कूलो में तीन क्लासे बुनियादी तरीके पर चल रही है—बालवर्ग, पहला दर्जा और दूसरा दर्जा। जुलाई १९४१ से तीसरे दर्जे की भी शुरूआत कर दी जायगी। रिफ्रैशर कोर्सों में शिक्षकों की ट्रेनिग जारी रहेगी और जुलाई १९४२ तक बुनियादी स्कूलों मे पूरे पॉच दर्जे काम करने लगेगे। जनवरी १९४३ तक ५,००० प्राइमरी स्कूल पूरे बुनियादी तरीके पर चलने लगेगे।

ट्रेनिग कालेज मे पढ़ाई की किताबें और पाठ्यक्रम के विषयो के बारे में हिदायते तैयार की जा रही हैं और उन्हे प्रकाशित करने का इन्तज़ाम कर दिया गया है।

स्कूलो के लिए सस्ते मकान बनाने के प्रयोग भी हो रहे हैं। पक्के मकान पर ६,००० रु० खर्च करने के बजाय फूस के छप्पर का मकान २५०-३०० रु० मे तैयार हो जाता है। इस तरह का एक मकान ट्रेनिग कालेज में दो साल से काम दे रहा है और हर मौसम के लिए ठीक मालूम पड़ता है। ऐसे ही मकान और ज़िलो मे भी प्रयोग के तौर पर बनवाये जा रहे है।

जुलाई १९४१ से लड़कियो के प्राइमरी स्कूलों के लिए स्त्री-शिक्षिकाऐं तैयार करने के लिए रिफ्रैशर ट्रेनिग कोर्स शुरू करने का इंतजाम किया जा रहा है।

इबादुर्रहमान खां

काश्मीर

काश्मीर मे बुनियादी तालीम का प्रयोग सन् १९३८ मे शुरू हुआ। इस सिलसिले में मैं आपकी सेवा मे तीन-चार मोटी-मोटी बाते पेश करूंगा। सन् १९३८ मे रियासत मे शिक्षा को नये सिरे से संगठित करने के लिए एक कमेटी नियुक्त हुई थी। इस कमेटी को डा. ज़ाकिर हुसैन की रहनुमाई हासिल थी। इस कमेटी ने दूसरी योजनाओ के अलावा रियासत मे बुनियादी तालीम के चलाने की योजना पेश की। मुझे इस बात के बयान करने में बहुत खुशी है कि काश्मीर राज्य का रवैया इस मामले मे हमेशा सहानुभूति-पूर्ण रहा। वहाँ के प्रधान मंत्री ने, जो शिक्षा मे खास दिलचस्पी रखते है, इस काम

के चलाने में मुझे बहुत मदद दी और जहा तक हो सका है हर तरह की सहूलियतें भी दी हैं। सबसे पहले हमने श्रीनगर में शिक्षकों के लिए ट्रेनिग स्कूल खोला जिसमें हर साल १०० शिक्षक भर्ती किये जाते हैं। इनमें से २५ जगह तो उन लोगो के लिए हैं जो निजी स्कूलो मे शिक्षक हैं या जो शिक्षक बनना चाहते हैं और बाक़ी वे शिक्षक हैं जो शिक्षा-विभाग मे काम करते हैं।

इस ट्रेनिग स्कूल में तीन बुनियादी दस्तकारियो के सिखाने का प्रबन्ध किया गया है—खेती-बाड़ी, गत्ते व लकड़ी का काम और कताई व बुनाई। ट्रेनिंग स्कूल के साथ-साथ एक प्रैक्टिसिग स्कूल भी है। काश्मीर की रियासत के दो प्रान्त हैं— जम्मू और काश्मीर। चूँकि हम एक बड़ा ट्रेनिग स्कूल काश्मीर में खोल चुके थे इसलिए जम्मू मे काम शुरू करने के लिए हमने वहा भी एक बुनियादी स्कूल खोला। पहले साल हमारे पास ट्रेनिग स्कूल के लिए अध्यापकों की कमी थी। इसलिए एक रिफ्रैशर कोर्स जारी किया गया और इस कोर्स को पूरा करके जो अध्यापक निकले उनके ज़िम्मे ट्रेनिग का काम कर दिया गया। चूंकि पहले साल शिक्षको के लिए यह काम बिल्कुल नया था और योजना का अनुभव भी न था, इस लिए जो उस्ताद ट्रेनिग के लिए आये थे उन्हे हमने डेढ़ साल की ट्रेनिग दी। इस समय मे न केवल स्कूल के विद्यार्थियों ने बल्कि ट्रेनिग स्कूल के अध्यापको ने भी दस्तकारी मे आवश्यक योग्यता प्राप्त कर ली। अब हम शिक्षको को एक साल की ट्रेनिग देते हैं क्योंकि काम का ढाँचा अब पूरी तरह तैयार हो चुका है। दूसरे कुछ प्रान्तों मे ट्रेनिंग के लिए इसके मुक़ाबले मे बहुत कम समय दिया जाता है, इसलिए यू० पी० मे तीन-तीन महीने की ट्रेनिग कई बार करके दी जाती है। इसमें कुछ फ़ायदे भी हैं। लेकिन हमने जो तरीक़ा अपनाया है उसकी आवश्यकता इस कारण अनुभव हुई कि जब तक इन शिक्षको को काफ़ी समय तक शिक्षा की नई पद्धति और शिक्षा के नये विचारो और अनुभवो का परिचय न कराया जाय तब तक वे इस योजना को सफलता के साथ नही चला सकते, क्योकि उनका प्राथमिक ज्ञान और मानसिक विकास दोनो सीमित होते हैं।

हमारी योजना यह है कि हर साल तीस मामूली प्राइमरी स्कूलों को लेकर उन्हें बुनियादी स्कूल बना दिया जाय। अभी तो हर ऐसे स्कूल में एक य

दो ट्रेण्ड शिक्षक रक्खे गये है। ज्यूँ-ज्यूँ और शिक्षक ट्रेनिंग पाकर निकलते जायगे, बाकी स्कूलों में भी बुनियादी तालीम का काम शुरू होता जायगा। अभी हमने अपने बुनियादी स्कूल बड़े-बड़े कस्बों में शुरू किये है जो निरीक्षण करने वाले अफ़सरों के केन्द्र के नज़दीक है ताकि उनका निरीक्षण आसानी से और बार-बार हो सके।

हमने अपने स्कूलो मे जो पाठ्यक्रम जारी किया है, वह बहुत हद तक बुनियादी तालीम के पाठ्यक्रम से मिलता-जुलता है। लेकिन इस पाठ्यक्रम को हमने सिर्फ़ बुनियादी स्कूलों ही मे नहीं बल्कि रिसायतके तमाम स्कूलों में जारी किया है। इसके अलावा जो स्कूल बुनियादी तालीम का काम नहीं कर रहे हैं, उनमें भी दस्तकारी की शिक्षा का प्रबन्ध किया गया है। लेकिन यह दस्तकारी वहाँ शिक्षा के माध्यम का स्वरूप नहीं रखती, बल्कि इसकी शिक्षा शिक्षक अपनी उपज और कोशिश से अपनी योग्यता और स्थानीय परिस्थितियो के अनुसार देते हैं। काका साहब ने अपने व्याख्यान मे कहा था कि मनुष्य एक ही समय मे यह नहीं कर सकता कि ज़मीन पर भी चले और पानी मे भी तैरे। इसलिए उनका ख़्याल है कि एक ही समय में और एकही जगह पर दो तरह के स्कूल नहीं चल सकते। लेकिन हमारे पास ज़मीन और पानी दोनो चीज़ें हैं। इसलिए हमें दोनों ही तरीक़ों से काम लेना पड़ता है। इस तरह हमें आगे चलकर मामूली स्कूलो को बुनियादी स्कूल बनाने में आसानी होगी।

हमने रियासत मे शिक्षको के लिए रिफ्रैशर कोर्सों की भी व्यवस्था की है जिनमे अब तक ३५० शिक्षक शामिल हो चुके हैं। इन शिक्षको को शिक्षा के तरीक़ों के साथ–साथ दस्तकारी भी सिखायी गयी है। एक स्कूल मे टाट बनाने का काम शुरू किया गया है। काम शुरू करने के लिए शिक्षकों ने कुछ चन्दा किया था और कुछ सामान माग कर लाये थे। लेकिन अब इस काम ने इतनी उन्नति करली है कि सारे जम्मू के ज़िले मे स्कूलो को जितने टाट की ज़रूरत है उसे यह स्कूल पूरी कर सकता है। टाट बनाने का काम लडके स्कूल के सिवा घर पर भी करते हैं। इससे एक वर्ष के भीतर उनकी आमदनी दुगनी हो गयी है। हमारे कुछ स्कूलो मे रेशम, ऊन और सूत की कताई का भी काम शुरू किया गया है।

लकड़ी और गत्ते का काम भी जारी है। जहाँ जमीन और पानी की आसानी है वहाँ खेती सिखाने का भी प्रबंध किया गया है।

हमारे तमाम प्रायमरी स्कूलो मे पॉच दर्जे होते हैं। बुनियादी तालीम का काम अभी सिर्फ़ पहिले दो दर्जों में शुरू हुआ है। हमारा इरादा है कि हर साल आगे के दर्जे में बुनियादी तालीम का काम बढ़ाते जायंगे और आवश्यकता के अनुसार एक–एक ट्रेण्ड शिक्षक और देते जायगे।

संभव है आप को यह मालूम करने मे दिलचस्पी हो कि बच्चो पर इस शिक्षा का कैसा प्रभाव पड़ रहा है। स्कूलो का निरीक्षण करने से मेरा अनुमान है कि बच्चो में पहले से ज़्यादा चुस्ती, मुस्तैदी, दिलचस्पी और फ़ुर्ती पैदा हो गयी है। पहले वे अफ़सरो और बाहर के लोगो को हौवा समझ कर उनसे घबराते थे, उनमें झिझक थी। पर अब ये बाते बहुत कुछ दूर हो चली है। दस्तकारी के द्वारा उनमें मिल-जुल कर काम करने की प्रवृत्ति हो गयी है। न केवल यह कि वे अपने स्कूल के साथियो के साथ मिल-जुलकर काम करते हैं। बल्कि वे गाव के दूसरे बच्चों की भी सेवा करते है। उनमे साफ़-सुथरा रहने की आदत पैदा हो गयी है। कहीं-कहीं उन्होंने मोहल्ले के बच्चो के लिए खेलो के केन्द्र स्थापित किये हैं। रियासत में हर साल जो मेहनत का हफ़्ता मनाया जाता है, उसके अवसर पर वे गाव की सफ़ाई का काम बड़ी खुशी के साथ करते हैं। अपने चौगिर्द के अनुसार बहुत सी बातें, जैसे चिड़िया, जानवर, पेड़-पौधे और यात्रा के तरीके, वगै़रा जो वे पहिले नहीं जानते थे अब जानने लगे है। एक अच्छा प्रभाव इस शिक्षा का यह भी हुआ है कि बच्चों के माता-पिता जो पहले या तो बुनियादी तालीम के विरोधी थे या उससे उदासीन थे अब उसकी तरफ ध्यान देने लगे हैं और सार्वजनिक रूप से इस परिवर्तन का स्वागत करते हैं।

अनुबंध पद्धति पर शिक्षा देने का काम अभी स्कूलो मे पूरी तरह नहीं हो रहा है। लेकिन यह काम धीरे-धीरे शिक्षको की समझ में आयेगा। इसके लिए अनुभव और समय की जरूरत है। इस सिलसिले में ट्रेनिग स्कूल के कच्चे-शिक्षकों के काम को संगठित करना ख़ास तौर पर ज़रूरी है। वे अपने पाठो के संकेत लिखते हैं और दस्तकारी के साथ अनुबन्धित पाठो को क्रम-बद्ध करते हैं। पिछले ढाई साल में इस तरह के कई हज़ार पाठो के संकेत तैयार हो चुके है। ज़रूरत

इस बात की है कि इनकी जाच करके इनमें से अच्छे-अच्छे पाठो को पुस्तक के रूप मे प्रकाशित किया जाय ताकि देहात में काम करनेवाले शिक्षक उससे लाभ उठा सके। जामिया मिल्लिया के ट्रेनिंग स्कूल ने भी इस तरह का मसाला बहुत अच्छी तरह जमा किया है। उनके यहाँ शिक्षको के मार्ग-प्रदर्शन के लिये काफ़ी मसाला इकट्ठा हो चुका है। मुझे आशा है कि जहाँ कहीं ट्रेनिंग स्कूल हैं, या प्रयोग के तौर पर बुनियादी स्कूल चलाये जा रहे है, वहॉ इस तरह के मसाले की छान-बीन करके शिक्षको और बच्चों दोनों के लिए उपयोगी पुस्तके तैयार की जायगी।

ख़्वाज़ा गुलामुस्सैयदेन

पहला भाग

बुनियादी तालीम का परिचय

१. डा० ज़ाकिर हुसैन का भाषण

२. डा० राजेन्द्र प्रसाद का भाषण

डा० ज़ाकिर हुसैन का भाषण

आज बुनियादी तालीम की दूसरी कॉन्फ्रेंस शुरू हो रही है। हमारे बुलावे पर आप सब लोग दूर और नज़दीक से सफ़र (प्रवास) की तकलीफें उठा कर कामों का हर्ज करके इसमें शरीक होने आये हैं। हम आसानी से आपका शुक्रिया अदा नहीं कर सकते (आभार नहीं मान सकते), मगर यक़ीन जानिये कि हम दिल से आपके शुक्रगुज़ार (आभारी) हैं। हमें बड़ी उम्मीद है कि अपनी बात सुनाकर और दूसरो की सुनकर, अपनी कामयाबियों (सफलताओं) से दूसरों को होशियार (सतर्क) करके आपके यहाँ मिलने से, मुल्क (देश) सही बुनियादी तालीम की राह पर एक क़दम और आगे बढ़ सकेगा।

आपको याद होगा कि पहली बुनियादी तालीमी कॉन्फ्रेंस को एक मालदार सूबे (धनी प्रान्त) की हुकूमत (सरकार) ने बुलाया था। आज आप एक ग़रीब कौमी इदारे (राष्ट्रीय संस्था) के बुलावे पर यहाँ जमा हुए हैं। आपको अगर रहने-सहने और खाने-पीने का वैसा आराम न हो, तो हमें माफ़ कर दीजिए और यक़ीन जानिये कि आपके आराम में अगर कोई कमी है तो इस वजह से नहीं है कि हम आराम देना नहीं चाहते, बल्कि शायद इस कारण से है कि हमारे पास उसका पूरा सामान नहीं है; मुझे तो यक़ीन (विश्वास) है कि आप शायद इन छोटी-छोटी तकलीफ़ों को ध्यान में भी न लायेंगे।

लेकिन पहली और दूसरी कॉन्फ्रेंस के इस फ़र्क़ से ध्यान इस तरफ ज़रूर जाता है कि यह बुनियादी तालीम का काम है किसका काम? हुकूमत (सरकार) का या निजी आदमियों और इदारों (संस्थाओं) का? मैं चाहता हूँ कि हम सब इस बात को अच्छी तरह सोचें। जैसा कि आपको मालूम है, बुनियादी तालीम की तजवीज़ (योजना) निजी आदमियों ने बनाई थी। अगर कोई हुकूमत (सरकार) उनकी तजवीज़ (योजना) को न अपनाती, तब भी शायद ये लोग तालीम के जिस अन्दाज़ को ठीक समझते थे, उसको कहीं-न-कहीं मौका पाकर चलाते और अपने तजुरबे (अनुभव) से औरों को शायद कोई नयी राह दिखा सकते।

या जैसे बहुतसी ख़्याली तजवीज़ें (काल्पनिक योजनाएँ) बनाई जाती हैं, यह तजवीज़ (योजना) भी बनाई जाती, और एक छोटी-सी किताब की शक्ल में कहीं-कहीं किसी कुतुबख़ाने (पुस्तकालय) मे मिला करती। लेकिन मैं आप सबसे पूछता हूँ कि क्या आपके ख़्याल में यह पहली और दूसरी सूरत बराबर मुमकिन (सम्भव) थी। मैं तो समझता हूँ कि यह तजवीज़ (योजना) बनी ही इसलिए थी कि बनानेवालो के नज़दीक हमारे मुल्क में एक अच्छी रियासत (राज्य) के बनने का वक्त क़रीब [निकट] आ गया था। अगर वह रियासत बन जाय, तो वह इस काम को संभाले, वह न बने तो तालीमी काम करनेवालों का फ़र्ज़ (कर्तव्य) है कि वे इसे चलाये और इसको चलाकर सच्ची और अच्छी रियासत के आने का वक्त नज़दीक ले आयें। इस तजवीज़ के बनानेवालों को ज़रूर मालूम होगा कि अच्छी रियासत का बनना खेल नहीं; बनते-बनते बनती है। इसलिए शायद वे पहले ही दिन से इसे रियासत की मदद बग़ैर चलाने के लिये भी कमर कस चुके होगे। यह तो बस एक इत्तफ़ाक़ (संयोग) की बात थी कि इस तालीमी तजवीज़ (योजना) को कई सूबो की हुकूमतों ने थोड़ी-बहुत कतर-ब्योंत के बाद एक ही वक्तमे मान लिया, और बग़ैर बहुत तैयारी के, और कहीं-कहीं तो ऐसे लोगो के हाथों जिन्हे इसपर पूरा भरोसा न था, इसे चला भी दिया। कहीं छोटे पैमाने पर और कहीं बड़े पैमाने पर आज भी इनमे से कई जगह यह तजुरबा [प्रयोग] मेहनत से चलाया जा रहा है। कहीं-कहीं ज़रा बेदिली से इसे ऐसें घसीट रहे हैं जैसे बस किये की लाज हो। और एक-आध जगह तो आठ-दस महीने के लम्बे तजुर्बे [प्रयोग] के बाद जैसे थककर या परेशान [लज्जित] होकर इससे तोबा भी कर ली गयी है। इसमे तो शक नहीं कि यह हुकूमतें इस तजवीज़ [योजना] को न मान लेतीं, तो इसपर जितना तजुर्बा [प्रयोग] हुआ है, वह न हो पाता। मगर साथ-साथ यह भी सच है कि हुकूमत के बाहर निजी लोगो में शायद इतनी ख़्वामख़्वाह की बेज़ारी [निरर्थक विद्वेष] न होती। सिर्फ़ इस वज़ह से कि बाज [कुछ] ऐसी हुकूमतों ने इसे चलाया, जिनसे ये लोग राजी न थे, वे इस तजवीज़ [योजना] को जॉचना और मानना तो क्या, एक नज़र देखना भी नहीं चाहते। यह भी हुआ कि हुकूमत ने इसे हुकुम से चलवाया। और काम कहीं-कहीं तो ज़रूर ऐसे लोगों के हाथ मे आया, जो ख़ुद या तो इस तजवीज़ [योजना] को

समझते नहीं थे, या किसी ऐसी वजह से जिसका तालीम से कोई वास्ता [सम्बन्ध] नहीं, वे इसे पसन्द न करते थे। गोया हुकूमत के हाथ मे इस तजवीज़ [योजना] के आने से अगर फ़ायदा हुआ, तो नुकसान भी ज़रूर हुआ। फिर हमें क्या करना चाहिए? क्या इस काम को हुकूमतों [शासकों] ही के हाथ में दे, या यह कि ग़ैर-सरकारी कूवतों [निजी शक्तियों] को इसकी ख़िदमत (सेवा) मे लगाये?

मैं अपनी राय आपको बताऊँ। मैं समझता हूँ कि बुनियादी तालीम का काम रियासत (राज्य) का काम है। यह इतना बड़ा और इतना फैला हुआ काम है कि निजी कोशिशें इसे समेट नहीं सकतीं। लेकिन अगर रियासत किसी एक फिरके (सम्प्रदाय) या एक गिरोह (दल) की हुकूमत का नाम है, तो यह ऐसी चलती-फिरती छाँह है कि तालीम इसके हाथ में कभी ज़्यादा देर तक ठीक रास्ते पर नहीं चल सकेगी। हाँ, रियासत अगर समाजी ज़िन्दगी के इस तंज़ीम (संगठन) को कहते हैं, जो न्याय के आधार पर हो, जो खुद रोज़-रोज अपनी इस बुनियाद को मज़बूत करके अख़लाक़ी (नैतिक) तरक्की (उन्नति) करती जाती हो, और दिन-पर-दिन अपने नागरिकों की कोशिश से हर गिरोह और हर तबके (प्रत्येक दल) क्या, हर एक आदमी की शख़्सियत (नैतिक व्यक्तित्व) की पूरी तरक्की का रास्ता इसमें सहल से और सहल होता जाता हो, तो फिर तालीम ऐसी रियासत का सब से ज़रूरी काम है। इसलिए कि खुद इसकी अख़लाक़ी तरक्की (नैतिक उन्नति) इस काम से होती है। दुनिया की कोई रियासत कामिल (पूर्ण) बे-ऐब (निर्दोष) रियासत नहीं हो सकती मगर बाज (कतिपय) रियासतो की नींव अख़लाक (सदाचार) और नेकी पर होती है, बाज़ की नहीं होती। बाज़ (कतिपय) अख़लाक़ी (नैतिक प्रगति) की तरफ़ चलती हैं, बाज़ (कुछ) नहीं चलतीं। बाज़ (कतिपय) अदल (न्याय) के करीब होना चाहती हैं, बाज़ नहीं चाहतीं। बाज़ (कुछ) मे सबके लिये तरक्क़ी (उन्नति) की राहे खुली होती हैं, बाज़ (कुछ) मे कुछ के लिये खुलती जाती हैं और कुछ के लिये और बन्द होती जाती हैं। बुनियादी तालीम का काम पहिली किस्म की रियासत का काम है, दूसरी किस्म की रियासत के हाथ मे यह न पहुँचे तो अच्छा। हमारे मुल्क में अभी इस अख़लाक़ी रियासत (न्याय-मूलक राष्ट्र) का बनना बाक़ी है फिर जब तक वह नहीं बनती क्या हम हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहें? नहीं। जिस तरह आज़ाद (स्वतंत्र) और अच्छे आदमियों का यह फ़र्ज़ (कर्तव्य) है कि वह जल्द से जल्द अपनी समाजी ज़िन्दगी (जीवन) की बुनियाद ऐसी

अख़लाकी रियासत (ऐसा राज्य जिसका आधार न्याय हो) पर रक्खें जैसी कि मैंने अभी बयान की, वैसे ही हर सच्चे तालीमी काम करने वाले का फ़र्ज़ (कर्तव्य) है कि वह ऐसी रियासत के बनने मे अपने काम से पूरी मदद दे। इसमें शक नहीं कि उसका काम इस रियासत मे बहुत कठिन होगा, लेकिन इस वजह (कारण) से इसे छोड़ा तो नहीं जा सकता। हॉ, यह ज़रूर जानना चाहिए कि खोदना बहुत होगा और पानी बहुत कम निकलेगा। मगर क्या अजब है कि इस मेहनत ही से लोगों का ध्यान कुछ पलटे और हमारे मुल्क मे वह रियासत वजूद में आ जाय (बन जाय), जो हमारे धीमे काम को एक ही हल्ले मे कहीं से-कहीं पहुँचा दे।

इस वक्त हमारी खुशकि़स्मती (सौभाग्य) से बाबू राजेन्द्र प्रसाद जी यहाँ मौजूद हैं और हमारी कॉन्फ़्रेंस का चन्द मिनट में इफ़तताह फ़रमायेंगे (उद्घाटन करेंगे)। मैं उनकी मारफ़त तालीमी काम करनेवालों की यह इल्तिजा (अनुरोध) अपने मुल्क के सब सियासी रहनुमाओं (राष्ट्रीय नेताओं) की ख़िदमत (सेवा) मे पहुँचाना चाहता हूँ कि खुदा के लिये इस मुल्क की सियासत (राजनीति) को सुधारिए और जल्द-से जल्द ऐसी रियासत की नींव डालिये जिसमे कौम क़ौम पर भरोसा कर सके, निर्बल को बलवान का डर न हो, ग़रीब अमीर की ठोकर से बचा रहे, जिसमे तमद्दुन (संस्कृति) अमन (शान्ति) के साथ पहलू ब-पहलू फल-फूल सके, और हरएक से दूसरे की खूबियॉ उजागर हों। जहॉ हरएक वह बन सके जिसके बनने की उसमे सलाहियत (योग्यता) है और बनकर अपनी सारी कूवत (शक्ति) को अपने समाज का चाकर जाने। मै जानता हूॅ कि इन बातों का कह देना सहल है और करना किसी एक आदमी के बस की बात नहीं, लेकिन मुझे यक़ीन (विश्वास) है कि आज यह बात हमारे सियासी रहनुमाओं (राष्ट्रीय नेताओं) के हाथ में इतनी है जितनी कि पहले कभी न थी कि कुछ समझकर, कुछ समझाकर, कुछ मनवाकर, ऐसी रियासत की नींव रख दे। जब तक यह नहीं होता हम तालीमी काम करने वालों का हाल क़ाबिले रहम (दयनीय) है। हम कब तब इस सियासी (राजनीतिक) रेगिस्तान मे हल चलायें? कब तक शुबहा और बदगुमानी (संशय और भ्रम) के धुएँ मे तालीम को दम घुट-घुटकर सिसकते देखे, कब तक हम इस डर से थर्राते रहें कि हमारी उम्र भर की मेहनत और उम्र भर की मुहब्बत (प्रेम) को कोई एक सियासी हिमाकत (राजनैनिक मूर्खता) और सियासी ज़िद भस्म कर देगी। हमारा

काम भी कोई फूलों की सेज तो है नहीं। इसमें भी बहुत मायूसियाँ (निराशाएँ) होती हैं और अक्सर दिल टूटता है, फिर जब हमारे कदम डगमगायें, तो हम कहाँ सहारा ढूँढ़े ? क्या उस समाज में जिसमें भाई-भाई एकदिल नज़र नहीं आते, कोई क़दर (आदर्श) आख़िरी क़दर (आदर्श) मालूम नहीं होती ? जिसमें कोई गीत नहीं जो सब मिलकर गायें, कोई त्यौहार नहीं जो सब मिलकर मनायें, कोई शादी नहीं जिसे सब मिलकर रचायें, कोई दुख नहीं जिसे सब बटायें। हमारी यह मुश्किल दूर कीजिये और जल्द कीजिये। अब भी बहुत देर हो चुकी है, और देर न जाने क्या दिन दिखाये।

मैंने राजेन्द्र बाबू के यहाँ होने का फ़ायदा उठाकर ये जो बातें कहीं, वह मैं जानता हूँ कि आप सबके दिल की गूँज हैं। लेकिन राजेन्द्र बाबू कुछ न करें, यानी सियासी रहनुमा (राजनीतिक नेता) कुछ न करें, या न कर सकें तो क्या हमें थककर बैठ जाना चाहिए ! हो सकता है कि थकावट हममें इतना दम न छोड़े कि हम कुछ कर सकें। मगर जब तक ऐसा नहीं है, इस बात का ख़्याल भी अच्छा नहीं लगता। अगर हमको भरोसा है कि बुनियादी तालीम का काम हमारी क़ौम के लिये एक ज़रूरी काम है, तो हमें बैठे-बैठे रियासत का मुँह ताकना न चाहिए कि जब यह दुरुस्त हो जाय और जब ऐसी रियासत बन जाय, जो अपने कन्धों पर सब शहरियों (नागरिकों) की तालीम का बोझ उठा सके, तो उस वक्त हम भी उसकी मदद करेंगे। नहीं, अगर हम आज ही से इस अच्छे क़ाम में लगे न रहेंगे, तो शायद उस वक्त भी अपनी बे-समझी और नातजुर्बेकारी (अनभिज्ञता) से काम को बिगाड़ेंगे। अच्छी से-अच्छी रियासत भी तो अपने एक इशारे से वह चश्मे (सोते) नहीं बहा सकती जिसके सोते (स्रोत) पहले से रिसते न हों। इसलिए इस काम को तो चलाना ही है। और इस तरह चलाना है कि जब कोई हुकूमत बुनियादी तालीम को हाथ में लेना चाहे, तो वह यह न कह सके कि हम जानते नहीं कि यह काम कैसे होगा और हो भी सकेगा कि नहीं। यही नहीं, जब हुकूमतें इस काम को सँभाल लें और इसे हमारी मंशा के माफ़िक (इच्छानुसार) चलायें तो क्या उस वक्त हमारा काम खतम हो जायेगा ? मैं तो समझता हूँ कि नहीं। कोई रियासत ऐसी नहीं होती, जिसमें तरक्की (उन्नति) की ज़रूरत न हो। हर अच्छी रियासत, अगर सच्चाई और

नेकी पर उसकी बिना (नींव) है, अच्छी से और अच्छी होती जाती है। आदमी के इदारों (संस्थाओं) का यही हाल है। आगे बढ़ते हैं, नहीं तो पीछे हटना होता है। अच्छी रियासत होती ही वह है जिसके शहरी (नागरिक) अपनी ज़िन्दगियों से उसे बराबर बेहतर बनाते जायें। इसलिए अगर रियासत ने बुनियादी तालीम के काम को अपने हाथ में ले लिया, तब भी, अच्छे, समझदार और तालीम (शिक्षा) के काम से लगाव रखनेवाले लोगों की फ़ौज-की फ़ौज इस तालीम को बेहतर बनाने में हुकूमत के मदरसों (पाठशालाओं) के बाहर भी लगी होगी। वे लोग ऐसे तजुर्बे (प्रयोग) कर सकेंगे, जो हुकूमत शायद अपने काम के फैलाव की वजह से न कर सके, और वे अपने तजुर्बों (प्रयोगों) से, उनकी सफलताओं से हुकूमत के फैले हुए काम को नई राहें दिखा सकेंगे। मुख़्तसर (संक्षेप) यह कि गैर-सरकारी (निजी) लोगों पर काम का बोझ आज भी है और कल भी रहेगा। सियासी अदल-बदल (राजनीतिक परिवर्तन) होते रहेंगे मगर बुनियादी तालीम का काम चलेगा। कभी हुकूमत के हाथों और कभी हुकूमत के बग़ैर। बुनियादी तालीम की तजवीज़ (योजना) में जो चीज़ें बुनियादी हैं उन्हें अब हमारी क़ौम, जहाँ तक मैं समझता हूँ, हाथ से नहीं जाने देगी। पहली बात तो यह कि जब कभी हमारे मुल्क में ऐसी हुकूमत होगी, जो सबकी भलाई एकसाँ (समान) चाहेगी, जो हिन्दू-मुसलमान, अमीर-ग़रीब, हिन्दुस्तानी-अहिन्दुस्तानी में फ़र्क (भेद) न करेगी, और जो सबकी रज़ामन्दी से और सबकी भलाई के लिये होगी, तो वह अपने सब लड़के-लड़कियों के लिये कम से कम सात साल की मुफ़्त तालीम का इन्तज़ाम (प्रबन्ध) करेगी और इसे लाज़िमी (अनिवार्य) बनायेगी। मैंने कम-से-कम सात साल कहा। उस रियासत के साधन तो शायद इस मुद्दत (अवधि) को और बढ़ायेंगे। लेकिन अब किसी ज़िम्मेदार (उत्तरदायी) हुकूमत में अपर-प्राइमरी और लोअर-प्राइमरी इब्तदाई (प्रारम्भिक) काम के चक्कर में आकर क़ौम कभी सात साल से कम मुद्दत (अवधि) की मुफ़्त लाज़िमी (अनिवार्य) तालीम पर राज़ी न होगी।

दूसरी बात जो इसी तरह आख़िरी तौर पर तय (निश्चित) समझनी चाहिए यह है कि सात साल की तालीम मादरी ज़बान (मातृभाषा) में होगी। तीसरी बात जो मेरी राय में इन्हीं दो की तरह कभी हाथ से न दी जायगी, वह यह है कि

तालीम के इन सात साल मे काम को बीच की जगह दी जायगी और जहाँ तक हो सकेगा इसके ज़रिये (द्वारा) सिखाने और बताने की और चीज़े सिखाई और बताई जायँगी। इस तीसरी बुनियादी बात का भी मेरी जान मे तो कोई दिल से मुख़ालिफ़ (विरोधी) है नही। मगर यह जरा नई सी बात है। इसलिए इसके समझने मे ख़ुद बुनियादी तालीम का काम करनेवालो को भी दिक्कत (कठिनाई) होती है। आप इजाज़त (अनुमति) दे तो इस वक्त थोड़े-से लफ़्जो (शब्दो) मे अपना ख़्याल बताऊँ कि काम के माने क्या है और हम जो किताबों के मदरसे को काम के मदरसो मे बदलना चाहते है, तो काम से क्या मतलब लेना चाहिए।

काम को तालीम मे दाखिल (प्रविष्ट) करने की चर्चा आज से नहीं, बहुत दिनों से है। मगर जितने मुह उतनी बाते। कोई कहता है काम को उसूल (सिद्धान्त) के तौरपर मानो, इसे मज़मून (विषय) न बनाओ। कोई कहता है कि इसे एक मज़मून बना दो, इसे एक घटा दो, मगर और सब काम ज्यो-का-त्यों रहने दो। कोई कहता है कि काम ऐसा हो कि कुछ दाम भी हाथ आवे। कोई कहता है 'हरकत मे बरकत' है (गति मे प्रगति है), बच्चो को जरा हाथ पैर चलाने का मौका दो, चाहे कुछ बने या न बने। यह कोई मज़दूरों का काम थोडा ही है, यह तो सृजन-शील (Creative) काम है। लेकिन मुझे इन लोगो में से किसी से झगड़ा मोल नहीं लेना है, मै तो सिर्फ अपना ख़्याल ज़ाहिर करना चाहता हूँ।

मेरा ख्याल है कि जब हम तालीम के सिलसिले मे काम का ज़िक्र करें तो हमे वही काम ध्यान मे रखना चाहिए, जिससे तालीम हो, ज़हन की तरबियत (बुद्धि का संस्कार) हो, आदमी अच्छा आदमी बने। मै समझता हूँ कि आदमी का ज़हन (बुद्धि) अपने किये को परख कर उसके अच्छे बुरे पर नज़र करके, तरक्क़ी (उन्नति) करता है। और आदमी जब कुछ बनाता है या कोई काम करता है, चाहे वह काम हाथ का हो या दिमाग़ का हो, तो उस काम से उसे ज़हनी तालीमी फ़ायदा (बुद्धि की शिक्षा का लाभ) उसी वक्त पहुँच सकता है, जब वह उस काम का पूरा-पूरा हक़ अदा करे, उस काम के लिये अपने को ज़रा तजे, (कुछ त्याग करे), अपने ऊपर ज़रा ग़लबा पाये (सयम प्राप्त करे)। काम से तालीमी फायदा वही उठाता है जो उस काम का हक़ अदा करने में उस काम के डिसिप्लिन

(अनुशासन) को अपने ऊपर ओढ़ले। इसलिए हर काम तालीमी काम नहीं होता। काम तालिमी तभी हो सकता है कि उसके शुरू मे ज़हन (बुद्धि) कुछ तैयारी करे। जिस काम में ज़हन को दख़ल (बुद्धि को स्थान) न हो, वह काम मुर्दा मशीन भी कर सकती है। और इससे ज़हन की तालीम व तरबियत (बुद्धि की शिक्षा व संस्कार) नहीं होती। काम से पहले काम का नक़शा, काम का ख़ाका ज़हन (मस्तिष्क) मे बनाना ज़रूरी है, फिर दूसरा क़दम भी ज़हनी (बुद्धि का) होता है, यानी इस नक़शे को पूरा करने के ज़रिये (साधन) सोचना। तीसरा क़दम होता है इनमे से किसी को लेना, किसी को छोड़ देना। और चौथा क़दम है किये हुए को परखना कि जो नक़शा बनाया था, जो करना चाहा था वही किया, और जिस तरह करने का इरादा किया था, उसी तरह किया या नहीं; और नतीजा इस क़ाबिल (योग्य) है या नहीं कि इसे किया जाता। ये चार मंज़िलें न हों तो तालीमी काम हो ही नहीं सकेगा। लेकिन अगर ये चारों हों भी, तब भी हर काम तालीमी नहीं हो जाता। हर ऐसे काम से कुछ हुनरमंदी (कौशल) हो, चाहे ज़हन (बुद्धि) की, चाहे जबान की। लेकिन हुनरमंदी (कौशल) तालीम नहीं है। तालीम पाये हुये आदमी की जो तसवीर हम सबके सामने आती है, उसमें ख़ाली हुनरमन्दी का रंग नहीं होता। हुनरमन्द (कुशल व्यक्ति) चोर भी होते हैं, हुनरमन्द धोखा भी देते हैं, हुनरमन्द सच को झूठ भी दिखाते हैं। ऐसी हुनरमन्दी (कौशल) तो तालीम का मक़सद (ध्येय) नहीं हो सकता। तालीमी काम वही काम हो सकता है, जो किसी ऐसी क़द्र की ख़िदमत (आदर्श की सेवा) में किया जाय, जो हमारे स्वार्थ से ऊपर हो और जिसे हम मानते हों। जो अपने ही ग़र्ज़ (स्वार्थ) का काम करता है, वह हुनरमन्द (गुणी) ज़रूर हो जाता है मगर शिक्षित नहीं होता। जो क़द्रों की खिदमत (आदर्श की सेवा) करता है, वह तालीम पा जाता है। क़द्र की सेवा में आदमी काम का हक़ अदा करता है, अपना मजा (आनन्द) नहीं ढूँढ़ता। इससे वह आदमी बनता है। अपना अख़्लाक (सदाचार) संवारता है—इसलिये कि सदाचार (अख़्लाक) और है क्या, सिवा इसके कि जो क़द्रें (आदर्श) मानने की है उनकी सेवा में आदमी अपनी ख़्वाहिशों (इच्छाओं), लालचों और मज़ों को दबाये और इस क़द्र (आदर्श) की पूरी-पूरी सेवा करे। और इस सेवा का जो हक़ है उसे पूरा-पूरा अदा करे। काम की यह सिफ़त (विशेषता) हाथ के काम में भी हो सकती है और दिमाग़ (मष्तिक)

के काम में भी। और हाथ का काम भी इससे ख़ाली हो सकता है और मस्तिष्क का काम भी। सच्चे काम का मदरसा वही है जो बच्चे मे काम से पहिले सोचने और काम के बाद जॉचने और परखने की आदत डाले, ताकि काम से उसकी आदत-सी हो जाये कि जब कभी कोई काम करे—हाथ का या दिमाग़ का—उसका पूरा-पूरा हक़ अदा करने की पूरी-पूरी कोशिश करे। काम को तालीम का ज़रिया (साधन) बनानेवालों को हरदम याद रखना चाहिए कि काम बे-मक़सद (निरुद्देश्य) नहीं होता। काम हर नतीजे पर राज़ी नही होता। काम बस कुछ करके वक्त काट देने का नाम नही। काम ख़ाली दिल्लगी नही। काम खेल नही। काम काम है, बामक़सद (उद्देश्यपूर्ण) मेहनत है। काम दुश्मन की तरह आप अपना मुहासबा (हिसाब) करता है फिर उसमे पूरा उतरता है तो वह खुशी देता है जो और कहीं नहीं मिलती। काम उपासना है, काम साधन और पूजा है।

लेकिन साधना और उपासना मे भी तो लोग स्वार्थी हो जाते हैं। अपनी जिन्नत (स्वर्ग) पक्की करली, दूसरो से क्या मतलब? काम का सच्चा मदरसा अगर सही तालीम की जगह है, तो काम को भी अकेले की खुदग़र्ज़ी (स्वार्थ) नहीं बनने देता, बल्कि सारा मदरसे का मदरसा एक काम में लगी जमात बन जाता है, जिसमे सब मिलकर काम करते है और सब के काम ही से सबका काम पूरा होता है। सबसे सबका काम निकलता है, और सबके किये बग़ैर काम बिगड़ता है। किसी एक की ग़लती से सबके काम का हर्ज होता है। कमज़ोर को पीछे छोड़कर आगे चल देना मुश्किल होता है। कन्धे-से-कन्धा मिलाकर काम करने मे वे सिफ़त (विशेषताएँ) पैदा होती हैं जिनकी हमारे मुल्क मे बड़ी कमी है। यानी आदमी का आदमी से निबाह कर सकना और जिम्मेदारी का वह अहसास (उत्तरदायित्व की की भावना का अनुभव) जिससे समाज का हर काम हरएक का काम बन जाता है।

और फिर काम का अच्छा मदरसा इस पर ही राज़ी नहीं हो जाता कि उसके बच्चो ने काम से अपनी तरबियत (संस्कार) कर ली। काम से उसके बच्चे एक समाज भी बन गये और उसके फ़र्ज और जिम्मेदारियॉ (कर्तव्य और दायित्व) जानने और समझने ही नही बल्कि बरतने और उठाने भी लगे। बल्कि काम का अच्छा मदरसा उस मदरसे के समाज को भी किसी ऊँचे मक़सद (उच्चाशय) का

सेवक बनाता है, ताकि कहीं यह न हो कि अकेलों की खुदगर्जी (स्वार्थ) से तो बच जायें, मगर इससे बचकर समाजी खुदगर्ज़ी के दलदल (कीचड़) मे फँस जायँ। ग़र्ज़ (साराश) काम का मदरसा अगर बन जाये तो वह अपने बच्चो को इस तरह काम करना सिखा देता है, जैसा कि काम का हक़ है। उनको मिल-जुल कर काम करने का मौक़ा (अवसर) देता है और उनमें यह यक़ीन (विश्वास) पैदा कर देता है कि उनका काम समाज की सेवा है, और फिर इस समाज में भी इस बात की लगन पैदा कर देता है कि आदमी के ख़याल मे अच्छे-से-अच्छे समाज का जो नक़शा आ सकता है उससे उसका समाज रोज़ नज़दीक होता जाये। वह इस बात की बुनियाद डालता है कि समाज मे हर आदमी कोई काम का काम करे। इस काम को अपना समाजी मंसब (कर्तव्य) और अख़लाक़ी फ़र्ज़ (नैतिक कर्तव्य) जाने, और अपने कामो से, अपनी ज़िन्दगी से, अपने समाज को अच्छा बनने मे मदद दे।

अगर कभी हमारा समाज अच्छा समाज बन गया तो ऐसे मदरसो बग़ैर कैसे चैन लेगा। लेकिन जब तक पहले से मदरसे न होंगे, वह समाज आसानी से बन कैसे जायेगा? इसलिए जिनसे बन पड़े, ऐसे मदरसे बनाये। मेरी दरख़्वास्त (निवेदन) सिर्फ़ आप से नहीं है, जो बुनियादी तालीम के साथी है। उनसे भी है जिन्होंने दिल से बुनियादी तालीम की तजवीज़ (योजना) को बुरा जाना है। मै उनसे सिर्फ़ यह कहना चाहता हूँ कि बुनियादी तालीम अगर वही चीज़ है, जो मैंने अभी बयान की तो आप इसके मुखालिफ (विरोधी) कैसे हो सकते है? जरूर है कि किसी और चीज़ ने आपको उसका मुख़ालिफ़ (विरोधी) बनाया हो। शायद आपको बुनियादी तालीम के उस निसाब (पाठ्यक्रम) मे, जो एक निजी कमेटी ने बनाया था, कुछ बाते न भायी होंगी। कुछ बाते आपके नज़दीक इसमे कम होगी। कुछ ऐसी होगी जिन्हे आप नापन्सद करते होगे। मगर निसाब (पाठ्य-क्रम) बुनियादी तालीम की स्कीम नही है। निसाब उसूल (सिद्धान्त) नही है। निसाब ऐसा नहीं कि बदला न जा सके। निसाब पेश करते वक्त भी इस निसाब के बनानेवालो ने खुद यह कह दिया था कि यह इम्तहानी और आज़मायशी (प्रयोगात्मक) चीज़ है। इसपर आज तक कोई आधी दर्जन कमेटियों ने ग़ौर और बहस कर करके कुछ-कुछ घटाया बढ़ाया है, और बहुत कुछ मान लिया है।

लेकिन यह मानना भी कोई आखिरी (अन्तिम) बात नहीं है। अभी दो दिन इसी कॉन्फ्रेंस में इस निसाब पर बहस होगी, और न जाने इसके कितने ऐब (दोष) सामने आयेंगे। लेकिन इन ऐबों की वजह से तजवीज़ (योजना) के बुनियादी उसूलों (सिद्धान्तों) को तो, जो मेरी राय में सही और दुरुस्त हैं, छोड़ न देना चाहिये। इसमें तो छोड़नेवाले ही का नुक़सान है। इन उसूलों को सामने रखकर दूसरा निसाब बनाइये। इसे कुछ मदरसों में आज़माइये और खुद अपने नतीजों को परखिये। अच्छा होगा, तो दूसरे भी इससे फायदा उठायेंगे। और अगर आप ग़लती पर होंगे तो ग़लती समझ में आ जायगी। शायद आप इस तजवीज़ (योजना) को इस वजह से नापसन्द करते हों कि जिन्होंने इसे बनाया आपको वे लोग पसन्द नहीं हैं। लेकिन अच्छी और ठीक बात तो अच्छों का खोया हुआ माल है। जहाँ भी हो, वे उसे उठा लेते हैं। इस बात से आप क्यों अपने फैसले (निर्णय) पर असर डालते हैं कि पहले यह तजवीज़ (योजना) किसने बनाई और कहाँ बनाई और किन लोगों ने इसको पहले माना। नामों की न अन्धपूजा ही करनी चाहिए और न नामों से यों भड़कना चाहिए।

मुझे माफ़ कीजिए, मैंने आपका बहुत-सा वक्त ले लिया। मैं दिल से आप सबका खैर मुकद्दम (स्वागत) करता हूँ। आपके सामने तीन दिन खासा मेहनत का काम है। फिर इन तीन दिनों के बाद और भी मेहनत आपके लिये है। यानी यहाँ जो कुछ सोचा जायगा, उसे करना है। अगले साल फिर अपने काम के नतीजों को परखना होगा। और जिस तरह हम अपने काम के मदरसों में बच्चों को काम से अपनी तालीम देना चाहते हैं, उसी तरह खुद अपने काम से अपनी तालीम का काम लेना होगा। खुदा हमें तौफ़ीक़ (प्रेरणा) दे कि हम अपने काम से उसको अच्छा चाकर बना सकें। उससे दुआ है "कि हमें सीधी राह दिखाये, उन लोगों की राह पर जिन पर उसने इनाम (कृपा) की, और उनकी राह से बचाये जो सीधे रास्ते से भटक गये और जिनसे वह नाखुश हुआ।"

राजेन्द्र बाबू का भाषण

सम्मेलन का उद्‌घाटन करने के लिए मुझे बुलाकर आपने मेरा जो आदर किया है, उसके लिए मैं आपका आभार मानता हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि मुझे इस आदर का कोई हक़ नहीं है जब तक कि मैं भी बुनियादी तालीम के काम से वही गहरी दिलचस्पी न लूँ, जो इस सम्मेलन मे आनेवाले भाई और बहनों ने ली है। मैंने अपनी कमी को महसूस करते हुए भी इस बुलावे को इस उम्मीद पर स्वीकार कर लिया है कि जिन लोगो ने मुझे यह सम्मान दिया है, वे इस हक़ की बहुत गहरी जाँच-पड़ताल करने की परवाह नहीं करेंगे।

सन् १९३७ में 'हरिजन' में कुछ लेख लिखकर गाधीजी सबसे पहले इस योजना को देश के सामने लाये। वे पश्चिम के शिक्षा-शास्त्रियों की किताबें पढ़कर अपने नतीजों पर नही पहुँचे थे। बल्कि उन्होने मुल्क के भयानक अज्ञान को देखकर इस बात की सख्त ज़रूरत महसूस की कि शिक्षा को सारे देश मे फैलाया जाय। लेकिन उन्हें यह मालूम था की सरकार की वर्त्तमान आर्थिक हालत इस योग्य नहीं है कि शिक्षा की वर्त्तमान पद्धतियों को चलाकर उसे देश मे सार्वजनिक किया जा सके। उन्हें यह भी मालूम था कि बच्चों की शिक्षा का जो तरीक़ा आज जारी है, वह कितना बेकार है और उसमे कितना समय और काम नष्ट होता है। इसलिए उन्होंने यह सोचा कि शिक्षा को अपना बोझ खुद उठाने के योग्य होना चाहिए, ताकि अमीर-ग़रीब दोनो के लिए वह काम की हो सके।

कोई शिक्षा व्यावहारिक रूप मे उस वक्त तक अच्छी नहीं कही जा सकती, जब तक वह बच्चों को हाथ, पॉव व आँखो को अच्छी तरह उपयोग करने का अवसर न दे। गाधीजी खुद ही इन नतीजों पर पहुँचे थे, लेकिन ये ख़याल उनके लिये बिलकुल नये नहीं थे, क्योंकि इससे पहले सन् १९२१ में असहयोग-आन्दोलन के ज़माने मे जो राष्ट्रीय स्कूल जारी किये गये थे, उनके बारे में गाधीजी का खयाल था कि उनमे कताई को एक खास विषय की हैसियत से जगह दी जाय। उस ज़माने मे गाधीजी ने इस विषय पर जो कुछ लिखा है, उसे देखने से पता चलता है कि उनका ख़याल था कि शिक्षा को कताई के ज़रिये अपने पाँव पर खड़े होने के योग्य बना देना चाहिए। सन् १९२१ मे जो स्कूल

खोले गये, उनमें से कुछ स्कूलो ने यह प्रयोग किया भी। लेकिन उस वक्त तक कताई के बारे मे लोग इतनी बाते नहीं जानते थे और उन्हे इसका अनुमान नहीं था कि कताई से व्यावहारिक रूप में कितना फ़ायदा होना संभव है।

इस सिलसिले मे कुछ ऐसे लोगों ने प्रयोग किये, जो इस दस्तकारी के बारे मे सिवाय इसके और कुछ नहीं जानते थे कि वह एक मामूली दस्तकारी है। इसका नतीजा यह हुआ कि ये राष्ट्रीय स्कूल बस थोड़े दिन तक कताई के स्कूलों की तरह चलकर दूसरे स्कूलों की तरह हो गये। इनमे और दूसरे स्कूलों मे अन्तर यही था कि इन्हे सरकारी सहायता नही मिलती थी और इनमे पढनेवालो के विचार मे ज़रा स्वतन्त्रता होती थी।

सन् १९३७ तक कताई ने बहुत उन्नति कर ली थी। बहुत-से समझदार काम करनेवालों ने अपनी मेहनत से इसकी एक विधिबद्ध कला और इसके बहुत से औज़ार बनाये और इसके बारे में बहुत-सी विस्तृत और व्यावहारिक बातें जमा हो गयी। अमली प्रयोग से जो कुछ प्राप्त हुआ था, उसकी मदद से गाधीजी ने कताई की दस्तकारी के द्वारा तालीम देने के बारे मे ज़्यादा आत्मविश्वास से लिखा। उनकी लिखी हुई बातों पर हर तरफ़ बहसे शुरू हुई। ये बहसें कुछ तो काम की थीं, कुछ का आधार अज्ञान पर था। कुछ के पीछे ग़लत भावनाएँ छिपी हुई थीं और कुछ में ऐसी गंभीरता थी, जिनके पीछे सशय और सदेह छिपा हुआ था।

वर्धा मे सम्मेलन बुलाया गया, जिसमे शिक्षा का काम करनेवालों और ख़ासकर राष्ट्रीय शिक्षा से दिलचस्पी रखनेवालो को बुलावा दिया गया। इस सम्मेलन में कई प्रान्तो के शिक्षा-मन्त्री भी सम्मिलित हुए। सम्मेलन ने एक कमेटी बनाई। इस कमेटी ने डा० जाकिर हुसैन की अध्यक्षता मे एक योजना तैयार की। यह योजना उस वक्त से वर्धा-योजना या ज़ाकिर हुसैन कमेटी की रिपोर्ट के नाम से प्रसिद्ध हुई। बहुत से लोगों को ताज्जुब भी हुआ कि जो चीज़ सिर्फ़ कताई के रंग में डूबे हुए एक आदमी के दिमाग़ से निकली थीं, उसका समर्थन शिक्षा के साहित्य और बच्चों की शिक्षा से दिलचस्पी रखनेवाले पश्चिम के सारे मनोविज्ञान के शास्त्रियो की कही हुई बातो से हो रहा है। हममें से बहुत-से ऐसे हैं, जो किसी बात को उस वक्त तक सच नहीं समझते, जब तक उस बात

का समर्थन अमेरिका और यूरोप के किसी बड़े आदमी की वाणी से न होता हो। ऐसे सशय रखनेवाले लोगो को मालूम हो गया कि पश्चिम का नया साहित्य हर जगह इस बात का समर्थन कर रहा है। इस तरह लोगो ने इन नयी चीज़ो की रोशनी मे इस योजना को परखना और जॉचना शुरू कर दिया।

जहॉ तक मै अनुमान कर सका हूँ, गाधीजी की इस योजना में तीन ख़ास बाते थी :—

पहली यह कि शिक्षा का अर्थ यह नहीं कि बच्चा किताबो से या किसी और तरह कुछ बातो को रटकर अपने दिमाग़ मे जमा कर दे। बल्कि शिक्षा वह है जो बच्चो को इस बात का अवसर दे कि वे अपनी स्वाभाविक शक्तियो से काम लेकर उन्हे उन्नति करने का मौक़ा दे। इसलिए शिक्षा वही अच्छी है, जिसमे बच्चा अपने हाथ पॉव हिला सके या दूसरे शब्दों मे यह कि अच्छी शिक्षा वह है, जिसमे बच्चा 'करके सीखता' है। और यह शिक्षा किसी दस्तकारी के ही द्वारा हो सकती है।

दूसरी बात यह कि शिक्षा बच्चे की मातृभाषा मे होनी चाहिए। और तीसरी यह कि अगर शिक्षा को सार्वजनिक बनाना और फैलाना है, तो उसे अपने पाँवो पर खड़े होने के योग्य होना चाहिए। अगर ऐसा न हो, तो इस शिक्षा का रूप एक स्वप्न से ज्यादा नहीं।

पहली दो बातें तो ऐसी है, जो कि हमे पश्चिम के नये से-नये शिक्षा के सिद्धान्तो मे भी बिलकुल इसी तरह मिलती है जैसी हमारी योजना मे, और इस-लिए इसके बारे मे उन लोगों की तरफ से कोई आपत्ति नही हुई, जो अपने हर विचार के लिए पश्चिम के आगे हाथ फैलाते है।

इस तरह आपत्तियॉ तो बन्द हो गयीं, लेकिन लोगो की ग़लत भावनाएँ इतनी जल्दी समाप्त नहीं हो सकती है। इसलिए लोग इस योजना को अब तक यह कहकर बुरा प्रमाणित करने की कोशिश कर रहे है कि इस योजना मे स्कूल सिर्फ़ कताई के स्कूल बनकर रह जाते है, यद्यपि यह बात बार-बार कही जा चुकी है कि हमने अपनी योजना में कताई को सिर्फ़ इसलिए ख़ास जगह दी है कि बरसों की मेहनत के बाद बहुत-से सच्चे और समझदार काम करनेवालो ने इस पर सोच-विचार और मेहनत करके पिछले बीस बरसो मे इसकी वैज्ञानिक तरीक़े से

उन्नति की और उसकी एक नियमित कला बनाई। इसके अलावा एक बात यह भी है कि यह दस्तकारी ऐसी है, जिसे आसानी से सार्वजनिक बनाया जा सकता है, क्योंकि इसके बहुत से अच्छे सिखानेवाले मौजूद है। फिर भी यह कभी नहीं कहा गया कि स्कूल मे तो बस इसी दस्तकारी से काम लेना चाहिए। हम तो यह कहते है कि दूसरी ऐसी दस्तकारियो से भी काम लेना जरूरी है और सच पूछिये तो कताई के अलावा बहुत-सी दस्तकारियॉ है, जिन्हे स्कूलों मे चलाया गया और उनमें सफलता प्राप्त हुई।

इस योजना का तीसरा हिस्सा ऐसा है, जिस पर उन लोगो की तरफ़ से भी आपत्तियॉ उठायी गयी हैं, जो दूसरी हैसियतो से इस योजना के साथ सहानुभूति रखते थे। ये लोग कहते थे कि अगर इस बात पर ज़ोर दिया जाय कि बच्चे अपने काम से कमायें तो इस बात का डर है कि स्कूल कारखाने बनकर रह जायँगे और इस तरह बजाय इसके कि बच्चे स्कूलों में शिक्षा प्राप्त करे, ये स्कूल ऐसी संस्था बन जायँगे जहॉ बच्चो की मेहनत से लाभ उठाया जायगा। इसलिए इस योजना के आर्थिक पहलू से नज़र हटाकर इस बात पर ज़ोर दिया जाय कि यह योजना इसलिए अच्छी है कि वह बच्चो को दस्तकारी के ज़रिये शिक्षा देती है। इसमें संदेह नहीं कि यह बात ठीक थी, लेकिन उसके साथ साथ हम यह सोचने पर भी मजबूर है कि जब से योजना के आर्थिक पहलू को पीछे डाल दिया गया है, उसके बहुत ज्यादा फैलने और सार्वजनिक होने की संभावना भी बहुत कम हो गई है। लेकिन मुझे उम्मीद है कि काम के नतीजो और प्रमाणो से हमे इस बात का अनुमान हो जायगा कि इस योजना का आर्थिक पहलू इतना ज़रूरी है कि अगर हम बुनियादी शिक्षा को सार्वजनिक बनाना चाहते हैं तो इस पहलू की तरफ़ और ज़्यादा ध्यान देने की जरूरत है।

भारत सरकार की सेन्ट्रल एडवाइज़री बोर्ड आफ एज्युकेशन ने एक कमेटी बनाई कि वह योजना के बारे मे अपनी राय दे। इस कमेटी ने भी इस योजना के मूल सिद्धांतो को स्वीकार किया। इसके बाद से संदेह और ग़लत भावनाओ के बादल धीरे धीरे हटने लगे, और अब इस योजना को हिन्दुस्तान के सब शिक्षा-शास्त्रियों ने पसंद करना शुरू कर दिया है।

मध्यप्रान्त और यू० पी० की सरकारो ने इस योजना को अपने शिक्षा के

कार्यक्रम का एक हिस्सा बना लिया है । उनके पास जितना सामान और जितने पढ़ानेवाले मौजूद थे, उसके हिसाब से जितने स्कूल आसानी से खुल सकते थे, खोल दिये गये और शिक्षको की ट्रेनिंग का भी प्रबन्ध किया गया । इस योजना की सफलता के लिये सबसे ज़्यादा ज़रूरत अच्छे शिक्षकों की है । इन दो प्रान्तों में भी अच्छे शिक्षको की कमी के कारण इस योजना को बहुत स्कूलों में जारी नहीं किया जा सका । इसलिए स्कूलो के खोलने मे बड़ी सावधानी से काम लेना पड़ा । बंबई, बिहार और मध्यप्रान्त ने भी इस योजना को प्रयोग के तौर पर कुछ ख़ास इलाकों मे थोड़े-से स्कूलो मे जारी किया । यह प्रयोग अब तक वहाँ चल रहा है । उड़ीसा ने इस योजना को प्रयोग के तौर पर स्वीकार किया और इसे १५ स्कूलों में शुरू किया । लेकिन ६ या ७ महीने तक चलाकर सरकार ने इसे यह कहकर बन्द कर दिया कि यह प्रयोग सफल नही हुआ । काश्मीर ने यह प्रयोग वहाँ के शिक्षा-विभाग के सुयोग्य डायरेक्टर प्रो० सैयदैन की निगरानी में शुरू किया है । यह सफलता से चल रहा है । इसमें कुछ आश्चर्य नही, क्योंकि उन्होंने इस योजना की तैयारी और विकास में शुरू से ही बड़ा हिस्सा लिया है । कुछ निजी सस्थाओ ने भी इस प्रयोग को अपने स्कूलो मे चलाना शुरू किया । इन संस्थाओं मे भी जामिया मिलिया, जहाँ आज इकट्ठे हुए है, सबसे आगे है । इसके अलावा मच्छलीपट्टम की आन्ध्र जातीय कलाशाला, पूना की तिलक राष्ट्रीय विद्यापीठ और काँगडी का गुरुकुल भी इस प्रयोग को अपने यहाँ चला रहे है ।

पिछली दफ़ा जब यह सम्मेलन अक्तूबर सन् १९३९ में पूना में हुआ था, उस वक्त यह योजना या तो सरकारी पालिसी की हैसियत से या सिर्फ प्रयोग के तौर पर भिन्न-भिन्न प्रान्तो रियासतों और सस्थाओ मे, जिनका मैंने अभी ज़िक्र किया, प्रारम्भ की जा चुकी थी । इस सम्मेलन का ध्येय यह था कि भिन्न-भिन्न प्रान्तो और संस्थाओं में जो अनुभव हुए हैं, या जो कठिनाइयाँ महसूस की गई हैं, उनके बारे मे आपस मे बहस करके उनपर ग़ौर किया जाय । इसके बाद यह उम्मीद थी कि यह सम्मेलन आम तौर पर हर साल हुआ करेगा और यह प्रयोग जो इतने ज़्यादा सोच-विचार तथा समझ-बूझ के बाद शुरू किया गया है, बहुत दिन तक जारी रहे और इस तरह इस दृष्टि से कि दस्तकारी के जरिये शिक्षा देकर बच्चो को तरक्की दी जा सकती है, उसके बारे मे वैज्ञानिक तरीको से नतीजे निकाले

जा सकेंगे और यह बात मालूम की जा सकेगी कि काम की आमदनी से तालीम को किस हद तक अपने पॉव पर खड़े होने के योग्य बनाया जा सकता है। यह स्पष्ट है कि इस शिक्षा मे बच्चों को सात साल तक तालीम देने पर ज़ोर दिया गया है। उसकी सफलता या असफलता का अनुमान सात महीने में ईमानदारी से नहीं लगाया जा सकता। लेकिन उड़ीसा की सरकार ने ऐसा किया। हम यह अच्छी तरह महसूस करते हैं कि कोई सरकार इस तरह के प्रयोग को चलाने से हिच किचाती है तो कोई ताज्जुब की बात नही। लेकिन यह बात मुश्किल से किसी की समझ मे आयेगी कि सिर्फ सात महीने के प्रयोग के बाद किसी योजना की अच्छाई या बुराई पर किस तरह फैसला दिया जा सकता है। फिर भी इस बात से कुछ संतोष होता है कि दूसरे प्रान्तों की सरकारें अब तक इस योजना को चला रही है।

मुझे विश्वास है कि इस सम्मेलन में भी आप उन अनुभवों की चर्चा करेंगे, जो आपने पिछले अठारह महीनो मे प्राप्त किये है और इन अनुभवो की बुनियाद पर अमली (व्यावहारिक) तौर से इस योजना के मूल्य का अन्दाज़ लगा सकेंगे। मुझे इस बात का भी यक़ीन है कि आपके अनुभवों से आपके सामने इस योजना की बुराइयो और दिक्कतों के साथ उसकी अच्छाइयॉ भी आयेंगी और आप अपनी दिक्कतों को दूर करने और अच्छाइयो से फायदा उठाने की कोशिश करेंगे।

जैसा कि इससे पहले बार-बार कहा जा चुका है—इस योजना की थोड़ी-थोड़ी बातो को सामने लाकर उन्हें अपने अनुभव की रोशनी मे परखना ज़रूरी है। लेकिन मुझे विश्वास है कि इस योजना के बुनियादी सिद्धान्त बिलकुल पक्के हैं और मैं जानता हूँ कि आपके अनुभवों ने, हालाकि वे अभी बहुत थोडे दिन के और बहुत सीमित हैं, आपको भी उनके पक्का होने का यक़ीन दिला दिया होगा।

हमें दो बाते याद रखनी हैं। हमारे लबे-चौड़े मुल्क मे, जिसकी आबादी क़रीब ४० करोड़ है कोई सात लाख गॉव हैं। अगर हम यह समझ लें कि सौ आदमियो मे १५ ऐसे बच्चे होंगे जिनकी उम्र ७ से १४ बरस तक होगी और जिनके लिए यह योजना बनाई गई है, तो हम इस नतीजे पर पहुॅचते हैं कि हमें करीब क़रीब छ. करोड़ बच्चों के लिए पढ़ाई की सहूलियतें निकालनी हैं। मौजूदा स्कूलों में और तालीम के मौजूदा तरीक़े के अनुसार इतने बच्चों की शिक्षा का खर्च उठाना प्रान्तीय सरकारो के बस की बात नहीं। इसलिए कोई ताज्जुब नहीं कि

सरकारें इसे प्राथमिक शिक्षा की एक सार्वजनिक योजना की हैसियत से चलाने मे हिचकिचाती हैं।

इस योजना ने हमारे लिये एक नई राह खोल दी है और इसे आम बनाना हमारी राजनीति का एक अमली काम हो गया है। इसलिए हमे चाहिए कि अपनी सहानुभूति और मदद से इसे फलने-फूलने और उन्नति करने का ज़्यादा से-ज़्यादा अवसर दें। इसी लिए हमे इस बात को अव्यावहारिक समझकर हँसना नहीं चाहिए कि तालीम को अपने पॉव पर खड़े होने के योग्य बनाया जाय। दूसरी तरफ़ हमे इस बात से डरकर भी नहीं हिचकिचाना चाहिए कि हमारे स्कूल कारखाने बनकर रह जायँगे या उनमे बच्चों की मेहनत से ग़लत फायदा उठाया जायगा, या हमारे स्कूलो की पैदावार हमारी औद्योगिक व्यवस्था को उलट-पलट कर देगी। पहली बात को हम रोक सकते हैं और मेरा ख़्याल है कि हमारे स्कूलों मे इसकी अच्छी तरह रोक की भी गई है और यह ज़रूरी नहीं कि दूसरी बात हमें इतना मजबूर कर दे कि हमे बच्चों की तालीम से ज़्यादा अपने उद्योग-धंधों का ख़्याल रखने की जरूरत हो। मै यह नहीं चाहता कि इस योजना के साथ कोई रियायत बरती जाय। मै तो चाहता हूं कि इसका ठीक-ठीक विचार किया जाय और मैं जानता हूँ कि आनेवाले जमाने का बनना और बिगडना उन प्रयोगों पर निर्भर है, जो ईमानदारी के साथ किये जायेंगे। मुझे मालूम है कि इस तालीम के ख़र्च का प्रश्न उस वक्त हल हो जायगा, जब हमें अपने प्रयोगों के नतीजे अच्छी तरह मालूम हो जायेंगे।

दूसरी बात हमे यह भी याद रखना चाहिये कि वर्तमान शिक्षा मे समय और रुपया दोनो बहुत ज्यादा नष्ट होते है। जो लडके हमारे प्राइमरी स्कूलों से पास होकर निकलते हैं, उनमें से बहुत ही बड़ी तादाद ऐसी है, जो ऊँचे दर्जों तक नही पहुँचती। जो लड़के ऊँचे दर्जों तक पहुँच जाते हैं, उनमे बड़ी तादाद ऐसे लड़को की है, जो धीरे-धीरे अपनी पढ़ी हुई बातें भूल जाते है। इस तरह स्कूलो मे उन्होंने जो थोड़ी-बहुत बाते सीखी थी उन्हे खो बैठे है। बुनियादी तालीम की योजना इस खराबी को दूर करना चाहती है। चीजो का नष्ट होना यों तो हर जगह बुरा है, लेकिन हिन्दुस्तान जैसा ग़रीब मुल्क तो बिलकुल इस योग्य नहीं कि इस बरबादी को सह सके। इसलिए हमे चाहिए कि हम इस योजना की अच्छी तरह जाँच-पड़ताल करे, जो इस तरह की बरबादी को दूर करना चाहती है।

एक बात और भी है जिसकी तरफ़ मै आपका ध्यान दिलाना चाहता हूँ। हम बच्चो को 'काम करके सीखने' का पाठ दे रहे है और यह चीज़ प्राथमिक शिक्षा में ख़ासकर बहुत फायदे और काम की है। लेकिन आगे चलकर हम यह नहीं कह सकते कि किताबों से बिलकुल काम न ले। इसलिए किताबें भी तैयार करना ज़रूरी है। हमे अब तक एक ख़ास तरह की किताबो की आदत पड़ी हुई है, जो पाठ्यक्रम मे शामिल होती है। मेरा ख़्याल है कि वे किताबें हमारे बुनियादी स्कूलो में काम नहीं दे सकती। हमें अपने स्कूलों के लिये खुद एक साहित्य तैयार करना होगा। बुनियादी तालीम से दिलचस्पी रखनेवाले इस चीज की तरफ से बिलकुल उदासीन नहीं है। बुनियादी स्कूलों के लिये जो किताबे लिखी जायँ, उन्हे विषय और भाषा दोनों मे उन बच्चो की दिलचस्पी के अनुसार होना चाहिए जिनके लिये वे लिखी गई हो। मुझे मालूम नहीं कि तालीमी संघ या किसी दूसरी सस्था ने ऐसे शब्दों की कोई सीमा नियत करने की कोशिश की है या नहीं, जो इन बच्चो की किताबों में इस्तेमाल किये जायँ। बच्चे ज्यों ज्यों बढ़ेंगे, इन शब्दों का खजाना बढता जायगा और इसलिए मुनासिब है कि हम शब्दो को इस तरह सिलसिलेवार जमा करे कि वे हर दर्जे की किताबो मे अलग-अलग काम में लाये जा सकें। बिलासपुर मे रामचन्द्रजी वर्मा इस तरह की कोशिश में लगे हुए है और मै इस मौक़े से फायदा उठाकर सम्मेलन और तालीमी संघ का ध्यान इस काम की तरफ लाना चाहता हूँ कि जब वे बुनियादी तालीम के स्कूलो के लिए किताबें तैयार करावें तब इस बात को सामने रक्खें।

योजना की सफलता बडी हद तक शिक्षकों की योग्यता और लगन पर निर्भर है। उनकी ट्रेनिंग ज़रूरी है और बुनियादी तालीम का फैलाव इसी तरह के सीखे हुए शिक्षको की बढ़ती हुई तादाद के साथ ही सभव है। इन शिक्षकों की सिर्फ़ ट्रेनिंग ही काफ़ी नहीं। हमे यह भी याद रखना चाहिए कि इस योजना मे शिक्षक और बच्चा एक ही मशीन के दो हिस्से हैं। अगर मशीन के एक हिस्से को चलाया जाय, तो दूसरा हिस्सा भी उसके साथ ज़रूर चलेगा। और इसलिए ज़रूरत है कि शिक्षक अपने काम मे समझ-बूझ के साथ दिलचस्पी ले। सिर्फ़ इसी सूरत मे हम उन नतीजों की आशा कर सकते है, जो हमारे सामने है, इसलिए इस योजना को सफल बनाने के लिए हमें उत्साही आदमियों की ज़रूरत है।

ख़ासकर प्रयोग की इस अवस्था मे और भी ज़्यादा। शिक्षकों में जो कुछ कमी है, उसे निगरानी करनेवालो को पूरी करनी चाहिए। और इसलिए ज़रूरी है कि निगरानी करनेवाले (Supervisors) शिक्षक की तरह ट्रेनिंग पा चुके हों, और अपने काम में उसकी तरह ही उत्साही हो।

हमे यह सोचकर बैठे नहीं रहना चाहिए कि यह योजना संशय, संदेह, शंकाओं और आलोचनाओ की मंजिल पार कर चुकी है और अब उसका प्रयोग सच्चे दिल से और ईमानदारी के साथ किया जा रहा है। उड़ीसा का अनुभव हमारे लिए एक चेतावनी है और इससे हम यह सीखते है कि ग़लत भावनाओ को जीतने मे दिन लगते है। हमे इस तरह के अन्यायपूर्ण और अज्ञानपूर्ण फैसलों के लिए भी तैयार रहना चाहिए। लेकिन जब हमें इस बात का यक़ीन है कि यह योजना अच्छी है और इससे देश की बहुत बड़ी भलाई संभव है, तब हमें जमकर और भरोसे के साथ इसे चलाते रहना चाहिए। इस योजना ने अब तक बहुत से निःस्वार्थ और उत्साही काम करनेवालों की सेवा प्राप्त कर ली है। ये लोग तालीम के ऐसे जाननेवाले हैं और इस काम में उन्होने ऐसी लगन से हिस्सा लिया है कि उसे देखकर हमें इस योजना की अच्छाई और कामयाबी का पूरा भरोसा होता है। मुझे विश्वास है कि ज्यों-ज्यों दिन गुज़रते जायँगे और वैज्ञानिक तरीके से जो काम हो रहा है उसके नतीजे हमारे सामने आते जायँगे, तो वह थोड़ी-बहुत विरोधी-भावना भी दूर होती जायगी, जो अब तक लोगों के दिलों में मौजूद है, और लोग इस योजना को धीरे-धीरे अपनाते और आम बनाते जायँगे। वह दिन बड़े गौरव का होगा और वे लोग जो इस काम में लगे हुए हैं और जिनके दिल मे इसे आगे बढ़ाने की लगन है, उनके लिए वह दिन बड़ी खुशी का होगा। मै चाहता हूँ कि आपमें वह शक्ति, दृढ़ता और दूरदर्शिता पैदा हो कि जो काम आपने शुरू कर रक्खा है उसे जारी रक्खे और आगे आनेवाले ज़माने पर आत्म-विश्वास और श्रद्धा से नज़र डाल सके।

मेरी प्रार्थना है कि ईश्वर आपकी सहायता करे और मैं आपसे दरख़्वास्त करता हूँ कि अब आप कॉन्फ्रेंस की कार्यवाही शुरू करें।

दूसरा भाग

बुनियादी स्कूलों का काम

चम्पारन के बुनियादी स्कूल

(मौलवी सिराजुलहुदा)

सन १९३८ ई. मे बिहार की सरकार ने बुनियादी तालीम जारी करने की तजवीज़ पास की और उसके बाद बुनियादी तालीम का एक अलहदा बोर्ड बनाया गया। पटना ट्रेनिंग स्कूल के हेडमास्टर रा. सा. पं. रामशरण उपाध्याय बोर्ड के सेक्रेटरी मुकर्रर हुए और शिक्षकों की ट्रेनिंग का इंतज़ाम भी उन्हीं के सुपुर्द किया गया। शिक्षकों को छ महीने की ट्रेनिग देने के बाद उन्हें चम्पारन के सघन हलको मे काम करने के लिए भेज दिया गया और अप्रैल १९३९ में ३५ बुनियादी स्कूलों में बुनियादी तालीम का प्रयोग शुरू कर दिया गया।

इस हलके के लोग बहुत ग़रीब हैं और इनके बच्चे अपने घरों के जानवर चराने और खेतीबाडी का काम करने में लगे रहते हैं। फिर भी बेचारों की ग़रीबी दूर नहीं होती। ऐसी हालत में ये लोग अपने बच्चों को स्कूल किस तरह भेज सकते हैं। बुनियादी तालीम का प्रयोग शुरू हुआ तो हर तरफ़ से इसका विरोध होने लगा। अमीरों ने सोचा कि इस स्कीम से न जाने क्या क्रान्ति पैदा हो जाय। ग़रीब तो अपनी ग़रीबी से ही लाचार थे। लोगों ने तरह-तरह की ग़लत बातें फैलानी शुरू की, लेकिन इस विरोध के होते हुए भी शिक्षक लोग बडी हिम्मत से अपने काम मे डटे रहे।

शिक्षकों ने स्थानीय लोगों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए नीचे लिखे उपाय काम में लिये—

(१) सयानो की पढ़ाई की व्यवस्था करना।

(२) रोज गाव वालो से मिलकर उनके पुराने विचारो को हटाने की कोशिश करना।

(३) बीमारों की देखभाल करना और उन्हे सलाह और मामूली रोगों मे दवा देना।

(४) गांव वालो के बुरे-भले मे और दुख-दर्द मे सहायता पहुँचाना और उनकी सहायता के लिए हमेशा तैयार रहना।

(५) गांव में पँचायत स्थापित करना।

(६) कमी–कमी बस्तियों की सफाई करना।

(७) जानवरों के थानों, गन्दी जगहों और कुवों पर हिदायतें लिखकर लगाना।

(८) बच्चों में घुलमिल कर उनके दोस्त बन जाना।

इन सब उपायों ने जादू का काम किया। धीरे-धीरे गाववालों का विरोध सहानुभूति में बदल गया और थोड़े ही दिन में शिक्षक उनके मित्र बनकर उन्हें सीधा मार्ग दिखाने लगे। बस्ती वाले भी उनका मान करने लगे। जब शिक्षकों ने इन लोगों को सहमत करके अपना बना लिया, तो फिर बच्चों की शिक्षा की तरफ़ पूरा ध्यान देना शुरू किया। शुरू में विरोध के कारण पाठ्यक्रम में कुछ हेर-फेर की ज़रूरत हुई थी। लेकिन चूँकि इस तरह पाठ्यक्रम का सफल प्रयोग नहीं हो सकता था, इस लिए उसके हर हिस्से पर व्यावहारिक प्रयोग शुरू कर दिया गया। लेकिन एक साल के बाद यह निश्चय हुआ कि पहले ग्रेड में समाज-विज्ञान के सिलसिले में प्राचीन काल के लोगों या दूसरे देशों के निवासियो के जीवन की अपेक्षा आस–पास के लोगों और स्थानीय लोगों के जीवन का हाल बताना ज्यादा अच्छा होगा।

हमारी सब से बड़ी कठिनाई यह है कि बच्चे स्कूलों में नियम से नहीं आते और इसका कारण यह है कि वे अपने घरके काम-धन्धों में लगे रहते हैं। शिक्षक लोग स्कूल के समय से पहले बस्ती में जाकर बच्चों को घरों, गलियों, और खेतों से इकट्ठा करके लाते हैं। इस तरह शिक्षकों का काम भी बढता है और बच्चों के काम में भी ख़राबियाँ पैदा होती हैं। लेकिन हमें आशा है कि कोशिश करने से यह कठिनाई धीरे-धीरे दूर हो जायगी।

हमारे शिक्षक बहुत सबेरे उठकर नित्यकर्म के बाद हर रोज़ के पाठ का ढाँचा तैयार कर लेते हैं। इनमें से एक या दो शिक्षक बच्चों को बुलाने चले जाते हैं। स्कूल में आने के बाद बच्चे शिक्षकों के साथ स्कूल के कमरों और अहाते की सफ़ाई में लग जाते हैं। सफ़ाई हो चुकने पर बच्चे स्कूल के नलके कुवें (Tube-well) के पास एक घेरे में खड़े हो जाते हैं और बारी-बारी से अपने हाथ-पैर धोते हैं। जो बच्चे घर से स्नान करके या मुँह धोकर नहीं आते उन्हें स्नान कराया जाता है या मुँह धुलाया जाता है। अगर उनके कपड़े गन्दे हों तो वे भी धुलवाये

लगभग आधे दोबारा पटना ट्रेनिंग स्कूल मे ट्रेनिंग के लिए बुलाये गये और इनके बदले में एक साल की ट्रेनिंग पाये हुए शिक्षक भेज दिये गये।

प्रयोग के सघन हलके और पटना ट्रेनिंग स्कूल के सम्बन्ध को मजबूत बनाने के लिए ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापक हर दो महीने के बाद हलके मे आते हैं। ये अध्यापक बुनियादी स्कूलो का निरीक्षण करते हैं और वापिस जाने से पहले सब शिक्षकों को जमा करके काम के बारे में अपने विचार प्रगट करते हैं। स्कूल की कमियो को साफ़-साफ़ शब्दों में बता देते है और उन्हें दूर करने के उपाय भी बताते हैं। अगर कोई समस्या उनके सामने रक्खी जाती है तो उसे सुलझाने में सहायता करते हैं और भविष्य के लिए सलाह देते हैं। इस तरह से हमें काम मे बहुत सहायता मिलती है।

स्कूलों में ज़मीन की कोई कमी नहीं। बाग़वानी और खेती का काम आसानी से चल सकता है और चल रहा है। बच्चे और शिक्षक अभी तक केवल बागवानी पर ध्यान देते थे और इसका कारण यह था कि बच्चों की उम्र कम थी और शिक्षक अपने गृहस्थी के कामों मे लगे रहते थे। स्कूलों की ज़मीन बटाई पर दे दी जाती थी। लेकिन अब शिक्षकों की संख्या हर साल बढ़ रही है और बच्चों की आयु भी बढ रही है, इसलिए बटाई का रिवाज बन्द करके खुद खेती का प्रबन्ध किया जा रहा है। स्कूल के बागो में फुलवारी के अलावा साग-भाजी का खेत भी है। इसमे बच्चे अपनी तैयार की हुई खाद देते है। इससे साग-भाजी की उपज बहुत होती है और आस-पास के गृहस्थो को काम की बाते भी मालूम होती रहती हैं। बहुत सी नयी-नयी चीज़े जो इस हलके में कभी पैदा नहीं होती थीं वे अब पैदा होने लगी है, जैसे बूट (हरे चने) मूँगफली वग़ैरा।

हमारे सब स्कूलों के बच्चे कभी कताई की प्रतियोगिता के लिए, कभी नाटक करने के लिए और कभी वाद-विवाद के लिए किसी केन्द्रीय स्कूल में इकट्ठे होते है। वे अपने-अपने शिक्षकों की निगरानी में आते है। एक जगह जमा होने और मिलने-जुलने स उनमे झिझक कम होती है और अच्छी अच्छी आदतें पैदा होती है। बुनियादी तालीम का प्रयोग शुरू होने से पहले बच्चे नासमझ, दुबले, डरपोक और गन्दे थे। बुनियादी तालीम पाते हुए धीरे-धीरे इन बच्चों ने अब काफी उन्नति कर ली है।

बुनियादी स्कूलों के खुलने से पहले यहा के बच्चे और बूढ़े हिन्दुस्तानी भाषा बिल्कुल नहीं जानते थे। लेकिन अब बच्चे आसानी से हिन्दुस्तानी समझते और बोलते हैं। वे अपने विचारों को बोल कर और लिखकर आसानी से प्रगट कर सकते हैं, सवालो का जवाब देते हैं, अपनी शंकाओं को शिक्षकों से दूर करा लेते हैं। वे आपस में मिलते है तो मज़ेदार बातें करते हैं। अपनी बही मे भी दिन भर के काम और सीखी हुई बातों को लिख लेते हैं। उनकी लिखावट भी सुन्दर होने लगी है। छोटी-छोटी कहानियाँ सुनकर वे उनका नाटक खेल सकते हैं और उनका ढाचा बातचीत के रूप में तैयार कर लेते हैं, यद्यपि इन सब कामों में व्याकरण की अशुद्धियाँ अब तक करते हैं।

मातृभाषा के सिलसिले में इस बात का जिक्र जरूरी है कि हमारे हलके में एक ही शिक्षक एक समय में हिन्दी और उर्दू दोनों लिपियो को सिखाने में कहाँ तक सफल हुआ। इसके बारे मे मैं एक शिक्षक का बयान पेश करता हूँ। वह लिखता है—"मैं गौरव के साथ और ज़ोरदार शब्दो में कह सकता हूँ कि यह काम कठिन नहीं है। दूसरे ग्रड के उर्दू पढ़नेवाले और हिन्दी पढनेवाले लड़के एक ही शिक्षक के साथ एक ही समय में बराबर उन्नति कर रहे हैं, यद्यपि मैं यह अनुमान करता हूँ कि पहले ग्रेड में दो लिपियों का सिखाना मेहनत का काम है। जब लड़के लिपि सीख लेते हैं तो दूसरे साल उनका अभ्यास बढाना कठिन नहीं होता। लेकिन ज़रूरत इस बात की है कि शिक्षक दोनो भाषायें अच्छी तरह जानता हो।

शिक्षा क तरीके से भविष्य में एक आसानी की झलक मिलती है। वह यह कि उर्दू पढ़नेवाल बच्चे हिन्दी की संख्यायें और अक्षर और हिन्दी पढ़ने वाले बच्चे उर्दू की संख्याऐं और अक्षर सीख रहे हैं। कभी-कभी शिक्षक किसी एक ही भाषा की संख्या में काले तख्ते पर सवाल लिखता है और बच्चे उसे अपनी भाषा की संख्या मे लिख लेते हैं।

बुनियादी तालीम के पाठ्यक्रम के अनुसार बच्चे गणित में बहुत आगे बढ़ गये हैं। बच्चे अपने काते हुए सूत का औसत निकालना, सूत का नम्बर मालूम करना, मजदूरी निकालना और इस तरह के और सवाल खुद निकाल लेते हैं। उन्हें मामूली तौर पर गणित के साधारण और मिश्र चारों नियमों का ज्ञान भी हो

गया है और वे आसानी से छोटे-छोटे हिसाब कर लेते हैं। बच्चों ने काम करते हुए पहाड़े भी सीख लिये हैं।

दूर-दूर के देशों के निवासियों का जीवन और प्राचीन काल के लोगों की कहानियाँ स्कीम के अनुसार पूरी नहीं बताई गई क्योंकि अब तब उनके पढ़ाने का मौका नहीं आया।

बच्चों को बडों और छोटों के साथ बर्ताव, बोलचाल, अपनी ज़िम्मेदारी को समझना, शरीर और कपड़ों की सफ़ाई, और चीज़ों का ठीक उपयोग करना सिखाया गया है। नागरिकता की शिक्षा जिस हदतक दी गई है वह अब तक ज्यादा सफल इसलिये नहीं हुई कि जिस वातावरण में बच्चे रहते हैं वह अच्छा नहीं है। बच्चे शिक्षकों के साथ सिर्फ छः घंटे रहते हैं और बाकी अठारह घंटे का जीवन स्कूल के जीवन से बिलकुल उल्टा है। इसलिये जबतक बोर्डिंग-स्कूल न हों तबतक बच्चों पर शिक्षा का पूरा-पूरा असर नहीं पड़ सकता।

अच्छे वातावरण के न होने के कारण बच्चे साधारण विज्ञान की बहुत-सी ऐसी मामूली बातें भी नहीं जानते जो उन्हें आम तौर पर जाननी चाहिए। और चूँकि उन्होंने ऐसी बातें पहले कभी सुनी ही न थीं, इसलिये उनके समझने में भी कठिनाई होती है। यही कारण है कि उन्हें पृथ्वी की दैनिक चाल, उसके सालाना चक्कर, चन्द्रग्रहण, सूर्यग्रहण वग़ैरा का हाल नहीं बताया जा सका। बाकी बातें वे पाठ्यक्रम के अनुसार सीख चुके हैं। जानवरों और पौधों की पहचान, उनकी बनावट, भोजन, बढ़ने की जाँच, हवा, पानी वग़ैरा के बारे में भी बच्चे सब बातें जान गये हैं और उनमें नयी बातों के जानने और पूछने का बहुत शौक पैदा हो गया है। स्वास्थ्य-विज्ञान का व्यावहारिक काम हर रोज नियम से होता रहता है। इसलिये वे इस विषय की बातें पाठ्यक्रम के चौथे दर्जे तक की जानते हैं।

ड्राइंग में बच्चे मामूली तौर पर रंगीन या सादी खड़िया से रोज उपयोग में आनेवाली चीजों की शक्लें बना सकते हैं। कुछ स्कूलों में ड्राइंग के द्वारा अपने भाव प्रगट करने का शौक बढ़ रहा है।

जहाँ तक बुनियादी दस्तकारी कताई का सम्बन्ध है, बच्चे पाठ्यक्रम को पूरा नहीं कर सके हैं। इसका कारण बच्चों की कम उपस्थिति, दस्तकारी के लिए

स्कूलों मे पाठ्यक्रम में दिये हुए समय से कम समय देना और ऋतुओ का प्रभाव है। इस हलके में तकली पर कातने की औसत गति आध-घंटे मे जाड़ों मे ५५ तार और गर्मियों मे ४५ तार है। हाँ अलग-अलग बहुत से बच्चे १०० तार से ज्यादा कात लेते है। धुनाई आध-घटे मे २ तोला होती है। पाठ्यक्रम के अनुसार एक घटे मे ढाई तोला होनी चाहिए।

बुनियादी स्कूलो के द्वारा बच्चो के व्यक्तित्व पर बडे अच्छे प्रभाव पडे है (१) वे अपनी जिम्मेदारी समझते है, अपने ऊपर भरोसा करते है, स्कूल मे भर्ती होने के बाद शुरू से ही शरीर की सफ़ाई, क्लास की सजावट, बागवानी, ओटाई, तुनाई, धुनाई, कताई वगैरा सारे काम अपने हाथो से बडी खुशी से करते है। वे किसी काम में भी दूसरे के आगे हाथ नही फैलाते। (२) बच्चे अपनी ज़रूरत की चीजे खुद अपने हाथ से बना लेते हैं। इससे उन्हे अपनी शक्ति का अनुमान हो गया है और कठिन काम करने का साहस पैदा हो गया है। अब वे जटिल कामों से भी नहीं घबराते बल्कि विश्वास और वीरता के साथ कहते है, " मैं इस काम को अच्छी तरह कर सकता हूँ, " और बहुत अंश मे उसे पूरा कर लेते है।

स्कीम के आर्थिक पहलू के सम्बध मे, बोर्ड आफ इंस्पेक्टर्स की नीचे लिखी राय ध्यान देने योग्य है—

" बुनियादी तालीम की एक विशेषता उसकी आर्थिक आमदनी भी है। हम लोगों ने प्रयोग को इस दृष्टि से भी जाचा है और उससे यह पता चलता है कि बुनियादी स्कूल के हर बच्चे की मज़दूरी का औसत १३ आने ६ पाई (१२ आ० ६ पा० कताई से और १ आ० बागवानी से) है। पाठ्यक्रम के अनुसार पहले ग्रेड में हर बच्चे की कमाई २ रु० १० आ० होनी चाहिए। लेकिन इस कम आमदनी से हमें निराश नहीं होना चाहिए क्योंकि इसके कई कारण हैं। हम लोग बच्चों की कम उपस्थिति का ज़िक्र कर चुके हैं। उनकी औसत हाज़िरी १३१ दिन है। लेकिन पाठ्यक्रम में काम के २७० दिन नियत किये गये हैं। दूसरा कारण यह भी है कि दस्तकारी को दो घन्टे से कम समय दिया गया है, हालाँकि पाठ्यक्रम के अनुसार ३ घन्टे २० मिनट होना चाहिए था। अगर ये बातें सामने रख कर बच्चों की कमाई का हिसाब लगाया जाय तो हरेक बच्चे की सालभर की कमाई २ रु० २ आ० ५ पा० होगी। यह कमाई पाठ्यक्रम मे दिये

हुए औसत की ८३% होगी । अगर बच्चों की उपस्थिति पूरी होती और वे काफी अभ्यास करते, तो विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि उनकी कमाई २ रु० ३ आ० से ज्यादा हो जाती ।"

(उर्दू से अनुवादित)

काश्मीर के बुनियादी स्कूल

[जी. ए. मुख्तार]

काश्मीर रियासत के बुनियादी स्कूलों मे बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा का पाठ्यक्रम हरुफ़–ब–हरुफ़ नहीं चलाया जा रहा है । हमारे स्कूलों में सैयदेन कमेटी के बनाये हुए पाठ्यक्रम पर अमल किया जा रहा है । दोनो पाठ्यक्रमों में कोई मौलिक फ़र्क नहीं है, सिवा इसके कि बुनियादी पाठ्यक्रम का रूप आम है और हमारे पाठ्यक्रम पर स्थानीय हालतों का रग चढ़ा हुआ है ।

हमारे स्कूल अनुबन्ध शिक्षा का नियत पाठ्यक्रम पूरा कर सके हैं और शुरू के दो-तीन दर्जों की सफलता उत्साह बढ़ाने वाली है । जिन बच्चों को बुनियादी पाठ्यक्रम के अनुसार शिक्षा दी जा रही है, उनकी मानसिक योग्यता घटने के बजाय काफ़ी तौर पर बढ़ी है । कुछ चतुर विद्यार्थी तो नियत आदर्श से भी आगे बढ़े हुए पाये गये हैं ।

मातृभाषा की पढाई मे बुनियादी स्कूलों के विद्यार्थी साधारण विद्यार्थियों से बहुत आगे हैं । लिखाई, पढ़ाई, और सवाल हल करने की कुशलता तो इनमें साधारण स्कूलों के विद्यार्थियों से निसन्देह बहुत ज्यादा है । विद्यार्थियों में पढ़ाई के लिए दिलचस्पी पैदा करने और बनाये रखने में दस्तकारी ने खूब मदद दी है ।

बुनियादी स्कूलों में बहुत-सी बातों से साफ़ पता लग जाता है कि जहा तक बच्चों के व्यक्तित्व का सम्बन्ध है, उनका चौमुख विकास हो रहा है । बुनियादी स्कूलों के स्वतन्त्र अनुशासन मे बच्चे बड़े मज़े से व्यावहारिक बन गये हैं और उत्पादक क्रियाओ के अभ्यास मे मधु–मक्खियों की तरह उड़ते-फिरते हैं । वे अपने

शिक्षकों को हौवा नहीं समझते बल्कि विश्वास-पात्र मित्र समझते हैं। कई बार पहले दर्जे के बच्चों ने भूख लगने पर शिक्षक से कुछ खाने को मांगा। उनमें से झिझक और सकुचाहट निकल गई है, वे साधारण स्कूलों के बच्चों से ज्यादा साफ़-सुथरे और चुस्त है, उनमें जिम्मेदारी की भावना जागृत हुई है।

बच्चे अब बिना छुट्टी लिये स्कूल से बहुत-कम ग़ैरहाज़िर रहते हैं और बुनियादी स्कूलों की औसत-हाज़िरी बढती जा रही है। आत्म-प्रकाशन की क्रियाओं मे तो बच्चों ने आशा से भी अधिक प्रगति दिखलायी है। वे अपने खींचे हुए रेखाचित्रों में रग भरते हैं जिससे मालूम होता है कि उनमे रगों के मिलाने की काफी अच्छी सूझ है। उनकी निरीक्षण-शक्ति बढ़ी है और उनका बातचीत करने का ढंग भी दूसरे बच्चों की अपेक्षा अधिक सुधरा हुआ मालूम होता है।

वे अब अपने चौगिर्द की वस्तुओं को देखकर पहले से ज्यादा प्रभावित होते हैं और रस लेते हैं। वे फूलों और पालतू जानवरों से बहुत प्रसन्न होते है और अपने चारों ओर की तमाम चीज़ों और अपने सम्पर्क में आने वाले तमाम आदमियों के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करने के लिये बड़े उत्सुक रहते हैं।

बुनियादी स्कूलों के बच्चे सामुदायिक खेलों और सयोजन क्रियाओं (Project Activties) को बहुत पसन्द करते हैं। वे अपनी क्लास के कमरे और स्कूल के सग्रहालय को सजाने में खूब दिलचस्पी लेते हैं। ट्रेनिंग स्कूल से लगे हुए तीनो बुनियादी स्कूलों ने अपने-आप ही एक एक छोटा बग़ीचा लगा लिया है। हर महीने बच्चे अपने आप सैरो की व्यवस्था करते हैं और इनमे बड़ा आनन्द मनाते हैं। व बड़ी खुशी से एक रोजाना समाचार-पत्रिका निकालते है और उसे अपनी क्लास के कमरे के बाहर लटकाते हैं। केन्द्रीय स्कूलो के बच्चे स्टेशनरी [लिखने पढने का सामान] की दूकान और सेविंग बैंक भी सहयोग के सिद्धान्त पर चलाते हैं और शिक्षकों की मदद तभी लेते हैं जब किसी तरह की अड़चन पैदा होती है।

क्लास के कमरे की सफ़ाई की ज़िम्मेदारी बच्चो पर है और वे हर सप्ताह कमरे का सामान हटा कर दीवारों और फर्श को कपडे से झाड़-पोंछ कर साफ़ करते रहते है। स्कूल की या गॉव की सफाई के काम मे वे झाड़ू, बाल्टी, टोकरी,

फावड़ा, वगैरा का उपयोग करने में बड़ा गौरव समझते हैं। मेहनत के हफ्ते में जो काम उन्होंने किया उसकी अधिकारियों ने बहुत प्रशंसा की है।

घर पर वे अपने मा-बाप की मदद करते हैं। वे बाज़ार से सौदा लाने में, पानी खींचने में, घर को सजाने में, झाड़ू लगाने में, गन्दगी साफ़ करने में, छोटे बच्चों को खिलाने में और जानवरों की देख-भाल करने में उनका हाथ बटाते हैं। इन बच्चों ने अपने-अपने मोहल्लों में खेल के केन्द्रों का संघटन किया है जिनमें ९-१० साल तक की उम्र के तमाम बच्चे शामिल होते हैं। हमारे पास आयी हुई रिपोर्टों से पता लगता है कि बुनियादी स्कूलों के लड़कों ने सड़कों की मरम्मत की, अपनी अपनी गलियों मे नालियाँ खोदीं और मोहल्ले के लोगों को या राहगीरों को सहायता पहुंचायी।

बुनियादी दस्तकारी

पहले तीन दर्जों में दस्तकारी के काम के अनुभवों से हमारी राय यह है कि योग्यता के नीचे लिखे आदर्श होने चाहिएः—

दर्जा०	तार	नंबर	समय
पहला	२५	१०	½ घंटा
दूसरा	३५	१२	½ घंटा
तीसरा	५०	१५	½ घंटा

अप्रैल १९४० से शहीदगंज के प्रैक्टिसिंग स्कूल में लकडी का काम और रामबाग़ के प्रैक्टिसिंग स्कूल में खेती-बाडी का काम बुनियादी दस्तकारी की तरह जारी किया गया था, लेकिन वास्तव में काम बहुत दिन बाद शुरू हुआ। इसलिए अभी इन दस्तकारियों की योग्यता के आदर्श के बारे में हम कुछ नहीं कह सकते।

दस्तकारियाँ सिखाने में प्रयोगशाला की पद्धति और उसके बाद सौंपे हुए काम की योजना (assignment plan) बहुत लाभदायक साबित हुई है। मतलब यह है कि पहले तो शिक्षक किसी क्रिया को खुद करके बतलाता है और बच्चे उसे देख कर और फिर हाथों से करके उसे सीखते हैं। इसके बाद उन्हें अलग-अलग काम (assignments) सौंप दिये जाते हैं। इस तरीके से बच्चों में एक दूसरे से होड़ करने की लाभप्रद भावना पैदा होती है। हरेक बच्चा यह कोशिश

करता है कि उसको सौंपा हुआ काम दूसरे बच्चों से अच्छा हो। इस होड़ा-होड़ी का एक लाभदायक नतीजा यह भी हुआ है कि छीजन कम होने लगी है। कहीं-कहीं तो छीजन १०% से घट कर ५% तक आगयी है।

पहले तीन दर्जों में कताई सिखाने में नीचे लिखा क्रम बरता जाता है.—

पहली सीढ़ी—तकली घुमाना; तकली को सुरक्षित रखना ताकि वह शरीर में कहीं चुभ न जाय; तकली में मोरचा न लगने देना।

दूसरी सीढी—कताई के ठीक आसन; अंधेरा, हवा के झोके वग़ैरा के बारे में पूर्व-उपाय।

तीसरी सीढ़ी—तकली की अनी [नीचे की नोक] किसी सख़्त सतह पर (लकड़ी या गत्ता) घूमनी चाहिए।

चौथी सीढ़ी—पहला धागा निकालना और उसे तकली पर लपेटना; पूनी उंगलियों मे पकड़ना; टूटे धागे को जोडना; कितना लम्बा धागा निकालना; गति किस तरह बढ़ाना।

पांचवी सीढ़ी—हिसाब लगाना अर्थात् तार गिनना और सूत का नंबर निकालना।

बुनियादी दस्तकारी के लिए समय

अनुभव से पता लगा है कि जुदा-जुदा दर्जों मे दस्तकारी के लिए नीचे लिखे मुताबिक समय देना चाहिए —

पहला दर्जा	१½ घंटा	
दूसरा ,,	१½ ,,	
तीसरा ,,	२ घंटे	
चौथा ,,	२ घंटे	इनके बारे में अमली तजुरबा नहीं है।
पाचवाँ ,,	३ ,,	
छठवाँ ,,	३½ ,,	
सातवाँ ,,	३½ ,,	

कुछ दिक़तें

१—कच्चा माल और दस्तकारी का सरंजामः—

(अ) कताई-दुर्भाग्य से काश्मीर मे कपास पैदा नहीं होती इसलिए हमें एक ही नमूने की कपास मिलने मे बड़ी भारी कठिनाई होती है। रियासत भर में सिर्फ़

श्रीनगर में चर्खा-संघ की शाखा तैयार पूनियाँ रखती है। लेकिन चूँकि ये पूनियाँ इकट्ठी बनायी जाती हैं, इसलिए अक्सर कुछ नीचे दर्जे की होती हैं। करघे के कुछ पुर्ज़े भी हमारे यहाँ आसानी से नहीं मिलते।

(ब) खेती-बाड़ी—खेती के लिए पट्टे पर जमीन नहीं मिलती। सरकारी तौर पर क़ानूनन जमीन हासिल करनी पड़ती है, जिसमे बहुत देर लगती है।

(स) गत्ते का काम—गत्ते की क़ीमत बहुत चढ़ गयी है और मिलना भी मुश्किल हो गया है।

२—जगह:—

मौजूदा किराये के मकान बुनियादी स्कूलो के लिए बिल्कुल ठीक नहीं हैं। दस्तकारी के काम के लिए बड़े कमरो की जरूरत है। कच्चा माल और औज़ार वग़ैरा रखने को काफ़ी जगह नहीं है और तैयार माल भी इधर-उधर कोनों मे पडा रहता है। बुनियादी स्कूलो के लिए सरकारी इमारतों की बहुत ज़रूरत है।

(अंग्रेजी से अनुवादित)

विजय विद्या-मंदिर, अंविधा में
बुनियादी तालीम के दो साल
(गोपालराव कुलकर्णी)

हमारे काम की कहानी बहुत छोटी है; क्योंकि हमारी पाठशाला अकेली ही बुनियादी तालीम के क्षेत्र में कुछ काम कर रही है। अकेली का अर्थ यह है कि हमारा किसी सरकार या किसी ट्रेनिंग सेंटर या किसी सघन हलके के साथ संबंध नहीं है।

गुजरात में राजपीपला एक छोटी-सी रियासत है, उसमें अंविधा एक छोटा सा गाँव है। इस गाँव में बुनियादी तालीम किस तरह शुरू हुई, इसका इतिहास तो बड़ा लंबा है। संक्षेप मे बात यह है कि राजपीपला के महाराजा साहब ने अंविधा गाँव में रियासत की तरफ़ से चलाई जानेवाली प्रायमरी पाठशालाओं को बुनियादी शिक्षा के प्रयोग के लिए हमें दे दिया और हम पूरी स्वतन्त्रता से काम कर सकें, इसलिए अपने शिक्षा-विभाग का सारा नियंत्रण हमारे स्कूलों पर से हटा लिया। रियासत को बुनियादी तालीम की योजना से बहुत दिलचस्पी है और उसकी तरफ़ से हमें ५,००० रु. सालकी सहायता मिलती है। रियासत हमें रुपये की मदद तो देती है, लेकिन अपना पाठ्यक्रम बनाने की, अपनी पाठ्य-पुस्तकें निश्चित करने की और अपनी परीक्षाएँ लेने की सारी सत्ता उन्होंने हमीं को दे दी हैं। यहाँ तक कि रियासत के शिक्षा-विभाग के इन्स्पेक्टर हमारी शाला का निरीक्षण करने को भी नहीं आते हैं।

हमारी पाठशाला कुछ अजीब ढंग की है। उसमे तीन विभाग है। एक बाल-विभाग, दूसरा प्रायमरी-विभाग और तीसरा अंग्रेजी-विभाग। ये सारी बातें एक ही संस्था में होने से बुनियादी तालीम के काम में कई गंभीर दिक्कतें हमारे सामने आती हैं जिनका जिक्र मैं आगे करूँगा।

हम तीन श्रेणियो में बुनियादी तालीम का पाठ्यक्रम चलाते हैं। इन तीन श्रेणियों मे कुल मिलाकर १०७ बालक हैं। लड़के और लड़कियाँ एक ही साथ पढ़ते हैं। हर श्रेणी के लिए एक-एक शिक्षक है। तीनों शिक्षक बुनियादी तालीम

की ट्रेनिंग पाये हुए है। राजपीपला रियासत मे कपास ही मुख्य पैदावार है इसलिए हमने शाला मे कताई की दस्तकारी को ही मूल उद्योग बनाया है। हमने पहले वर्ष मे ही कपास की जरूरत पूरी करने के लिए एक तरीका ढूँढ़ लिया। हम लोग कपास का चंदा करने के लिए घर-घर घूमे और तीन ही दिनों मे हमने अपनी जरूरत के लायक़ कपास इकट्ठी कर ली। इससे एक बड़े ख़र्च की बचत तो हो गई; पर जो कपास हमें मिली, वह ज्यादा अच्छी न थी। वजह यह थी कि घर-घर से अलग-अलग तरह की कपास आने से जो मिश्रण हुआ, उससे कुछ ख़राबी पैदा हो गई।

इस दस्तकारी का प्रारंभ हमें बहुत ही कम साधनों से करना पडा। हमारे पास ३० चरख़े और ८ धुनकियॉ थीं। एक मशीन-धुनकी भी थी और २०० तकलियॉ थीं। इन साधनों से हमें क़रीब २५० विद्यार्थियों को सिखाने का काम लेना था। वैसे तो हमने पहले साल बुनियादी तालीम सिर्फ पहली दो श्रेणियों मे ही जारी की थी, लेकिन तीसरी से आखिरी ९ वीं श्रेणी तक हरेक श्रेणी में हमने कताई का काम रख दिया था। इन सभी श्रेणियो के लिये दस्तकारी का एक ही प्रमाण रखना असंभव था। इसलिए हमने बुनियादी वर्गों में तीन घंटे, तीसरी और चौथी श्रेणियों मे पौने-तीन घंटे और अग्रेजी स्कूल मे सवा-घटा रोज दस्तकारी के लिए रक्खे। अंग्रेजी स्कूल में तो युनिवर्सिटी की पढ़ाई का ही बोझ इतना है कि इससे ज्यादा समय हम दे ही नहीं सकते।

एक साल के बाद दूसरे वर्ष के प्रारंभ में हमने तीसरी श्रेणी को भी बुनियादी वर्ग बना दिया। हमने शुरू से ही यह आग्रह रक्खा है कि कताई की सारी पूर्व क्रियाएँ खुद बच्चे ही कर ले। यानी कपास की सफ़ाई से लेकर उसको ओटना व धुनना और उसकी पूनियॉ बनाना, चरख़े की माल बनाना, तकली के अटेरन और चरख़े के परेते बनाना, वग़ैरा सारी क्रियाएँ बच्चे अपने हाथों से ही कर लेते है। मैने गुजरात मे ऐसी भी कुछ बुनियादी शालाएँ देखी हैं, जिनमे तैयार पूनियाँ बाहर से मॅगाकर बच्चों को कातने के लिए दी जाती है। ऐसा करने से दस्तकारी का विशाल क्षेत्र मर्यादित हो जाता है और बच्चो को शिक्षा प्राप्त करने का मौका भी कम हो जाता है। इसलिए हमने यह तय कर लिया है कि हर चीज बच्चे ही तैयार करे। पर उसमे हमें एक बहुत बड़ी दिक्क़त पेश आई। धुननेवाले बच्चे

तो सिर्फ़ आठ ही थे और कातनेवाले थे क़रीब २५० इन सभी के लिए पूनियाँ बनाना आसान नहीं था। नतीजा यह हुआ कि कभी–कभी तो आठ–आठ दिन कताई बद रखकर हमे ख़ाली पूनियाँ बनाने का काम जारी रखना पड़ा।

पहले छः महीने तक कताई का काम चलाने के बाद जब हमने देखा कि बच्चो का काता हुआ सूत कम भी रहा और निकम्मा भी, और जब आमदनी कम हुई, तो हमे बड़ी फ़िक्र हुई कि अब क्या किया जाय। बहुत सोच-विचार के बाद हमने एक रास्ता निकाला। यह रास्ता आप लोगों को शायद बिलकुल नया लगेगा और शायद आप यह भी महसूस करें कि हम बुनियादी तालीम के मूल सिद्धान्त से कुछ हट गये हैं। लेकिन अनुभव के बाद हमें यह रास्ता बहुत अच्छा मालूम हुआ। हमने यह तय किया कि हरेक बच्चा अपने घर से कपास लाये और उसकी पूनियाँ बनाकर अपना ही सूत काते। इससे पूनियों की जो ज़िम्मेदारी हमारे सिर पर थी, वह हट गई और व्यवस्था का बोझ भी एक जगह से बँटकर थोड़ा-थोड़ा हरेक बच्चे के ऊपर पड़ गया।

इस योजना को पहले साल हमने अंग्रेजी वर्गों मे जारी किया। शुरू में क़रीब पच्चीस बच्चे इसमें शरीक हुए। जब इन बच्चों ने देखा कि तकली की गति बहुत कम रहती है, तब उनमें से दो ने चरखे ख़रीदे। उनको देखकर दूसरे बच्चे भी चरखे खरीदने लगे। होते होते साल के आख़िर तक पच्चीसों लडकों ने चरखे खरीद लिए।

दूसरे साल के शुरू में हमने इस योजना को गुजराती चौथी श्रेणी में और बुनियादी तालीम की तीसरी श्रेणी मे जारी किया। आज ये बच्चे गाँव में ८२ चरखे चला रहे हैं। सारी पाठशाला के करीब १०० लड़के वस्त्र-स्वावलंबन के काम में शरीक हो गये है।

इस योजना में हमें बड़ी आसानी यह मालूम होती है कि बच्चों को कातने के लिये मजबूर नहीं करना पड़ता। सब बच्चे शौक से पाँच मिनट पहले ही आ जाते हैं और समय पूरा होने के बाद भी काम करते रहते हैं। इसके अलावा बच्चों की कातने की गति, उनके सूत की अच्छाई और प्रमाण, सभी में प्रगति मालूम हुई है।

इस योजना का एक और भी महत्वपूर्ण नतीजा हमे दिखाई देता है। यह योजना जारी करने के वक्त से अब तक ३२ लडके पूरे खादीधारी बन चुके हैं। इसलिये हमें विश्वास हो चला है कि इसके जरिये लड़के अपने आप ही शुद्ध खादीधारी बन जायँगे।

जहाँ तक मैंने समझा है, बुनियादी तालीम का एक हेतु यह भी है कि देहात के जीवन मे धीरे-धीरे परिवर्तन करना। अगर बुनियादी पाठशाला गॉव में कुछ परिवर्तन न कर सके, तो उतने प्रमाण मे उसकी निष्फलता ही गिनी जायगी। मेरा खयाल है कि वस्त्र-स्वावलंबन के काम से यह बात आसानी से हासिल हो सकती है।

इस योजना मे जाहिरा दो ख़राबियॉ मालूम पड़ती है। पहली यह कि इसमे कताई की मजदूरी शाला को नहीं मिलती बल्कि बच्चो को मिलती है। दूसरी कमी यह है कि कताई का हिसाब रखने में बहुत कठिनाई पडती है, क्योकि बच्चे शाला में भी कातते हैं और घरपर भी। लेकिन हमने हरेक बच्चे की पूनियाँ स्कूल में ही रखने का इन्तज़ाम कर लिया है। इससे हिसाब में कुछ कठिनाई नहीं रहेगी। रही मज़दूरी की बात, सो अगर मजदूरी लडकों को मिल जाय तो वह एक अच्छी ही चीज़ है। पाठशाला इस मजदूरी को छोड दे, तो मेरे ख़याल से उसे कोई बडा नुकसान नहीं होगा, क्योंकि इस सिलसिले में पाठशाला को कुछ खर्च भी नहीं करना पड़ता।

हमारी इस योजना से बच्चो के सूत से बनी हुई खादी की खपत का सवाल भी आपसे-आप हल हो जाता है।

अब मै दूसरी बात पर आता हूँ। मैंने शुरू में ही कहा था कि हमारी पाठशाला मे अंग्रेज़ी की श्रेणियॉ भी चलती हैं। इनकी वजह से हमारी प्रगति कुंठित-सी हो गई है, क्योंकि बुनियादी तालीम और अंग्रेज़ी की शिक्षा दोनों का समन्वय नहीं हो सकता। हमारे गाँव में चौथी श्रेणी की पढाई पूरी करने के बाद आगे पढ़नेवाले लड़के अंग्रेज़ी शाला मे ही जाते हैं। अंग्रेजी का आकर्षण इतना ज़बरदस्त है कि उसका मुक़ाबिला करने की ताकत हममे नहीं है। अगर अंग्रज़ी शाला को बन्द करने की बात करें, तो शायद हमे ही अपना कार्यक्षेत्र छोड़कर भाग जाना पडे। ऐसी हालत मे हमें सब से कह देना पडा है कि हमारा यह

प्रयोग सिर्फ चौथी श्रेणी तक ही चलेगा। चौथी श्रेणी के बाद हम अंग्रेज़ी के साथ बुनियादी तालीम नहीं रख सकते। संभव है, दस-पाँच साल के बाद लोगों के विचार बदल जायँ और हमारी यह दिक्कत दूर हो जाय।

मैं पहले बता चुका हूँ कि हमारी पाठशाला मे सहशिक्षा है। लडके और लडकियाँ एक साथ पढते है। यह बात देहानियों को बडी बुरी लगती है। शुरू मे तो लोगो ने बड़ा हल्लागुल्ला मचाया। महाराजा साहब तक अर्जियाँ भेजीं और कहा कि लड़कियो की शाला अलग कर दो। इस झगड़े मे हमे बहुत परेशान होना पडा। हमारी पाठशाला की करीब ३० फ़ी सदी लडकियॉ पढना छोड़कर घर बैठ गईं। तो भी हमने सहशिक्षा का आग्रह जारी रक्खा और अब सारा वातावरण शान्त हो गया है।

अब एक आखिरी बात मुझे और बतानी है। वह यह है कि हमारे दो साल के प्रयोग का असर क्या हुआ? देहातियो ने शुरू मे तो काफ़ी विरोध किया। लेकिन हम दृढता और शाति से काम करते रहे और वह विरोध अब दूर हो गया है। हमने गॉव में सभाएँ करके लोगों को बुनियादी तालीम के सिद्धान्तों को समझने कि कोशिश भी की, जिसका नतीजा यह हुवा कि आज लोग समझने लगे हैं कि इस शिक्षा में काफ़ी प्राणदायी तत्व भरे पड़े हैं। इस तालीम ने बच्चों में अजीब परिवर्तन कर दिया है। उनका जीवन क्रियात्मक बन जाने से उनमें नयी भावनाएँ जाग्रत हुई हैं। पढ़ाई मे भी पुरानी तालीम से कुछ बढ़कर प्रगति दिखाई देती है। बच्चो का सामान्य ज्ञान बढा है। उनकी विचार प्रकट करने कि शक्ति विकसित हुई और उनकी कार्यदक्षता मे उन्नति हुई है।

मै पहले कह चुका हूँ कि बुनियादी तालीम का एक पहलू यह भी है कि देहातियों के जीवन मे परिवर्तन करना। यह काम भी हमने थोडा-थोडा शुरू कर दिया है।

पेरियनायकपालयम् का बुनियादी स्कूल

[अरुणाचलम्]

मद्रास सरकार ने जून १९३९ में जो बेसिक ट्रेनिंग स्कूल और प्रैक्टिसिंग स्कूल खोला था वह अप्रेल १९४० में बन्द कर दिया गया। इसके बाद तामिल नाड में बुनियादी शिक्षा जारी करने के लिये सरकार की तरफ़ से कोई आशा नहीं रही तो हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के सदस्य श्री अविनाशिलिंगम् ने बुनियादी शिक्षा की अच्छाइयों को सिद्ध करने के इरादे से जिला बोर्ड के स्कूल का प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया और उसे बुनियादी स्कूल में बदल दिया। इस स्कूल में पहले ७ शिक्षक और १७० विद्यार्थी थे। आज शिक्षकों की संख्या ८ और विद्यार्थियों की २०३ है।

हमने पहली कक्षा में बुनियादी दस्तकारी कताई के द्वारा शिक्षा प्रारम्भ की। इस कक्षा में ६० बच्चे थे जिन्हें हमने दो हिस्सों में बाँट दिया। स्कूल के लिए उपयुक्त शिक्षक तैयार करना आसान नहीं था। इसलिये हमने शिक्षकों के लिये भी एक ट्रेनिंग क्लास खोल दी। इसमें शिक्षकों को दस्तकारी और बुनियादी शिक्षा के तरीक़े ये दोनों चीजें सिखायी जाती हैं।

स्कूल के काम की व्यवस्था और समय-विभाग का चालू तरीक़ा हमारी बुनियादी कक्षा के लिए अनुकूल न हुवा। बच्चे को अक्सर स्कूल के बाहर सैर के लिये भी जाना पड़ता है। इस लिए हमने एक लचीलासा समय-विभाग बना रक्खा है। पहली कक्षा में हमने दस्तकारी के लिये ४०-४० मिनट की तीन घटियाँ रक्खी हैं और बाकी की कक्षाओं के लिये ४० मिनिट की एक ही घंटी (Period)।

स्कूल में कच्चा माल खपता है और जो माल बनता है उनके परिमाणों की विस्तृत लिखतें रक्खी जाती हैं। छीजन का हिसाब लगाकर उसकी क़ीमत भी निकाली जाती हैं। बच्चों को उनके काम का मूल्य और महत्व बताया जाता है और उन्हें नये काम की पुराने काम से तुलना करना सिखाया जाता है। हमें अनुभव

हुआ है कि बुनियादी दस्तकारी कताई के द्वारा बच्चों के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का विकास होता है और इसके आधार पर स्कूल के दूसरे विषय आसानी से पढाये जा सकते हैं।

हम अपने बच्चों को नागरिकता की भी व्यवहारिक शिक्षा देते हैं। वे दस्तकारी का नाम एक सहयोगी (co-operative) प्रयत्न की तरह करते हैं। बडे बालक छोटे बालकों के लिये रुई धुनते हैं और पीने के लिये व स्कूल के बाग के लिय पानी खींचते हैं। वे खेल के मैदान को रोज़ झाड़-बुहार कर उसमें छिडकाव करते हैं। कक्षा के कमरों को साफ-सुथरा रखने में छोटे बच्चे भी हाथ बटाते हैं। स्कूल के मंदिर का प्रबन्ध करने वाला बालक समय से पहले स्कूल आ जाता है और बाग़ मे से फूल चुनकर मन्दिर को सजाता है। जिस बालक के ज़िम्मे दस्तकारी के काम का प्रबन्ध रहता है वह भी हले से आकर दस्तकारी के सामान को ठीक-ठाक कर रखता है। स्कूल के पुस्तकालय की करीब ५०० छोटी-छोटी किताबों की देख-रेख करने वाला पुस्तकाध्यक्ष एक घटे पहले आता है और स्कूल बद होने के एक घंटे बाद घर जाता है। स्कूल की इमारत का प्रबन्ध करनेवाला "गृह-सचिब" सारे स्कूल की सफ़ाई की देख-भाल करता है। तीन बालकों के ज़िम्मे स्कूल के घड़ों को रोज़ाना पानी से भरने का काम है। "स्वास्थ-सचिव" का काम भी बहुत महत्वपूर्ण है। वह यह देखता है कि बच्चे हर जगह गन्दगी तो नहीं फैलाते हैं। वह हर दूसरे-तीसरे दिन पेशाब की नालियॉ खोदता है और उनमें मिट्टी डाल्ता रहता है। हमने देखा है कि गॉवके बच्चो मे बहुत-सी गन्दी आदते होती हैं। वे रास्ते मे ही पायखाना फिरने को बैठ जाते हैं। इसलिये हमने सबसे पहले बच्चो को सफ़ाई और स्वास्थ्य के पाठ सिखना शुरू किया हैं।

भिन्न-भिन्न विभागों के "सचिव" सप्ताह मे एक बार मिलते हैं और अपने कामो की रिपोर्ट पेश करते है। इनका हर महीने नया चुनाव होता है। चुनाव के बाद पुराना "सचिव" अपने अनुभव बतलाता है जिससे नया "सचिव" अपना काम अच्छी तरह कर सके। हर कक्षा मे हर काम के लिये अलग-अलग नेता होता है। बच्चो मे यह भावना नहीं है कि नेता बनकर दूसरो पर हुक्म चलायें बल्कि वे नेतागिरी का अर्थ यह समझते हैं कि उन्हे सारी कक्षा या सारे स्कूल की सेवा का अवसर मिले।

स्कूल का बाग मधु-मक्खियो के छत्ते और समय-समय पर सैरें—इनके द्वारा बच्चों को साधारण विज्ञान और समाज-विज्ञान की बातें सीखने के बहुत से अवसर प्राप्त होते हैं। हमारे बच्चों की आम जानकारी दूसरे स्कूलों के बच्चों से अच्छी है यह बात इंस्पेक्टर के निरीक्षण से मालूम होजाती है। इन्सपेक्टरो ने देखा कि हमारे स्कूल के ६० बच्चों में से ४८ बच्चो की योग्यता भाषा और गणित में औसत दर्जे से ऊँची रही।

मैंने विचार किया कि स्कूल किसी शिक्षा-विशेषज्ञ को दिखाया जाय और उसकी राय ली जाय। इस इरादे से मैंने अपने एक मित्र को बुलाया जिन्हें देहाती स्कूलों का और ट्रेनिंग स्कूल चलाने का बहुत काफ़ी अनुभव है। वे हमारे स्कूल में दो दिन ठहरे और अन्त मे कहने लगे कि स्कूल मे बच्चों के विकास के उपयुक्त वातावरण है। उन्होंने यह भी कहा कि उन्हे यह कभी आशा न थी कि कताई कि मामूली नीरस दस्तकारी बच्चो के लिए इतनी दिलचस्प बनायी जा सकती है।

हमे अपने काम में कुछ दिक्क़तों का भी सामना करना पड़ा। सबसे पहले हमे यह कठिनाई महसूस हुई कि दस्तकारी सिखाने का प्रारम्भ किस तरह किया जाय। हमने देखा की दस्तकारी की बारीकियाँ और हर क्रियाका स्पष्ट विवेचन एकदम बच्चों के गले नहीं उतारा जा सकता। इस तरह के तार्किक तरीक़े से तो उनकी दिलचस्पी के ही मारे जानेका डर है। लिहाज़ा हमने स्कूल के जीवन में कताई को सबसे आगे स्थान देकर दस्तकारी का वातावरण तैयार किया। हमने बाहर के लोगों को स्कूल में कताई का प्रदर्शन करने के लिये बुलाया। इसके अलावा शिक्षक भी दस्तकारी मे उतना निपुण होता है और अपना काम ऐसे ढंग से करता है कि बच्चे तुरन्त उसकी नक़ल करने लगते हैं। और जब एक बार बच्चे दस्तकरी के काम में लग जाते हैं तब शिक्षक यह देखता है कि वे एक मंज़िल से दूसरी मंजिल पर उन्नति करते चले जायँ।

शुरू में गॉव के लोग हमसे दो कारण से नाराज़ थे। एक तो वे यह पसन्द नहीं करते थे कि हरिजन बालक स्कूल मे दूसरे बालकों के बराबर बैठे दूसरे उन्हे यह भी अच्छा न लगता था कि बच्चे निशंक होकर शिक्षको के साथ आज़ादी से मिलें-बैठे। इस साल हमने कई मौक़ो पर गॉव के लोगो को स्कूल देखने के लिये बुलाया और अब वे लोग हमारा उद्देश्य समझने लगे है। उन्हें

यक़ीन हो चला है कि बिना डंडे की मदद के भी बच्चों में अनुशासन की भावना का विकास किया जा सकता है। इस तरह गाँव के लोगों का विरोध धीरे-धीरे कम होता जा रहा है।

[अंग्रेज़ी से अनुवाद]

ओखला का बुनियादी स्कूल

[सलामतुल्लाह]

इस लेख में यह बताने कि कोशिश की जायगी कि ओखला के स्कूल में बुनियादी तालीम की योजना के अनुसार किस हद तक काम हुआ है और कहाँ तक सफलता मिली है। हमारे देश मे देहात की परिस्थितियाँ इतनी समान हैं कि इस लेख से वे तमाम लोग, जिन्हें देहात कि शिक्षा में दिलचस्पी है, उन मुश्किलों का किसी हद तक अनुमान कर सकेंगे, जो देहात में स्कूल चलाने में साधारण तौर पर सामने आती हैं।

ओखला एक छोटासा गाँव है। यहाँ मुश्किल से पचास-साठ घर हैं और घर भी क्या फूँस और मिट्टी के छोटे मोटे झोंपड़े हैं। निवासी बहुत ग़रीब हैं। ज़्यादातर लोगो का पेशा जानवर पालना, दूध बेचना और मज़दूरी करना है। कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनके पास अपनी ज़मीनें हैं। वे खेती करते हैं। गाँववालों के छोटे छोटे बच्चे भी रोज़ी कमाने में मदद देते हैं। कुछ जानवर चराते हैं, कुछ नहर पर मजदूरी का काम करते हैं, और इस तरह रोज़ दो-चार पैसे कमा लेते हैं। नहर पर अक्सर सैलानियों की भीड़ रहती है। बच्चों को उनकी वज़ह से तरह-तरह के छोटे-मोटे काम मिल जाते हैं—जैसे मोटर गाड़ी की देख-भाल, सामान का एक जगह से दूसरी जगह ले जाना, पानी या लकड़ियाँ लाना वगैरा। पूरे गाँव मे सिर्फ़ दो ही आदमी ऐसे हैं जिनके शरीर पर सफेद कपड़े दिखाई देते हैं और जिनके घर अच्छे मालूम देते हैं। इनमें एक तो है गाँव का नम्बरदार और दूसरा है साहूकार। गाँव के लगभग सभी लोग साहूकार के कर्ज़दार हैं। यहाँतक कि नम्बरदार पर भी इसका कर्ज़ा है। मतलब यह कि सारे गाँव में साहूकार की तूती बोलती है। इसके विरुद्ध कोई कुछ नहीं कह सकता।

जुलाई १९३९ से पहले इस गॉव में कोई स्कूल नहीं था। सूबे देहली की सरकार ने बुनियादी तालीम का प्रयोग करने के लिए जुलाई १९३९ में ओखले मे एक स्कूल खोलने की योजना मंजूर की, पर शर्त यह थी कि जामिया मिल्लिया यह स्कूल कायम करे, और जब स्कूल चलने लगे तो उसकी पढाई की देखभाल भी वही करे। सरकार ने इस काम के लिए २५० रु. बतौर ख़ास सहायता के और २०-१-३० के ग्रेड मे एक शिक्षक का वेतन देना मंजूर किया। इसलिये जब ट्रेनिंग स्कूल अगस्त १९३९ मे दिल्ली से जामियानगर आया, तो गॉव मे स्कूल खोलने की कोशिश की जाने लगी। हमे जल्दी-से-जल्दी इस स्कूल को कायम करके काम शुरू कर देना था, क्योंकि ट्रेनिंग स्कूल के साथ एक प्रैक्टिसिंग स्कूल का होना ज़रूरी था। यूं तो जामियाका प्रायमरी स्कूल यहाँ पहले ही से मौजूद था, पर उसे प्रैक्टिसिंग स्कूल बनाना हमारे लिए कुछ ज़्यादा लाभदायक न होता। जामिया के स्कूल के बच्चे अधिकतर दूर-दूर के शहरों से आते हैं और उनका सम्बन्ध अमीर घरानों से होता है। हमें एक देहाती स्कूल की ज़रूरत थी, ताकि हम उन सब सवालों से जानकारी प्राप्त कर सकें जो बुनियादी तालीम के काम मे पैदा होते हैं।

जब हमने गाँव में स्कूल खोलने की कोशिश शुरू की तो कुछ लोगों ने गाँव वालों को हमारे विरुद्ध बहका दिया। उन्होंने कहा कि अगर जामियावाले यहाँ स्कूल खोलने में सफल हो गये तो तुम्हारी खैरियत नहीं। यह उनकी चाल है। वे स्कूल का धोखा देकर तुम्हारी ज़मीने लेना चाहते हैं। इसी तरह का और भी बहुत-सा झूठा प्रचार किया गया।

अब से एक महीना पहले तक जिस मकान मे हमारा स्कूल था वह गाँव के साहूकार के क़ब्ज़े में था। हमने साहूकार से कहा कि वह यह मकान स्कूल के लिए दे दे। लेकिन साहूकार किराये तक पर देने को राज़ी न हुआ। इस पर हम इस हलके के डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेम्बर के पास गये और उनकी मारफ़त यह तय कराया कि यह मकान कम-से-कम एक महीने के लिए स्कूल के वास्ते दे दिया जाय, ताकि इस समय में कुछ दूसरा प्रबन्ध किया जा सके।

अब हमने गाँव में सभा बुलाई जिसमें गाँववालों को शिक्षा के लाभ समझाये और उनसे स्कूल में अपने बच्चे भेजने को कहा। इस तरह यह स्कूल ७ अक्तूबर

१९३९ से बाकायदा चालू हुआ। एक ही हफ़्ते की कोशिश का नतीजा यह हुआ कि २० लड़के स्कूल मे भर्ती हो गये। काम शुरू करने के लिये हमने अपने स्कूल के लिए एक ट्रेनिंग पाये हुए शिक्षक को रक्खा। काम तो शुरू होगया लेकिन नियम से न हुआ। यह मकान स्कूल के लिए बिल्कुल अनुपयुक्त और नाकाफ़ी था। इस पर तुर्रा यह कि मालिक मकान इसमें किसी तरह का परिवर्तन करने की इजाजत देने को तैयार ही न था। यहाँ तक कि उसने मकान के अहाते में बच्चो को बागवानी करने से भी मना कर दिया क्योंकि उसे यह डर था कि धीरे-धीरे यह मकान उसके अधिकार से निकल जायगा। लाचार होकर हमने यहाँ सिर्फ़ कताई की दस्तकारी शुरू की। भिन्न-भिन्न अवस्थाओं और भिन्न-भिन्न योग्यता के बच्चोंने हमारी कठिनाईयों को और भी बढा दिया। कई बच्चे तो सात साल से कम कम उम्रके थे और तीन चार बच्चे दस साल तक के होंगे। कुछ बच्चे थोड़ा-सा पढ़ना-लिखना भी जानते थे। इसलिए बच्चों को दो अलग-अलग कक्षाओ में रक्खा गया। पर बाक़ायदा दो कक्षाएं नहीं बनायी जा सकती थीं, क्योंकि पढना-लिखना जाननेवाले बच्चे हिसाब और दूसरे विषयो में बिल्कुल कोरे थे।

अभी हम अच्छी तरह सम्हलने भी न पाये थे कि महीना ख़त्म हो गया और साहूकार ने मकान खाली करने का तक़ाज़ा सख़्ती से करना शुरू कर दिया। अब तक हम मकान का कोई प्रबन्ध न कर सके थे और न कोई इसकी उम्मीद ही थी कि हम आगे चलकर जल्दी ही कोई मकान बना सकेंगे। आख़िरकार लाचार होकर हमने सरकार को लिख दिया कि जब तक वह स्कूल के लिए मकान का प्रबन्ध नहीं करती, काम करना असम्भव है। सरकार ने आख़िर साहूकार से कुछ शर्तों पर यह मकान स्कूल के लिये ले लिया।

यहाँ तो हमने इस स्कूल के इंतज़ामी पहलू से बहस की। अब हम इसके तालीमी पहलू पर रोशनी डालेंगे। यहाँ बच्चों को पढ़ना सिखाने के लिए कहानी का तरीका काम में लाया गया। इससे बच्चों को पढ़ना सीखने में बड़ी आसानी हुई। कताई के लिए शुरू में सिर्फ़ एक घंटा रोज़ दिया गया। पर फरवरी १९४० में जब हमारे स्कूल के विद्यार्थी अभ्यास पाठों के लिए जाने लगे तो कताई के समय को धीरे-धीरे बढ़ा कर दो घंटे रोज़ कर दिया गया। छमाही के अन्त में बच्चों की औसत गति उस गति से कम रही जो बुनियादी शिक्षा के पाठ्यक्रम में निर्धारित की

गयी है। इसका एक कारण तो यह था कि स्कूल में कताई को पाठ्यक्रम में निर्धारित ३ घंटे २० मिनिट के बजाय सिर्फ़ दो ही घंटे दिये गये थे और दूसरा कारण यह था कि बच्चे घर के कामों में लगे रहने से स्कूल में नियमित रूप से न आते थे।

इस जगह हम बुनियादी शिक्षा के उन आपत्ति करनेवालों को जवाब देना चाहते हैं जो कहते हैं कि बच्चे कताई के नीरस, फीके और जल्दी थका देनेवाले काम को देर तक नहीं कर सकेंगे और इससे उनके स्वास्थ पर भी बुरा असर पड़ेगा। हमें अनुभव से मालूम है कि यह कल्पनायें निर्मूल हैं। हमारे यहाँ सात साल के बच्चे, बल्कि इससे भी कम उम्र के बच्चे, दो घंटे लगातर बड़ी खुशी से कातते हैं। यहाँ तक कि कभी-कभी तो दूसरे पाठों के समय भी कातने की इच्छा प्रकट करते हैं। इससे अनुमान किया जा सकता है कि कताई का काम बजाय कष्ट देनेवाला होने के दिलचस्प है।

शारीरिक उन्नति के बारे में सिर्फ़ इतना कह देना काफ़ी है कि बच्चे पहले से ज्यादा स्वस्थ और साफ़ नजर आते हैं। स्कूल की तरफ़ से जो कपड़े उन्हें पहनने को मिलते हैं उन्हें सलीके से काम में लाते हैं। अगर गलती से कोई छोटा बच्चा मुँह-हाथ धोकर स्कूल नहीं आता तो शिक्षक फ़ौरन उसके मुँह-हाथ धुलाता है। कभी-कभी इतवार के दिन या दूसरी छुट्टियों में शिक्षक उन्हें नदी पर ले जाता है। वहाँ वे अपने घर के कपड़े रेत, मिट्टी और सोडे से धोते हैं। इस तरह उन्हें अपने कपड़े खुद साफ़ करने का तरीका मालूम हो गया है। स्कूल की तरफ़ से बच्चों के नाश्ते के लिए भी भीगे हुए चनों का प्रबन्ध किया गया है। शुरू में कुछ समय तक बच्चों ने चने खाने की इच्छा नहीं प्रकट की, पर बाद में खुशी से खाने लगे।

बच्चों की नैतिक शिक्षा का अनुमान लगाने के लिए हमें उनके स्कूल में भर्ती होने से पहले की हालत की तुलना मौजूदा हालत से करनी चाहिए। जब वे स्कूल में आये थे तब बुरी-बुरी गालियाँ बकते थे, आपस में लड़ते-झगड़ते थे और कभी-कभी तो मारपीट तक की नौबत आ जाती थी। लेकिन अब यह हालत है कि जहाँ कहीं मिलते हैं "मास्टर साहब अस्सलामालेकुम" या "मास्टर साहब नमस्ते" से स्वागत करते हैं। अब वे आपस में गाली-गलौज भी बहुत कम करते हैं। उनमें किसी हद तक साफ़-सुथरे रहने की आदत भी पड़ गई है, यद्यपि इस

मामले में उनके घर•हमारी सहायता नहीं करते । कुछ बच्चे तो घर जाकर माँ-बाप को सफाई-सुथराई के बारे में बातें बताते हैं । वे कहते हैं कि " हमें तो मास्टर साहब ने पानी के बरतन, रहने का कमरा और अपनी तमाम चीज़ें साफ रखने को कहा है क्योंकि अगर हमारी चीजें गन्दी होंगी तो हम बीमार पड जायंगे । फिर आप इन बातों को घर में क्यों नहीं करते ?"

जहाँ तक सैद्धान्तिक शिक्षा का सम्बंध है, बच्चों ने पूरा पाठ्यक्रम खतम कर लिया है । समवाय के मामले में हमे कोई खास कठिनाई नही हुई । हाँ, बागवानी का उपयोग न हो सकने की वजह से साधारण विज्ञान की शिक्षा में वह खूबी पैदा न हो सकी जो होनी चाहिए थी । बच्चो को भाषा और समाज–विज्ञान के बारे मे बहुत-सी दिलचस्प कहानियाँ याद हो गयी हैं । उन्हें बहुत-सी कविताएँ जबानी याद हैं और वे उन्हें कताई के समय गाया करते हैं । वे आसान और सादा वाक्य पढ़ सकते है और कुछ लिखना भी जानने हैं । हमारा खयाल है कि साधारण जानकारी में किसी देहाती स्कूल के इस उम्र के बच्चे उनका मुकाबला नहीं कर सकते ।

बच्चों को साहसी और निडर बनाने की कोशिश की गयी । उनके स्कूल मे कोई भी नया आदमी आ जाय, उन्हें किसी तरह का डर, झिझक या शर्म मालूम नहीं होती । आये दिन शिक्षा से दिलचस्पी रखनेवाले देशी और विदेशी लोग इस स्कूल को देखने आते रहते हैं । अगर वे इन बच्चों से कुछ पूछते हैं तो बच्चे बेधड़क जबाब देते हैं। देहात के साधारण बच्चों को देखते हुए बात बहुत असाधारण है । कहावत है कि गाँव के बच्चे लाल-पगड़ी वाले के नाम से डरते हैं । पर यहाँ यह हाल है कि बच्चे गोरे लोगो (Europeans) से भी बाते करने में नहीं हिचकिचाते ।

इस स्कूल मे आत्म-प्रकाशन के लिए काफ़ी अवसर दिये जाते हैं । बच्चे चीज़ों के बारे में अपने भाव स्वतन्त्रता से प्रकट करते है । यह काम ज़्यादातर बातचीत के ज़रिये होता है और कभी-कभी ड्राइंग के ज़रिये भी । पिछले साल पहली कक्षा के बच्चे कागज़-कटाई का काम करते थे लेकिन वह इस साल नहीं कराया जा सका । पिछले साल के कागज़ कटाई और ड्राइंग के नमूने देखकर आश्चर्य मालूम होता है कि गरीब घरों के इतने छोटे बच्चे ऐसी अच्छी चीज़े किस तरह

बना लेते हैं। उनके सौन्दर्य सम्बन्धी शौक की तरक्की में पुराने स्कूल के बेलबूटों ने भी काफी मदद दी। इस स्कूल की दीवारों पर तरह-तरह की रंगीन और सुन्दर तस्वीरें बनी हुई थीं। एक बच्चे ने अपने घर को भी सुंदर बनाने के लिए वैसे ही बेल-बूटे बनाने की कोशिश की थी।

पिछले साल राष्ट्रीय-सप्ताह के अवसर पर बच्चों ने जो कुछ किया वह ख़ास तौर पर ज़िक्र करने लायक है। उन्होंने अपने स्कूल और अपने स्कूल के अहाते की खूब सफ़ाई की। बाद में रंगीन काग़ज काटकर स्कूल को सजाया। फिर तीसरे पहर कताई की प्रतियोगिता हुई जिसमें लगभग सब बच्चे शामिल हुए। फिर शाम को एक जलसा हुआ जिसकी घोषणा बच्चों ने अपने-अपने मोहल्लों मे पहले से कर दी थी। जलसे में बडी भीड़ थी। उसमें बताया गया कि हम राष्ट्रीय-सप्ताह क्यों मनाते है और उसका हमारे जीवन से क्या सम्बन्ध है। इसमें ट्रेनिंग स्कूल के कच्चे-शिक्षकों ने कुछ कविताएँ भी सुनायीं जो उन्होंने ख़ास तौर पर इसी अवसर के लिये लिखी थीं। बाद में देहात से सम्बन्ध रखनेवाले गीत गाये। गाँव वालों ने भी जलसे में क्रियात्मक भाग लिया। उनमें से कुछ लोगो ने बिनोट के खेल दिखाये।

देहात सुधार का काम

स्कूल और समाज मे गहरा सम्बन्ध पैदा करने के लिए हमने गॉव सुधार का काम भी शुरू किया था। उसके लिए एक सभा बनाई थी और इसका सम्बन्ध जामिया मिल्लिया के सयानों की शिक्षा के विभाग से कर लिया था। हमारी इस सभा के मंत्री ट्रेनिग स्कूल के एक अध्यापक थे। इस सभा के सभासदों में जामिया-नगर के प्रायमरी स्कूल के कुछ शिक्षक, हमारे स्कूल के प्रिंसिपल साहब और कुछ विद्यार्थी शामिल थे। काम शुरू करने के लिए हमने कुछ चन्दा किया था। बाद को ऊपर लिखे विभाग से कुछ सहायता मिलने लगी। हमने यह काम शुरू करने से पहले यह मालूम किया कि गॉव में कितने आदमी रहते हैं, उनके जीविका के क्या साधन हैं, वे क्या-क्या काम कर सकते हैं, कितने बच्चे हैं, उनकी उम्र क्या है, कितने पढ़े-लिखे हैं और कितने अनपढ।

जामियानगर मे जो इमारतें बन रही थीं इनमें बेरोज़गारो को काम दिलाने की कोशिश की गयी। सयानो की शिक्षा के लिए रात्रि-पाठशाला खोली गयी जो

पिछले साल के अन्त तक जारी रही। हम मे से कुछ लोग अलग-अलग बातें मसलन, फसली बीमारियाँ, स्वास्थ और सफाई के नियम, समाजी ख़राबिया और उन्हें दूर करने की तदबीरें, दुनिया के मौजूदा हालात और उनका हमारे जीवन से सम्बन्ध वगैरा, गॉववालो को बताते रहे और वे लोग बडी दिलचस्पी से हमारी बातें सुनते थे। इस सभा की तरफ़ से कभी-कभी गॉववालो की दिलचस्पी के लिए दिल-बहलाव के उत्सव भी किये जाते थे। राष्ट्रीय-सप्ताह के सिलसिले में ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापको और विद्यार्थियो ने गॉव की गलियो और कुओं को साफ़ किया। रात के जलस मे सफाई की खूबियॉ बतायीं और अपने गॉव और घरो को हमेशा साफ़ रखने की ज़रूरत बतलायी।

अब गॉव का स्कूल अपने नये मकान मे आ गया है। इसमे पहले की बनिस्बत जगह भी ज़्यादा है और सामान भी अच्छा है। उम्मीद है कि इन नयी हालतों मे हम अपने काम को पहले से भी अच्छी तरह चला सकेंगे।

रायपुर ज़िले में बुनियादी शिक्षा का प्रयोग

[धनीराम वर्मा]

रायपुर महाकोशल (मध्यप्रात-हिन्दी) का एक प्रसिद्ध ज़िला है। मध्यप्रान्त के प्रधान-मंत्री प० रविशकर शुक्ल कई साल तक रायपुर जिला कौंसिल के चेयरमैन रह चुके है। आपके ज़माने से ही यहॉ के प्राइमरी स्कूलों मे राष्ट्रीय प्रवृत्ति पैदा करने की कोशिश की जाती रही है। बुनियादी शिक्षा की योजना बनने से पहले ही यहॉं के स्कूलो में प० रविशंकर शुक्ल के प्रयत्न से कताई का काम शुरू कर दिया गया था। यह कताई पुराने पाठ्यक्रम के साथ ही चलती थी। मई १९३५ मे जिले के प्रायमरी स्कूलों के शिक्षकों को कताई सिखाने के लिए डेढ़ महीने का एक ट्रेनिग कैम्प खोला गया था जिसमें करीब १०० शिक्षको को ट्रेनिग दी गयी थी। १९३६ और १९३८ मे एक-एक महीने के ट्रेनिंग कैम्प फिर खोले गये और इसमें ५०-५० शिक्षकों को कताई की ट्रेनिंग दी गयी। इस तरह १९३९ मे इस ज़िले के करीब ७०-८० प्राइमरी स्कूलों में कताई का काम चल रहा था। इस स्वावलम्बी शिक्षा की तरक़्क़ी करने और लोगों मे इसके लिए उत्साह पैदा करने के विचार से पं० रविशंकर शुक्ल ने एक नुमायश और टूर्नामेंट का आयोजन किया। यह नुमायश और टूर्नामेंट अब एक सालाना मेला बन गया है। इसमें दूर-दूर के गावो के सैकड़ो विद्यार्थी भाग लेते हैं और हज़ारों लोग इसे देखने के लिए आते हैं।

१९३९ मे जब बुनियादी शिक्षा की योजना देश के सामने आयी तो रायपुर जिला कौन्सिल ने अपने स्कूलो मे इसका प्रयोग करना तय किया और अपने यहा के २५ शिक्षको को बुनियादी ट्रेनिग के लिये वर्धा के विद्यामन्दिर मे भेजा। इन शिक्षकों के ट्रेनिग पाकर लौटने पर मई-जून १९४० मे उनकी सहायता से बुनियादी स्कूलो मे तबदील किये जाने वाले स्कूलों के हेडमास्टरों को और कुछ उत्साही नार्मल पास शिक्षको को रायपुर में ट्रेनिग दी गयी ताकि वे सब बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तो और तरीक़ों से परिचित हो जायँ। इसके बाद जुलाई १९४० में ज़िले के १२ स्कूलो मे बुनियादी शिक्षा का प्रयोग शुरू कर दिया गया।

हमारी कोशिश यह है कि बुनियादी शिक्षा का यह प्रयोग कम से कम खर्च में चलाया जाय। हर बुनियादी दर्जे के लिए ५ धुनकियाँ और धुनाई का दूसरा सामान, ५ हाथ-ओटनी या सलाई-ओटनी, १ कस निकालने का काटा, पीतल की तराजू और बॉट और दो पुस्तकें इतनी चीजे दे दी गयीं है। हमने साल भर प्रयोग करके बतला दिया है कि पहले दर्जे मे जो १५० रु० का खर्च सरकार ने बतलाया है, उसके बदले हम सिर्फ ९५ रु० मे भी काम चला सकते है। इस खर्चे मे रुई की कीमत शामिल नहीं है क्योंकि कौंसिल को रुई के बदले सूत मिल जाता है। रुई की माग को पूरा करने के लिए हमने यह उपाय भी किया है कि स्कूल के अहाते मे कपास और देवकपास के पौधे लगवा दिये हैं। देवकपास पर हमारा ज्यादा ज़ोर है क्योंकि इसके पौधे कई साल तक रहते है और इनसे रुई भी काफ़ी मिलती है। देवकपास मे एक ख़ास बात यह भी है कि इसके बिनौले हाथ से ही छूट जाते हैं और कपास को बिना धुने सिर्फ तुन कर काता जा सकता है। कई स्कूलों में इसका सफल प्रयोग हो चुका है।

बुनियादी शिक्षकों ने बुनियादी दर्जे के बच्चों के अलावा दूसरे दर्जों के बच्चों को और शिक्षकों को भी धुनना और पूनियाँ बनाना सिखा दिया है। इससे पूनियों की दिक्कत मिट गयी है और स्कूलों को बचत भी हो गयी है।

ज़िले के स्कूलों मे जो सूत तैयार होता है उसका कपड़ा बुनवाने का और इस कपड़े की बिक्री का इन्तज़ाम भी हमने कर लिया है। हमने यह तय किया है कि बच्चें के सूत का कपड़ा उनके माता-पिताओ और अभिभावको को लागत के दामो में दिया जाय जिससे उनके दिल मे बुनियादी शिक्षा के लिए दिलचस्पी और अपने बच्चों के काम मे रुचि पैदा हो। बच्चो के काते हुए सूत से कोट और कमीजो के सादे व रंगीन कपडे, धोतियॉ, दरियॉ वगैरा बनाई जाती हैं।

बुनियादी स्कूलों की जाच हर महीने होती है। हर स्कूल मे इन चीजों की बाक़ायदा लिखतें रक्खी जाती हैं: कताई, पढाई-लिखाई, बच्चो पर असर और बच्चो द्वारा होने वाले समाज-सेवा के काम। कताई के साथ पढाई मे दूसरे विषयो का समवाय करने मे हमें बहुत कठिनाई अनुभव हुई। हमने समवाय के सरल उपाय निकालने की कोशिश की है पर इस दिशा मे हमें अभी तक पूरी सफलता

नहीं प्राप्त हो सकी है। बुनियादी दस्तकारी के लिये हमारे यहाँ दो घंटे दिये जाते हैं। बाकी समय में दूसरे विषय पढाये जाते हैं।

बच्चों के व्यक्तित्व और रहन-सहन पर बुनियादी शिक्षा का असर साफ नज़र आने लगा है। वे अपने शरीर की और गाव की सफाई पर ध्यान देने लगे है, और पहले से ज़्यादा शिष्ट, निडर, चुस्त और होशियार दिखायी पडते हैं।

बुनियादी शिक्षा जारी करने में गावों के लोगो की तरफ़ से कहीं कोई विरोध या अडचने नहीं हुई। अब तो लोग इसका और भी आदर करने लगे है। यहा तक कि कुछ गावो से हमारे पास अर्जियाँ आ रही हैं कि बुनियादी शिक्षा जारी कर दी जाय। इसका कारण यह है कि बुनियादी स्कूलो से गावो के लोगो को काफ़ी फायदा पहुचा है।

हमारे यहाँ के कई स्कूलों में दफ्ती की स्लेटे बनाने का और स्लेट पैंसिले तैयार करने का प्रयोग भी हो रहा है और इसमे अच्छी सफलता मिल रही है। स्लेटे बनाने के लिए पहले लोहे के बुरादे और काले घडे के टुकडो को अलग-अलग खूब बारीक पीस कर कपड-छान कर लिया जाता है। फिर दोनों की बुकनी बराबर हिस्सों में मिलाकर गाढी लेही मे घोल ली जाती है। यह मिश्रण दफ़्ती के दोनो तरफ लगा दिया जाता हैं और सूखने पर दफ़्ती को चिकने पत्थर से खूब घोट दिया जाता है। इस तरह तीन-चार बार लेप कर और सुखा कर घोटने से स्लेट तैयार हो जाती है।

स्लेट-पैंसिल इस तरह बनाते हैं कि सफेद नरम पत्थर को खूब बारीक पीस कर मोटे कपडे से छान लेते हैं और फिर छानी हुई बुकनी में थोडा-थोडा गोंद का पानी मिला कर बत्तियाँ बना लेते हैं। सूख जाने पर ये बत्तियाँ स्लेट पैंसिलों का काम देती हैं।

इन कामों से बच्चों को बहुत फ़ायदा पहुचा है, इसलिए हमारा इरादा है कि अगले साल से हम इन्हे सब स्कूलों में शुरू कर दे।

रायपुर ज़िला कौंसिल अभी तक यह सारा प्रयोग अपने खर्चे से चला रही है। सरकार से हमने अभी तक सहायता की माँग नहीं की है। सबसे बड़ी ज़रूरत हमे बुनियादी शिक्षकों की है और इसको पूरी करने के लिए हम सरकार से लिखा-पढ़ी कर रहे हैं कि हमे रायपुर मे एक बुनियादी शिक्षको की ट्रेनिंग क्लास खोलने की इजाज़त दे दे। [उर्दू से अनुवाद]

पिलानी का बुनियादी स्कूल

[जीवनलाल पंडित]

कस्बा पिलानी बिडला ख़ानदान की जन्मभूमि है। वैसे तो यहाँ की बस्ती ५००० से ज्यादा नहीं है, पर बिड़ला ट्रस्ट ने इसे राजपूतान में शिक्षा का एक अच्छा केन्द्र बना दिया है।

बिड़ला बेसिक स्कूल की बुनियाद १० जुलाई, १९३९ को डाली गया। इरादा यह था कि इसमे बुनियादी शिक्षा के पूरे सात साल के पाठ्यक्रम का प्रयोग किया जाय और स्कूल को स्वावलबी बनान का प्रयत्न किया जाय। पर खेद है कि कई कठिनाइयों के कारण हमारा यह इरादा आगे नहीं बढ़ सका है। सबसे बड़ी कठिनाई तो यह है कि जयपुर राज्य के शिक्षा-विभाग ने हमे दो से ज़्यादा बुनियादी-शिक्षक बाहर से बुलाने की अनुमति नहीं दी है, इसलिए हमें अपने स्कूल के ही शिक्षकों से काम लेना पड़ रहा है, जिन्हें बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तो से कुछ भी परिचय नहीं है।

जिन दिनों हमने यह प्रयोग शुरू किया, उन दिनों राजपूताने में भयंकर अकाल पड रहा था। बिड़ला ख़ानदान की ओर से स्कूल के बच्चों के लिए भोजन और वस्त्र का इन्तज़ाम कर दिया गया, इसलिए बच्चों की संख्या २५० तक पहुँच गयी। पर १९३९ के अन्त में वर्षा हो जाने से अवस्था बदल गयी और दिवाली तक बच्चों की सख्या सिर्फ ८० ही रह गयी।

इन्हीं बच्चों को लेकर हमने १९४० में दुगने जोश से काम शुरू किया और पहले दो दर्जों मे बुनियादी पाठ्यक्रम जारी कर दिया। बाकी दर्जों में राज्य के शिक्षा-विभाग का पाठ्यक्रम चालू है।

हमारे स्कूल के बच्चे कताई बुनाई और खेतीबाड़ी का काम करते हैं। स्कूल का समय ८ घटे रक्खा गया है, जिसमें कुल मिलाकर १४ घंटिया (Periods) होती हैं। काम के बीच में २०-२० मिनिट की तीन छुटियाँ दी जाती हैं। दस्तकारी के लिए डेढ़ घंटा, खेतीबाड़ी के लिए डेढ़ घटा और बाग़बानी के लिए आधा घंटा दिया जाता है। पहले चार दर्जों मे सिर्फ़ कताई और धुनाई होती है और बाकी के

तीन दर्जों मे बच्चों की इच्छानुसार कताई या बुनाई का काम सिखाया जाता है। बाग़वानी सबके लिए अनिवार्य है; पर खेती-बाडी सिर्फ तीसरे से सातवे दर्जे तक के बालको से कराई जाती है।

बच्चे होस्टल की सफाई करते है, बरतन मलते हैं और अपने लिए भोजन भी खुद ही बनाते है। चौदह साल का एक बच्चा ३०-३० मिनट की दो घंटियों मे ५ सेर आटे की रोटियाँ पका लेता है। इसी उम्र के दो बच्चे ३०–३० मिनिट की तीन घंटियो में ३०–३५ बच्चो के लिए भोजन तैयार कर लेते है। पहले तीन दर्जों के बच्चो को भोजन बनाने मे मदद देने के लिए एक नौकर भी दे दिया गया है।

सर्दियो मे भोजन बनाने के लिए दिन के काम से अलग समय दिया जाता है, लेकिन गर्मियों मे सुबह खेती-बाड़ी की घंटियों मे एक-एक टोली भोजन बनाती है। शाम को खेल–कूद होते हैं। वॉली बॉल, बास्केट बॉल, वगैरा के अलावा ऐसे भी खेल खिलाये जाते हैं जिनमे उपकरणों की ज़रूरत न हो। बच्चे सुबह ५ बजे उठते हैं और रात को १० बजे सो जाते हैं। दिन मे उन्हे तीन घंटे की छुट्टी दी जाती है।

हालाँकि हम अपने स्कूल मे पूरी तरह बुनियादी पाठ्यक्रम पर अमल करने में सफल नहीं हुए हैं, पर हमने स्कूल के सब कार्यों और हलचलों मे बुनियादी शिक्षा की भावना को कायम रखा है। समवाय पढ़ाई की लिखते हमने नहीं रखी है, पर दस्तकारी के काम की और बच्चो के सर्वांगीण विकास की लिखतें ठीक तरह रक्खी गयी हैं। इन लिखतों से पता चलता है कि बच्चो मे नीचे लिखी अच्छाइयाँ पैदा हुई है :—

(१) भिन्न-भिन्न जातियों के बालको मे मैत्री और सद्भावना,
(२) बातचीत की समान भाषा;
(३) परिश्रम के लिये आदर और हाथ के काम से प्रेम;
(४) जात-पाँत की भावना का लोप,
(५) आत्म-निर्भरता, मौलिकता और आत्म-विश्वास;
(६) साधारण ज्ञान की वृद्धि,
(७) सोच-विचार और बर्ताव के तरीकों मे परिवर्तन;
(८) घर के कामो में सहायता और माता-पिता के लिये उपयोगी होना।

हम अपने स्कूल को पूरी तरह स्वावलम्बी तो नहीं बना सके हैं, पर इस दिशा में जो कुछ हुआ है, उससे हमारे हृदय में आशा की ज्योति पैदा हुई है। इस सम्बन्ध मे मैं यह स्पष्ट कर देना आवश्यक समझता हूं कि हमारी "स्वावलम्बन" की धारणा ज़ाकिर हुसेन कमेटी की रिपोर्ट से बिल्कुल भिन्न है। हमारा उद्देश्य यह है कि हरएक विद्यार्थी अपने खाने और पहनने की जरूरतो को अपनी कमाई स पूरा कर सके। स्वावलम्बन के इस कार्य में हमारे रास्ते मे जो-जो बाधाये आयीं, वे ये हैं:—

(१) ऑधियॉ—इनके कारण साल में चार महीने काम बन्द रखना पड़ा।

(२) पानी पर ख़र्च—खेतों की सिंचाई नल के कुओं (Tube-wells) से होती हे, जिनके पंप बिजली से चलते हैं। एक तो इजन चलाने का तेल यहाँ महँगा पडता है, दूसरे खुश्की की वजह से सिंचाई भी ज़्यादा करनी पडती है।

(३) कच्चे मकान—इनकी मरम्मत और लिपाई-पुताई मे काफी समय और परिश्रम खर्च होता है।

(४) बाहर से आनेवाले माल पर भारी ज़कात।

(५) शिक्षकों की नातजुरबेकारी।

(६) बच्चो की अनिश्चित हाज़िरी।

बच्चों के काम और कमाई के ऑकड़े

साल भर में २७० काम के दिनों में १०० बच्चे रोज़ ३ घंटे काम करें, तो (गैरहाज़िरी के लिये १० % काट कर) कुल ७२,९०० घंटे

५५ बीघे जौ या गेहूँ की खेती के लिये	४,०१५ घंटे
,, ,, बाजरे ,, ,,	४,४०० ,,
बाग़वानी के काम के लिये	१,९६० ,,
कुल	१०,३७५ घंटे
दस्तकारी के काम के लिये बच्चे	६१,५२५ ,,

बाजरे की फ़सल से आमदनी	२५० रु०
जौ ,, ,, ,,	२५० रु०
साग भाजी,, ,,	६०० रु०

छः पाई फ़ी घटे के हिसाब से बाकी के ६१,५२५ घंटों में
दस्तकारी से सभावित आमदनी १,९२२रु०

कुल ३,०२२ रु०

१०० बच्चों का ३ रु. ६ आ. ६ पा. फ़ी बच्चे के
हिसाब से ९ महीने का ख़र्च ३,००९ रु०

नोट.–दस्तकारी के काम से ६ पाई फ़ी घंटा आमदनी का हिसाब लगाया गया है। पर अभी सिर्फ़ ३ पाई फी घंटा आमदनी हो रही है।

[अंग्रेज़ी से अनुवाद]

गुरुकुल कांगड़ी में बुनियादी तालीम का एक वर्ष

[हरिदत्त]

सवत् १९९७ की समाप्ति के साथ गुरुकुल कागडी में बुनियादी तालीम का पहला वर्ष भी समाप्त होता है। इस एक साल मे शिक्षासम्बन्धी अनेक नये अनुभव हुए। कताई के बारे में कई अमली कठिनाइयॉ आयीं और उनके हल सोचे गये। जाकिरहुसेन कमेटी की रिपोर्ट मे दिये गये पाठ्यक्रम को, ख़ासकर उनके कताई सम्बन्धी हिस्से को आदर्श मान कर उस अमल में लाने की भरसक कोशिश की गयी। वर्ष के समाप्त होने पर, सारी प्रगति पर नजर डालते हुए, यह देखना आवश्यक हो जाता है कि हम इस आदर्श को कितना निभा सके हैं और हमारे अनुभवो के आधार पर ज़ाकिरहुसेन कमेटी के पाठ्यक्रम में फिर परिवर्तनों की आवश्यकता है।

पहली छमाही की रिपोर्ट "नई तालीम" के मार्च १९४१ के अंक में निकल चुकी है। वर्ष भर की आलोचना करने के पहले दूसरी छमाही की कताई की रिपोर्ट देना आवश्यक है। इसमें मज़दूरी की दर सूत के नम्बर के अनुसार अ० भा० चरखा संघ की मंजूर की गई दर से लगायी गयी है। कताई के साथ धुनाई की मजदूरी भी जोडी गई है। इस छमाही की यह विशेषता रही कि जितनी

भी रुई विद्यार्थियों ने इस अर्से मे काती, वह सब उन्होंने ही बोयी, चुनी, ओटी और धुनी थी। इस तरह कताई और धुनाई से ७|||=)|| और कपास की क़ीमत से १५||) हमें प्राप्त हुए। इसमें से गुम हुए और टूटे-फूटे सामान की क़ीमत ७) निकाल दी जाय, तो विद्यालय को ९६|=) की आमदनी हुई। इस प्रकार फ़ी विद्यार्थी आय ७ आना ७|| पाई हुई। इसके साथ पिछली छमाही की १० आना ५|| पाई की कमाई जोड़ी जाय, तो हर विद्यार्थी की साल भर की कमाई १=)१ हुई।

दूसरी छमाही की आय कम होने का कारण यह था कि इस छमाही में कताई बहुत कम दिन हुई। पिछली बार कताई के दिन १३२ थे, मगर इस बार कुल ९० ही थे। कताई के दिनों की कमी के कई कारण हैं। ऊपर लिखा जा चुका है कि इस छमाही की विशेषता यह थी कि विद्यार्थियों ने कपास की खेती से लेकर सूत कातने तक सब प्रक्रियाएं खुद की थीं। ये सब काम कताई के लिये नियत समय में ही हुए, इस कारण उस समय विद्यार्थी कताई न कर सके। साथ ही पिछली छमाही में कताई के लिये १|| घण्टा दिया जाता था, मगर इस छमाही में पढ़ाई की अधिकता के कारण १। घण्टा ही दिया गया। परन्तु अपने-आप धुनने का परिणाम बहुत अच्छा हुआ है। विद्यार्थियों की गति, सूत क नम्बर, मज़बूती व समानता में काफ़ी उन्नति हुई। उत्पादन की शक्ति भी बढी। पिछली छमाही में १|| घण्टा कताई की दैनिक आमदनी ९४ पाई थी किन्तु इस छमाही में १। घण्टे की कताई में वह आमदनी १०१ पाई हो गयी। यदि इसे ३ घण्टे २० मिनट की अवधि में प्रकट करें, तो दोनों छमाहियों की कमाई क्रमश. २.०९ पाई तथा २.७ पाई हो गयी।

इस छमाही में कताई करते हुए तार के न टूटने पर अधिक ध्यान दिया गया। इस बार का सूत अपनी धुनाई होने के कारण अधिक अंक का, मजबूत और समान था। कताई की परीक्षा के समय दूसरी बातों के साथ तार टूटने की संख्या भी ध्यान से देखी गई और यह भी ख़्याल किया गया कि विद्यार्थी टूटे तार को कितनी बार साँधते हैं और कितनी बार तोड कर फेकते हैं। सारे विद्यालय मे ऐसा कोई विद्यार्थी नहीं निकला, जिसका तार एक बार भी न टूटा हो, लेकिन अधिक से अधिक बार तार टूटने की सख्या १५ थी और कम-से-कम २। फेकने वालों की

संख्या बहुत कम थी। २०२ विद्यार्थियों में केवल १५-२० विद्यार्थियों ने ही टूटा तार फेंका। बाकी सबने टूटा तार साँध लिया।

वर्तमान छमाही में धुनाई का काम खूब बढाया गया। विद्यालय में काम आयी हुई पूनियाँ विद्यार्थियों ने खुद धुन कर तैयार की थीं। चौथी व पॉचवी कक्षा के सभी विद्यार्थी धुनाई अच्छी तरह सीख गये। तीसरी श्रेणी भी धुनाई कर लेती है। पहली-दूसरी के लिये चौथी-पाँचवीं धुनाई करती है। इस सत्र में ३१ ताँतों के खर्च से विद्यार्थियों ने ६० सेर रुई धुनी। पिछले सत्र में ३५ सेर रुई ३२ ताँतों से धुनी गयी थी। इससे स्पष्ट है कि इस काल में विद्यार्थियों ने धुनाई में काफ़ी तरक्की की है। कॉकर का खर्च हमारे यहाँ बहुत कम होता है। इसका कारण यह है कि हम इसकी जगह सख्त चमड़े का व्यवहार करत हैं।

इस बार कुछ नया सामान भी मगवाया गया। ३० पेटी-चरखे लिये गये। बुनियादी तालीम के शिक्षा-केन्द्रों तथा विद्यालयों मे किसानचक्र के इस्तेमाल पर ख़ास जोर दिया जाता है। परन्तु अनुभव से हमे मालूम हुआ है कि अधिक दाम का होने पर भी पेटी-चर्खा किसान चक्र से कई बातों मे ज्यादा मुफ़ीद है। लड़के किसान-चक्र को बहुत जल्दी तोड-फोड कर खराब कर देते हैं। पेटी-चर्खे से किसान-चक्र ज़्यादा जगह घेरता है, सुरक्षित कम होता है और इसमें पेटी चर्खे जितनी सफाई नहीं रक्खी जा सकती। पॉचवीं श्रेणी में ६ महीने बाद जिन विद्यार्थियों ने तकली पर कताई और बुनाई में अभीष्ट गति प्राप्त कर ली उन्हे ही पेटी-चर्खे पर सूत कातने की आज्ञा दी गयी। पेटी-चरखों के सिवा ५ सलाई ओटनी, हाथ-ओटनी, धुनकियॉ, ३६ ताँतें और एक धनुष—तकुमा भी मगाया गया।

उद्योग के लिये जरूरी है कि हिसाब ठीक तरह से रखा जाय। हिसाब रखने का तरीका न तो ऐसा होना चाहिए कि अध्यापक को क्लर्क बन जाना पडे और न इतना कम कि सही-सही हिसाब तैयार करने मे दिक्कत हो। हमने अपने यहॉ हिसाब को इन दोनों दोषों से बचाने का प्रयत्न किया है। विद्यार्थियो के रोज के तार उसी दिन अध्यापक तार-बही में लिख लेता है और उनका जोड़ भी कर लेता है। मुख्य अध्यापक से रोज के काम पर हस्ताक्षर कराये जाते है और वह तारों की संख्या मे जॉच—पडताल करता है। बहुत फ़र्क़ हो तो उसका कारण भी पूछता है। तीसरी से पॉचवीं तक के विद्यार्थि को महीने में दो बार ओटी हुई रुई

तौल कर दी जाती है। उसका धुनवाना, पूनी बनवाना और कतवाना अध्यापक के जिम्मे होता है। लड़के उस रुई के ममत्व—बुद्धि के कारण बहुत अच्छी तरह धुनते हैं। हर पखवाड़े विद्यार्थियों से कता सूत वापस लेकर तौल लिया जाता है और उसका नम्बर मिलाकर मज़दूरी का भी हिसाब लगा दिया जाता है। उस समय सूत की रिपोर्ट हर श्रेणी में भेजी जाती। सूत ठीक न हो तो श्रेणी के शिक्षक का ध्यान उधर खींच दिया जाता है।

इस वर्ष कताई तो पॉचो श्रेणियो में कराई गई, किन्तु वर्धा शिक्षा-पद्धति के अनुसार समवाय शिक्षा-पद्धति द्वारा पहली श्रेणी को ही पढ़ाया गया। विशेष विस्तार मे न जाकर सब विषयों के उदाहरण मात्र देना ही ठीक रहेगा।

मूल-उद्योग—उद्योग कताई रखा गया। कताई का महत्व चित्त पर अंकित करने के लिए कताई का घंटा शुरू मे रक्खा गया। इसका दूसरा लाभ यह था कि आनेवाले अन्तरों में शिक्षकों को कताई की प्रक्रियाओं से सम्बन्ध करने में सुगमता रहती थी। कताई के सिखाने में शुरू मे बहुत दिक्कत पेश आयी। एक शिक्षक के लिए २० विद्यार्थियो की श्रेणी को सिखाना बहुत कठिन जान पड़ा। अन्त में, पंचम श्रेणी के पॉच लडकों को चार-चार विद्यार्थी सौंप दिये गये। उन्होंने शिक्षक की देख-रेख मे बच्चो को सिखाना शुरू किया। इस तरह १५ दिन में ही बच्चे कताई की कला की मुख्य-मुख्य बातें सीख गये। इसमें हमें यह अनुभव हुआ कि पुरानी और नई तालीम में यह महान् अन्तर है। पुरानी तालीम तो कारखानों की सामूहिक उत्पत्ति (mass production) की तरह है, जिसका परिणाम हिंसा, मार-काट और वर्तमान काल के भीषण युद्ध हैं, किन्तु नयी तालीम एक शिल्पी के कौशल के समान है जो खूब गढ-गढ कर सुन्दर मूर्ति का निर्माण करता है। कताई की परीक्षा के समय भी दूसरी श्रेणी के विद्यार्थियों से सहायता ली गई और अन्य बातों के साथ-साथ तार कितनी बार टूटता है, इस पर विशेष ध्यान दिया गया।

मातृभाषा—शुरू में छः महीने बातचीत के रूप मे ज़बानी शिक्षा दी गयी। तकली के बारे में सुन्दर कविताएँ याद करायी गयीं। बच्चो को आस पास के गॉवों में यात्राएँ कराकर उन्हें गाँव के काम करने वालों का परिचय कराया गया। बढ़ई, लुहार, जुलाहा, किसान इन सब के काम को दिखाकर बाद

मे इनके सम्बन्ध में प्रश्न पूछकर बच्चो से देखी हुई बातों को अभिव्यक्त कराने का प्रयत्न किया गया। किताब से पढना तो ६ महीने बाद ही शुरू किया गया, किन्तु खेल-कूद मे अक्षर-ज्ञान पहली छमाही मे थोड़ा-बहुत शुरू हो गया था। कताई मे काम आनेवाली और आस-पास की परिचित वस्तुओ के वाक्य बनाकर उनके सामने रक्खे गये और वाक्य-पद्धति से अक्षराभ्यास कराया गया।

सामाजिक विज्ञान—इसमे अमली तालीम पर ज़्यादा जोर दिया गया। बच्चों को उठने-बैठने के ढग और नमस्कार के उचित तरीके का अभ्यास कराया गया। जब लड़कों ने शिक्षक को अपना काम दिखाने की उतावली की, तब उन्हे अपनी बारी की बाट देखन और कतार बॉधने की पद्धति का महत्व बताया गया। इसी तरह, कमरे के कूडेदान पर भी पाठ दिये गये। ध्रुव, प्रह्लाद, वगैरा पुराने बालकों की कहानियाँ सुनाकर, कठोर परिश्रम, व्यवसाय, निश्चय की दृढता आदि चारित्रिक गुणो के विकास की ओर ध्यान दिया।

प्राकृतिक विज्ञान—स्कूल के चारों ओर के वातावरण को प्रत्येक ऋतु के अनुकूल पौधों, पेडों, पशु-पक्षियों तथा आकाश के द्वारा चाल का अच्छी तरह अवलोकन कर, तीन हिस्सो में बाँट दिया गया। चैत-बैसाख मे चारो तरफ आम के पेड़ बौर से लदे होते हैं। उस वक्त बच्चो को बौर दिखाकर वनस्पति-जगत के फूल और फल के क्रम को बताया गया। आमो पर बैठी कोयल का पाठ भी इसी के साथ दिया गया। वर्षा-ऋतु में बादल, इन्द्र-धनुष और बिजली की कुछ बातें बतायी गयीं। सर्दियो में गाजर, मूली, गोभी, आदि तरकारियों का परिचय कराया गया।

गणित—गिनती सूत के तारों की सहायता से सिखायी गयी। बच्चों में स्लेट पर लिखते समय पहले जा अंक बिल्कुल निर्जीव जान पडते थे, अब उनमें एक नयी जान आ गयी। गणित जैसा शुष्क विषय अब उन्हें सरस मालूम होने लगा।

इस तरह समवाय पद्धति से शिक्षा देते हुए पहली श्रेणी में कोई बडी दिक्कत नहीं हुई। दूसरे विषयों का पाठ्यक्रम ता पूरा हो गया। मगर कताई का ज़ाकिर हुसैन कमेटी का पाठ्यक्रम पूरा नहीं हुआ। इसका कारण शायद यह था कि हमने कताई को ३ घंटे २० मिनट न देकर कुल डेढ़ घटा ही दिया था।

फिर भी हमने यह अनुभव किया है कि पहिली श्रेणी की कताई के पाठ्यक्रम में दो बातों पर अवश्य विचार होना चाहिए।

(१) कमेटी ने पहली श्रेणी के पाठ्यक्रम में धुनाई को स्थान दिया है। हमने पहली श्रेणी के बच्चों से छोटी धुनकी चलवाने का प्रयत्न किया, किन्तु चलाने की बात तो दूर रही ६ से ९ बरस के बच्चे उस धुनकी को ठीक तरह से उठा भी नहीं सकते थे। अगर पहली श्रेणी के बच्चों की उमर १०–१२ बरस तक की हो, तो वे यह काम कर सकते हैं, किन्तु ६–७ बरस की उम्रवाले बच्चों के लिये धुनकी का काम असम्भव है।

कमेटी ने पहली श्रेणी में बायें हाथ से तकली चलाने का प्रस्ताव किया है। तीन महीने बाद हमने बच्चों से बायें हाथ से तकली चलवानी चाही किन्तु वे चला नहीं सके। इसके बाद भी अनेक प्रयत्न किये गये किन्तु हम अपने प्रयत्नों में सफल नहीं हो सके।

आशा है बुनियादी तालीम में दिलचस्पी रखनेवाले इन सूचनाओं पर विचार करने की कृपा करेंगे।

बुनियादी शिक्षक की कठिनाइयाँ

(शिवदयाल सिह)

वृन्दावन (चम्पारण) के सघन हलके मे बुनियादी स्कूल खोलने तथा उन्हे चलाने में अभी तक हम लोगों को जो-जो कठिनाइयॉ हुई हैं उनका बयान मैं आपके सामने रखता हूँ । सम्भव है हमारी कठिनाइयाँ और कामयाबियों को सुनकर आपको कुछ लाभ हो ।

हम लोगों के सामने सबसे पहला सवाल लड़कों को इकट्ठा करने का था । इस स्कीम के विरोध करने वाले कुछ लोगो ने पहले से ही यह प्रचार कर रक्खा था कि ये नये स्कूल काग्रेस वालो के बन रहे हैं, इनकी मन्शा सब जातियों के लडको को एक साथ पढाकर जात-पॉत तोडना है । ये लोग लडकों को सूत कातना सिखायेंगे और उन्हे स्वराज्य की लड़ाई के लिये जेल जाने को तैयार करेंगे । सौभाग्य या दुर्भाग्य से उन्हीं दिनों वहाँ गाधी सेवा संघ की बैठक भी हुई और गाववालों ने हिन्दू-मुसलमान, हरिजन वगैरा सब जातियों के लोगों को एक साथ रहते-सहते और खाते-पीते देखा । बस, उनकी यह धारणा पक्की हो गयी कि स्कूल सचमुच उन लोगो की जात-पॉत नष्ट करने के लिये खोले जा रहे हैं । लेकिन जो दो-चार आगे बढ़े हुए विचार के लोग वहॉ थे वे अपने बच्चो को स्कूल मे भेजने लगे और हमने अपना काम शुरू कर दिया । गाव के लोगो ने जब स्कूल मे आकर देखा कि लड़कों को सचमुच कुछ पढना-लिखना नहीं सिखाया जाता, बल्कि सिर्फ तकली नचाना और तकली से सूत कातना सिखाया जाता है, तो उन लोगों में पहले से फैलायी गयी ग़लत-फहमियॉ और भी मजबूत हो गयीं और वे लोग अपने लड़कों को हमारे बेसिक स्कूलो में भेजने का पहले से भी ज्यादा विरोध करने लगे ।

इसकी सूचना हम लोगो ने अपने सुपरवाइज़र, आर्गेनाइज़र और बेसिक एजुकेशन बोर्ड के सेक्रेटरी के पास भेज दी । लेकिन हम लोगो ने अपनी कोशिशें बराबर जारी रक्खीं । हम एक साथ गॉव में जाते, गाव वालो से मिलते और उन्हे अपने लडकों को स्कूल भेजने के लिए समझाते । परन्तु उससे लड़कों की सख्या में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई । तब हमने एक दूसरा तरीका सोचा । हमारे बेसिक

दिलचस्पी और आनन्द लेने लगे, यहाँ तक कि जो बच्चे सुबह किसी कारण से स्कूल नहीं आते, वे सध्या समय खेलने के लिये अवश्य ही आ जाते हैं।

हम लोगों की तीसरी कठिनाई थी स्कूल के काम की दैनिक प्रगति मे बाधा। हाजिरी की गडबडी तो इसका मुख्य कारण थी ही, पर इसके अलावा और भी कई कारण थे। एक तो यह था कि बच्चे बिना कुछ खाय-पिये ही स्कूल चले आते थे और कुछ देर के बाद भोजन के लिए छुट्टी मॉगने लगते। इसलिए हमने उनके मा-बापों से यह प्रार्थना की कि वे अपने बच्चों को सबेरे कुछ जलपान के बाद स्कूल भेजें और वे लोग इस ओर कुछ ध्यान भी देने लगे हैं। दूसरी बात यह थी कि प्राय लड़के बिना हाथ मुँह धोये ही स्कूल आ जाते और स्कूल में आकर पाखाना जाने की छुट्टी मॉगने लगते। इसके लिए हम लोगों ने यह प्रबन्ध किया कि सबेरे एक शिक्षक बस्ती में चला जाता और हरएक लड़के के घर जाकर यह कोशिश करता कि लड़के शौच वगैरा से निबट कर स्कूल आये। इस तरह कुछ दिनों की लगातार कोशिश से धीरे-धीरे बच्चों को सबेरे पाखाना जाने की आदत पड गयी, और यह कठिनाई दूर हुई।

तीसरी कठिनाई थी लडकों के कपडों की। अधिकाश लडके फकीरों की तरह कमर मे सिर्फ फटी लगोटी बाधे स्कूल आते। जाडे के दिनों तो ऐसी हालत में उनको स्कूल में रखना मुश्किल हो जाता। इसकी ओर भी हम लोगो ने बच्चा के माँ-बापो का ध्यान दिलाया। परन्तु इससे कोई विशेष लाभ नहीं हुआ क्योंकि वे बेचारे गरीबी के कारण बच्चो को काफ़ी कपडा दने से मजबूर थे।

खुश-किस्मती से उसी समय बिहार सरकार ने ग्राम-सगठन के कार्यकर्ताओ की व्यावहारिक शिक्षा के लिए हमारे ही सघन हलके को चुना। सरकार की ओर से कुछ मुफ्त चर्खे बाटे गये और उन कार्य-कर्त्ताओं ने ग्रामीणो को ग्राम-सुधार के दूसरे कामों के साथ-साथ चर्खे पर सूत कातना भी सिखलाया। ये लोग तो एक महीने बाद दूसरी जगह चले गये, परन्तु हम लोगों ने उनके चलाये हुए कामो को सम्हाल लिया और कताई को खास तौर पर जारी रखा। इस कताई क काम मे गॉववालों को अपने बच्चों से, जा हमारे बसिक स्कूलो मे पढते हैं, बहुत सहायता मिलती है। बच्चे अपने घर से रुई लाते हैं, छुट्टी के बाद उसे धुनते हैं और पूनियॉ बना कर अपने माँ—बाप को देते है। इसके अलावा वे खुद भी घर पर

सूत कातते हैं। उनके माँ–बाप जुलाहों से इन सूतों का कपडा बुनवा लेते हैं। इस तरह गाँव मे अब बहुत से लोग न सिर्फ अपने बच्चों के लिए बल्कि अपने भी कपडा तैयार करने लगे हैं। बच्चे यह महसूस करते हैं कि स्कूल में जो कताई-धुनाई सिखायी जाती है उससे वे अपने घर पर फायदा उठा रहे हैं। इसलिए कताई के उद्योग मे उनकी सच्ची लगन पैदा हो गयी है और उनमे एक दूसरे से आगे बढने की होड भी लगी रहती है।

इस समय हम लोगों के सामने सबसे बड़ी कठिनाई पाठ्य पुस्तकों के न होने की है। इस कमी को पूरा करने के लिए हमने यह किया है कि बच्चे स्कूल मे जो काम करते हैं, उसके आधार पर कहानी, नाटक, कविता वगैरा गत्ते के बडे-बडे टुकड़ों पर लिख कर हम उन्हें पढने के लिए देते हैं और वे उन्हें बड़े शौक और दिलचस्पी से पढते हैं। परन्तु इस तरह की पाठ्य–सामग्री से बच्चों को वे ही बातें पढने को मिलती हैं जिनका अनुभव वे दस्तकारी में स्वयं अपने हाथ–पैरों को हिला–डुला कर करते हैं। लेकिन यह काफी नहीं है। बच्चे दूसरों के अनुभव और ज्ञान से भी कुछ लाभ उठावें, इसका भी प्रबन्ध होना चाहिए। इसके अलावा जब बच्चे अपने साथी प्राइमरी स्कूल के बच्चों को किताबें पढ़ते देखते हैं तो बार-बार हम लोगों से किताबों के लिये कहते हैं। यहाँ तक कि कुछ लडके जब किसी मेले या बाजार में जाते हैं तो वहा से बाज़ारू किताब खरीद लाते हैं। इससे यह बात साफ–साफ मालूम होती है कि बच्चे किताबों के लिये बहुत उत्सुक हैं। यह बडी खुशी की बात है कि पटना के बेसिक ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापक ने दूसरे और तीसरे ग्रेड के लड़कों के लिए दो किताबें तैयार की हैं जो शीघ्र ही हिन्दुस्तानी तालीमी संघ की ओर से छपने वाली हैं।

बुनियादी शिक्षा के प्रयोग में कुछ दिक्कतें

(अ) सवाल

[उत्तमसिंह तोमर]

सिवनी के बेसिक नार्मल स्कूल में बुनियादी तालीम के लिए शिक्षक तैयार किये जाते हैं। इस नार्मल स्कूल के साथ शिक्षकों के अभ्यास के लिए एक प्रैक्टिसिंग स्कूल भी हम चला रहे हैं। इस स्कूल की पहली और दूसरी कक्षाओं में बुनियादी तालीम जारी कर दी गयी है। हमने उद्योग और अनुबंध की शिक्षा में कुछ सफलता हासिल कर ली है। लेकिन हमारे सामने कुछ दिक्कतें ऐसी आयी हैं जिन्हें हम हल नहीं कर सके हैं। इन दिक्कतों को मैं आपके सामने रखता हूँ।

हमारी पहली दिक्क़त यह है कि हम अभी तक यह निश्चय नहीं कर सके हैं कि रोजाना समय–विभाग में दस्तकारी के लिए कितना समय दिया जाय। कान्फ्रेंस में जो रिपोर्ट पढ़ी गयीं उनमें किसी में दस्तकारी के लिए तीन घंटे देने का ज़िक्र है, किसी में दो घंटे का, तो किसी में डेढ ही घंटे का। लेकिन पाठ्यक्रम में दस्तकारी का समय ३ घंटे २० मिनट रक्खा गया है। मेरी प्रार्थना यह है कि दो साल के अनुभवों के आधार पर अब इस कान्फ्रेंस को इस सम्बन्ध में किसी नतीजे पर पहुँचना चाहिए और यह तय कर देना चाहिए कि दस्तकारी के लिए कितना समय दिया जाय। हमारा अनुभव तो यह हुआ है कि बच्चे पहले आध घंटे तक तो उत्साह से काम करते हैं, लेकिन उसके बाद कुछ थके हुए से मालूम पडने लगते हैं। उनकी गति में भी काफ़ी फ़र्क़ मालूम देता है। पर अगर यही काम दो टुकड़ों में, यानी बीच में कुछ समय का अवकाश देकर कराया जाय, तो बच्चे एक–डेढ घंटे तक काम कर सकते हैं। बुनियादी पाठ्यक्रम में कताई की गति का जो स्टेण्डर्ड दिया हुआ है वह छै महीनों में पूरा हो जाता है। ऐसी हालत में कताई को ३ घंटे २० मिनट देने के बजाय डेढ घंटा ही दिया जाय तो काम निकल सकता है। यह बचा हुआ समय हम दूसरे विषयों की पढ़ाई के लिए दे सकते हैं।

दूसरी दिक्कत पाठ्यक्रम के बारे में है। हरेक प्रांत ने अपने अपने सुभीते के मुताबिक पाठ्यक्रम में परिवर्तन और संशोधन कर दिये हैं। मेरे ख्याल से इस तरह

के परिवर्तन करने के बारे मे यह तय हो जाना चाहिए कि पाठ्यक्रम की कम-से-कम इतनी बातें तो कायम रहनी ही चाहिए। जुदा-जुदा प्रातो में वहाँ की परिस्थिति के अनुसार पाठ्यक्रम मे कुछ-न-कुछ परिवर्तन तो करने ही चाहिए लेकिन इसके बारे मे कोई सिद्धान्त निश्चय हो जाना चाहिए जिससे लोग पाठ्यक्रम के मूल आधार को छोड कर सीमा से बाहर न चले जायें।

तीसरी दिक्कत जो मै आपके सामने रखना चाहता हूँ वह पढ़ाई के बारे मे नहीं बल्कि बच्चो के बारे मे है। बुनियादी तालीम बच्चो की सर्वांगीण उन्नति का दावा करती है। इस सर्वांगीण उन्नति का मतलब मैं यह समझता हूं कि बच्चों की मानसिक, शारीरिक और नैतिक उन्नति हो। मानसिक और नैतिक उन्नति के लिए तो हम पाठशाला में कोशिश करते ही है, लेकिन बच्चों की शारीरिक उन्नति का सवाल उनके खाने-पहनने से सम्बन्ध रखता है। जब तक बच्चों को अच्छा खाना और साफ-सुथरा कपड़ा नहीं मिलता, तब तक बुनियादी तालीम का यह हिस्सा एक तरह से अधूरा ही है। इसलिए मेरी राय यह है कि बच्चो को कम से कम एक वक्त का खाना स्कूल की तरफ़ से देने का इन्तजाम होना चाहिए।

चौथी दिक्कत दस्तकारी से तैयार होनेवाले सामान की बिक्री से सम्बन्ध रखती है। ऐसा इन्तज़ाम होना ज़रूरी है कि बच्चे जो कुछ सामान बनाये वह सरकार खरीद ले। इससे स्कूलों का बहुत-सा बोझ कम हो जायगा। इस वक्त हालत यह है कि हमारे पास ढेर का ढेर कता हुआ सूत पडा है। इस सूत का क्या किया जाय इसके बारे मे न तो सरकार ही कुछ करती है और न हमें ही कुछ सूचना है। बने हुए सामान का पैसा न मिलने से बच्चों पर भी बुरा असर होता है। इसलिए बुनियादी तालीम जारी करने से पहले यह तय होना जाना चाहिए कि बच्चों के बनाये हुए सामान की खपत किस तरह होगी।

पाँचवीं दिक्कत पाठ्य पुस्तकों की है। हमें बच्चों और शिक्षकों दोनों के लिए किताबो की जरूरत है। मगर मेरे ख्याल से बच्चों को बनिस्बत शिक्षकों के लिए किताबों की ज्यादा जरूरत है। पहले दो दर्जों में बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तकों के बिना भी काम चल सकता है, मगर शिक्षको को रास्ता दिखानेवाली पुस्तकें बहुत जल्दी तैयार होनी चाहिए।

[आ] जवाब

[डा० ज़ाकिर हुसेन]

इस जलसे में जो मज़मून आपके सामने पढ़े गये हैं उनसे आपको अन्दाज़ा हुआ होगा कि बुनियादी तालीम का काम करनेवाले अपने काम को बेखबरी में और बेसमझे-बूझे नहीं कर रहे हैं, बल्कि उसकी सब अच्छाइयों और बुराइयों पर, उसकी सब दुश्वारियों (कठिनाइयों) पर, उनकी नजर है। तोमर साहब ने जताकर कुछ बातें पूछी हैं इसलिए मैं उनका शुक्रिया अदा करता हूँ कि उनके सवालों की वजह से मुझे भी कुछ कहने का मौक़ा मिला।

तोमर साहब ने पूछा है कि दस्तकारी के लिए कितना वक्त देना चाहिए? बात सच्ची यह है कि नाप-तौल के सवाल में पूरे तजुरबे बगैर कोई जवाब देना ठीक नहीं होगा। हमने जब बुनियादी तालीम का निसाब (पाठ्यक्रम) बनाया था तो उस वक्त दस्तकारियों में सिर्फ़ कताई-धुनाई के बारे में हमें यह मौक़ा था कि हम कुछ नाप-तौल से काम ले सकें। इस काम में बहुत-से समझदार और काम को जाननेवाले लोग बरसों से लगे हुए थे। हमें इनसे यह मालूम हो सकता था कि इस काम के अलग-अलग हिस्सों को सीखने के लिए और इस तरह सीखने के लिए कि इससे बस वक्त ही न कट जाय बल्कि कुछ सच्चा काम भी हो जाय, कितनी मुद्दत और कितना वक्त चाहिए। उनके बताने पर हमने बुनियादी मदरसों के लिए भी निसाब में दस्तकारी का वक्त मुकर्रर किया था। इस पर शुरू ही से लोग बहुत चीखे-चिल्लाये लेकिन इनके चीखने-चिल्लाने की तो वजह ही ग़लत थी। वे तो दस्तकारी को तालीम नहीं समझते थे और उनका ख़याल था कि दस्तकारी को इतना वक्त दे दिया गया तो दूसरे "मज़मूनों" के लिए वक्त कहाँ से आयेगा और 'तालीम' कैसे होगी। अब क्या कीजिए कि हम लोगों के सर में यह ख़्याल बैठ गया है कि दस्तकारी खुद तालीम है। काम अगर समझकर और दिल लगाकर अच्छी तरह किया जाय और उसको इस तरह करने के लिए जिन-जिन दूसरी बातों का जानना ज़रूरी हो, या उसके सिलसिले में और जिन-जिन बातों के जानने को जी चाहे या जिन-जिन और कामों को करना या जो-जो और आदतें पैदा करना ज़रूरी हो, वे सब की जायँ, तो इसी से बच्चे की सही और

सच्ची तालीम होती है। इस सच्ची तालीम में जितना वक़्त लग जाय अच्छा है। मगर फिर भी लोग जो तालीम को एक मिला-जुला काम नहीं समझते और उसके अलग-अलग टुकड़े जरूर करना चाहते हैं, वे बराबर घंटों और मिनटों का हिसाब लगाते है। उनको मेरा जवाब यह है कि पहले उन्हे हमारी तजवीज़ के दिये हुए वक्तों पर काम करना चाहिए। अगर उसमे वे कोई बुराई पाये तो उसे बदलवायें। लेकिन मेरे ऐसा कहने से क्या होता है? बुनियादी मदरसे जो लोग चला रहे हैं उनपर तो मेरा हुकुम नहीं चलता। वहाँ लोगो ने समझकर या बेसमझे वक़्त मे कमी-बेशी की है। इन तब्दीली करनेवालों को यह देखना चाहिये कि अगर उन्होंने हाथ के काम का वक्त कम किया तो क्या हाथ के काम के लिये हमने जो मयार (standard) ठहराया था उसे भी घटाना पडा या नहीं। अगर नहीं, तो उनको यह कहने का मौका है कि कम वक़्त देकर भी काम हो सकता है। उस वक्त हमें उनकी बात पर ग़ौर करना चाहिए। फिर शायद एक दस्तकारी और दूसरी दस्तकारी मे भी कुछ फ़र्क़ है। इसमे सही बात यह है कि किसी को ज़िद न करनी चाहिए। हम सब सीख सकते हैं और सबको सीखने के लिए तैयार रहना चाहिए। मगर सिखाने के लिए खाली कुछ कह देना काफ़ी नहीं। तजरबे से उसकी दलील भी देनी ज़रूरी है। मुझे डर यह है कि इस वक्त जो लोग दस्तकारी का वक़्त कम करना चाहते हैं वे तजरबे से दलील नहीं देना चाहते। अपने पुरान खयालों की वजह से इस चीज़ को बुरा समझकर या एक ऐसी मुसीबत जानकर जो बिल्कुल टाली नहीं जा सकती इसे ज़रा कम ही कराना चाहते हैं। यह रवैया छोड़ने का है। इससे हम ठीक रास्ते पर नहीं आ सकेंगे। तजरबी मदरसों को हमारी तजवीज़ (योजना) पर पहले दयानतदारी (सच्चाई) से चलना चाहिए और फिर इसमें तब्दीली की तजवीज़ें करनी चाहिए।

दूसरी बात तोमर साहब ने यह कही है कि जिन लोगों ने हमारे निसाब को लिया है उसमें हर जगह कुछ-न-कुछ तब्दीलियाँ कर ली हैं। हमें बताना चाहिए कि कम-से-कम क्या क़ायम रक्खा जाय कि यह चीज़ बुनियादी तालीम कही जा सके। इसके जवाब में मुझे यह कहना है कि अगर लोगों ने सोच-समझकर और अपनी ज़रूरतों को सामने रखकर निसाब को कुछ बदल दिया है तो ठीक किया है। कोई निसाब हर जगह और हर ज़माने के लिए ठीक नहीं होता। निसाब कोई

पेटेन्ट दवा नहीं है। ख़ास हालात को देखकर तजवीज किया हुआ नुसखा है। हालात के साथ-साथ उसमें घटाया-बढाया जा सकता है, लेकिन यह जरूरी है कि घटाने-बढानेवाले नुसख़े की गरज़ (उद्देश्य) को समझ लें। अगर आप किसी डाक्टर के पास जायँ और उससे कहे कि मुझे कब्ज है, दवा दे दीजिए, और वह आपको अच्छी तरह देखकर नुसख़ा दे तो वह नुसख़ा आपको उसी हालत में इस्तेमाल करना चाहिए। आपको अगर फ़ायदा भी हो तो दूसरे को वह नुसख़ा न देना चाहिए, कि न जाने उसका हाल बिल्कुल आपका-सा है या नहीं। अगर आपको उस नुसख़े पर बहुत भरोसा भी हो तो दूसरे को इस्तमाल कराने से पहले किसी डाक्टर से पूछ लेना चाहिए। लेकिन अगर नुसखे में इस बात की रियायत रक्खी गयी हो कि सब आदमियो को ऐसी हालत में जो कुछ पेश आता हो उसमें उससे फ़ायदा हो तो फिर अगर उसमें तब्दीली की जाय तो कम से कम नुसख़े के मकसद के ख़िलाफ़ (विरुद्ध) तो तब्दीली न हो। वह नुसख़ा क़ब्ज दूर करने का है, इसलिए उसमें क़ब्ज पैदा करनेवाली दवाएँ शामिल करना साफ़ नादानी है। और जो ऐसा करे वह खुद अपने किये का ज़िम्मेदार है, बेचारे डाक्टर का इसमें क्या कुसूर (अपराध) है? यही हाल तालीमी निसाब का है। तालीमी निसाब एक ख़ास ज़माने और मुल्क के हालात (परिस्थितियों) को सामने रखकर एक बडी जमात के लिए बनाया जाता है। जगह और हालात के फ़र्क़ से उसमें किसी जाननेवाले से कुछ कमो-बेशी कराई जा सकती है मगर कोई ऐसी तब्दीली जिससे उसका मकसद उलट जाय ठीक नहीं। बुनियादी तालीम के निसाब मे जो लोग थोड़ी बहुत तब्दीली करना चाहते हैं, उन्हें अपने ऊपर यह पाबन्दी रखनी चाहिए कि बुनियादी तालीम के जो मक़सद (उद्देश्य) हैं वे न उलट जायँ। जिस किसी ने कोई तब्दीली की हो उसे इस कसौटी पर परख लीजिए। अगर वह ऐसी तब्दीली है कि उसे बुनियादी तालीम के मक़सद में हर्ज़ नहीं होता हो तो उसमें कुछ मुज़ायका (हानि) नहीं। ऐसा न हो कि तब्दीली के बाद क़ब्ज़ दूर करने का नुसख़ा कब्ज़ पैदा करने का नुसख़ा बन जाय! मुझे यकीन है कि कोई समझदार हुकूमत (सरकार) और ज़मात ऐसी गलती न करेगी।

तीसरी बात तोमर साहब ने बच्चों के खाने के बारे में कही है। जिस किसी को भी हिन्दुस्तान के गावों में और ख़ासकर गावों के मदरसों में जाने का

इत्तफ़ाक़ (संयोग) हुआ हो, वह तोमर साहब के कहने को खूब समझ सकता है। मीलों चलकर मदरसे आनेवाले बच्चे जब दोपहर की चलचलाती धूप में ख़ाली पेट मदरसे से निकलते हैं और मीलो दूर अपने घर का ख़याल करके किसी पेड़ या किसी दीवार की छाया में थककर बैठ रहते हैं, क्योंकि शायद घर में भी कुछ खाने को मिलने की उम्मीद नहीं होती, तो उनकी हालत जाननेवाला तोमर साहब की बात पर "हाँ" न कहेगा तो क्या कहेगा? लेकिन यह सवाल हुकूमत के जवाब देने का है कि दौलत की नाहमदार तक़सीम (असमान बटवारे) से जो विपदाएँ आती हैं उनके दूर करने के लिए अकेलों की कोशिश कुछ नहीं कर सकती है। तो हुकूमतो के लिए भी इसका हल करना मुश्किल, लेकिन अगर कुछ कर सकती हैं तो वे ही कर सकती हैं। खुदा करे वे इसकी तरफ ध्यान दें और समझें कि समाज का सब से बड़ा सरमाया (पूँजी) जो उसके बच्चे हैं उनपर ऐसा ख़र्च करना कि वे ज़्यादा तन्दुरुस्त, ज़्यादा चुस्त और चालाक, ज़्यादा समझदार और ज़्यादा दयानतदार (सत्यपरायण) हो जायँ, समाज के खर्चों में सबसे बेहतर ख़र्च होता है। बदगुमानी (संदेह) तो है, मगर मेरा गुमान यह है कि यह ख़याल हमारी हुकूमतों में इतना आम नहीं। और अगर ज़बान से कोई इसे मान भी ले तो काम के वक्त वह भी टालना ही ठीक समझता है। हम तालीम का काम करनेवाले तो यही कर सकते हैं कि इस बात को हर दम जताते रहें और जताने मे थकें नहीं और कभी मायूस (निराश) न हों, यहाँ तक कि हुकूमतों से भी मायूस न हों।

चौथी बात तोमर जी ने बच्चों के काम से जो चीज़ें बनें उनके मुतल्लिक़ (सम्बन्ध में) कही है कि उन्हें सरकार ख़रीदे। मैं इस बात को हमेशा कहता आया हूँ और अब भी कहता हूँ कि मदरसों में बच्चे जो दस्तकारी सीखें उनसे जो चीज़ें बनें उनको बेचना मदरसे का काम नहीं है, उस्ताद का काम नहीं है। मदरसे और उस्ताद का काम यह है कि दस्तकारी को सच्ची तालीम का ज़रिया (साधन) बनायें, उससे बच्चे की सोयी हुई ताक़तों को जगायें, बच्चे को आदमी बनने में मदद दें और उसे समाज का मुफ़ीद (लाभकारी) रुक्न (स्तम्भ) बनने के रास्ते पर डाल दें। अगर उन्होंने यह काम कर दिया तो अपना फ़र्ज़ (कर्तव्य) अदा कर दिया। वे दस्तकारी का काम करायेंगे तो उससे पूरे तालीमी फ़ायदे उठाने के

लिए। उसे अच्छी तरह करायेंगे और जो चीज़ तैयार करायेंगे वह अच्छी तैयार करायेंगे, लेकिन उसका बेचना उनका काम नहीं है। हुकूमत (सरकार) जो मदरसे में दस्तकारी को तालीम के ज़रिये (साधन) के तौर पर रायज (प्रचलित) करती है, अगर उसे तालीमी तौर पर सही उसूल (सिद्धान्त) समझती है, तो एक तालीमी ख़िदमत (सेवा) करती है। उसे यह मालूम होना चाहिए कि ऐसे मदरसों में काम की चीज़ें बनेंगी। अगर उनके यहाँ रुपये की गंगा बहती हो तो या उन्हें इतमीनान (विश्वास) हो कि वे काम की चीजों को फेंक सकते हैं और कोई उनसे कुछ पूछेगा नहीं, तो वे जी चाहे तो हर तीन महीने या छ: महीने के बाद सब माल को इकट्ठा करके आग लगा दे और घर फूँक तमाशा देखें। लेकिन मैं समझता हूँ कि जो लोग हमारी तजवीज़ को कुबूल (स्वीकार) कर रहे हैं वे शायद जल्दी में इसके सब पहलुओं पर गौर नहीं करते और समझते हैं कि इसके एक टुकडे को कर लें तो काफी है लेकिन हर माकूल (उचित) तजवीज के सब टुकड़े एक दूसरे से इस तरह मिले होते हैं कि आप आसानी से ऐसा नहीं कर सकते कि यह करे और वह न करें। अगर हुकूमत बुनियादी तालीम को चलाना चाहती हैं, उसे कौम (राष्ट्र) के लिए सही तालीमी निज़ाम (व्यवस्था) समझती हैं, तो उन्हें जानना चाहिए कि काम की चीजे मदरसों में बनेंगी और उनको काम में न लिया जायगा तो बडी नादानी (मूर्खता) होगी। मगर यह काम हुकूमत ही को करना होगा। बुनियादी तालीम की तजवीज बनानेवालों के जहन (मस्तिष्क) मे पहले दिन से ही इस मामले में कोई शुबहा (संदेह) न था, न अब है और न हो सकता है, क्योंकि इसकी कोई दूसरी सूरत मुमकिन (संभव) ही नहीं है।

पाँचवी चीज़ जिसकी तरफ तोमर साहब ने ध्यान दिलाया है यह बच्चों और उस्तादो के लिए शिक्षकों का मसला (प्रश्न) है। मैं समझता हूँ कि यह काम बहुत जरूरी है और अगर इसे न किया गया तो बुनियादी मदरसे, जिन्हें लोग तजरबी (प्रायोगिक) मदरसे समझते हैं, नाकाम साबित करके बन्द कर दिये जायँगे, अगरचे यह सबूत बुनियादी तालीम की ख़राबी का सबूत न होगा बल्कि तज़रबे करनेवालों की नातज़रबेकारी और बेवकूफ़ी का सबूत होगा। हम अपने उस्तादों को ट्रेनिंग स्कूलो में जरूर हिरफे (उद्योग) के ज़रिये तालीम देना सिखाते हैं, हिरफे में और दूसरे मजमूनो (विषयों) में रब्त (अनुबन्ध) भी

सिखाते हैं, मगर किसी चीज़ को दो-चार बार करके दिखा देना और बात है और उसे रोज़ साल ब साल (एक के बाद दूसरे वर्ष) करते रहना दूसरी बात है। हम रब्त के लिए दस-पाँच सबक (पाठ) तैयार करके अपने उस्तादों को उसका मतलब समझा देते हैं और यह जता देते हैं कि यह हा सकता है लेकिन अगर हम यह समझते हैं कि यह उस्ताद, जिसे हमने यह बता दिया और जता दिया है, अपने काम के लिए सब सबक और तसवीरें खुद तैयार कर लेगा, तो आपको जानना चाहिए कि आप उस उस्ताद के साथ भी ना-इन्साफी (अन्याय) करते हैं और उसके शागिर्दों (विद्यार्थियों) के साथ भी। लेकिन बच्चों के लिए पढ़ने की चीजें और उस्ताद के लिए पढाने का सामान कौन तैयार करे ? हिंदुस्थानी तालीमी सघ से इस सिलसिले में उम्मीद की जा सकती है और मैं जानता हूँ कि वह कुछ कर भी रहा है। मगर मुश्किल यह है कि तालीम के काम करनेवाले भी ताजिरों (व्यापारियों) की तरह चाहते हैं कि उनके काम में कोई बाहर का आदमी न बोले। जहाँ कहो सामान होना चाहिए, लोग कहते हैं हम खुद सामान बनवा रहे हैं। यह कहनेवाले वे होते हैं जिन्हें अख्त्यार है कि वे कौनसा सामान मंजूर करें और कौनसा न करें। इसलिए कोई बाहर की जमात आसानी से इनके लिए सामान बनाने की हिम्मत नहीं कर सकती। बिहार के ट्रेनिंग स्कूल में इस सिलसिले मे कुछ मुफीद काम हो रहा है और वहाँ बच्चों के लिए पढ़ाई की किताबों का बहुत सा सामान जमा हो चुका है। उम्मीद है दूसरी जगह भी इस तरफ तवज्जोह दी जायगी।

तीसरा भाग

बुनियादी पाठ्यक्रम पर अनुभव

पहले दो ग्रेडो में समवायी पढाई के

दो वर्षों का अनुभव

पहले दो ग्रेडों में समवायी पढ़ाई के दो वर्षों के अनुभव

[पांडेय यदुनन्दन प्रसाद]

बिहार के मोतीहारी जिले के गाँवों में बुनियादी शिक्षा १९३९ के अप्रैल महीने से शुरू हुई ।

यह काम हमने ऐसे शिक्षकों की सहायता से शुरू किया जिन्होंने सिर्फ छ महीने की बुनियादी ट्रेनिंग पायी थी । इसलिए उनके मन में यह विश्वास नहीं हुआ था कि वे पाठ्यक्रम को स्वभाविक ढग से व्यवहार में ला सकेंगे । शुरू में कुछ दिनों तक शिक्षको ने पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयो की पढ़ाई मनमाने ढंग स की थी, अर्थात् उद्योग के काम अलग और समवायी विषयों की पढाई अलग हुआ करती थी । असलियत तो यह है कि सच्चा और स्वभाविक समवाय क्या चीज है इसका ज्ञान शिक्षकों में बहुत कम और अपूर्ण था । इस अधूरे ज्ञान का फल यह हुआ कि समवाय समवाय नहीं रह कर एक विचित्र चीज़ बन गया । इसका एक बहुत बड़ा कारण यह था कि उन शिक्षकों को उद्योग मे भी पूर्णता प्राप्त नहीं थी और भौतिक तथा सामाजिक प्रतिवेशों के अध्ययन का ढग भी उन्हें नहीं मालूम था, क्योंकि उनकी शिक्षा पुरानी प्रणाली के आधार पर हुई थी ।

लेकिन कुछ दिनों के अनुभव ने बुनियादी स्कूलों के शिक्षकों, निरीक्षकों, व्यवस्थापकों तथा ट्रेनिंग स्कूलों के अध्यापकों की आँखें खोल दीं । सबसे मार्के का अनुभव तो यह हुआ कि जब तक बुनियादी स्कूलों के शिक्षक उद्योग में पूरी योग्यता नहीं प्राप्त कर लें तब तक स्वाभाविक ढंग से बच्चों को बुनियादी शिक्षा-प्रणाली के आधार पर लाभ नहीं पहुँचा सकते । दूसरा अनुभव यह हुआ कि जिस इलाके में बुनियादी स्कूल हो उस इलाके की प्राकृतिक और सामाजिक परिस्थितियों का ज्ञान जब तक पूरी तरह से शिक्षकों को नहीं हो ले तब तक समवायी पढ़ाई की कला का ज्ञान उन्हें नहीं हो सकता ।

इन अनुभवों के बाद हम लोगो ने इन बातो पर ध्यान देना शुरू किया। फलस्वरूप हमारे यहाँ से गुरु-छात्र (pupil-teacher) उद्योग में पहले से अधिक योग्यता प्राप्त कर बुनियादी स्कूलो मे काम करने के लिए जुलाई १९४० में भेजे गये और वहाँ जाकर वे लोग उद्योग की क्रियाओ का पूरा अभ्यास करते हुए तथा ऊपर लिखी दोनों परिस्थितियो से परिचय प्राप्त करते हुए बुनियादी स्कूलों का काम अच्छी तरह करने लगे। इसके बाद समवाय संबंधी कार्य में या पाठ्यक्रम के विषयों को स्वाभाविक ढंग से पढ़ाने में हमारे शिक्षकों को विशेष कठिनाई नहीं होने लगी। अब अनुभव के आधार हर हमें स्पष्ट मालूम होने लगा है कि पाठ्यक्रम के किस हिस्से का शिक्षा के किस आधार के साथ स्वाभाविक ढंग से समवाय किया जा सकता है, पाठ्यक्रम के कौन से हिस्से का समवाय हम लोग नहीं कर सके, या पाठ्यक्रम में अनुभव के आधार पर कहाँ तक परिवर्तन किया जा सकता है।

अब मै बारी बारी स इन समस्याओं पर अपने विचार प्रकट करने की चेष्टा करूँगा।

हमारे यहाँ के उद्योग और प्राकृतिक व सामाजिक परिस्थितियों का परिचय

हमारा प्रान्त एक कृषि-प्रधान प्रात है। विशेष कर जिस इलाके में बुनियादी स्कूल हैं, वह ता बिहार क बगीचे तिर्हुत का उपजाऊ हिस्सा है। इस दृष्टि से हम खेती क काम को मूल-उद्योग रख सकते थे, पर प्रारभ में कुछ स्थानीय कठिनाइयों तथा बच्चों की उम्र इत्यादि का ख्याल रख कर हम लोगों ने कताई को ही मूल उद्योग रक्खा और बागवानी को सहायक उद्योग के रूप में रहने दिया। दो वर्षों क भीतर इस पिछड़े हुए इलाके के गरीब और छोटे बच्चों ने कितनी योग्यता प्राप्त की और उद्योग की क्रियाओ को करते-करते उनका मानसिक विकास कहाँ तक हुआ, इसकी तसवीर मैं आपके सामने रखना चाहता हूँ।

कताई का माध्यम

ओटने, कपास साफ करने, तुनने और धुनने के सम्बन्ध में बच्चों ने पूरी जानकारी के साथ कपास के तौलने से लगाकर पूनियाँ बनाने तक की तमाम

क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त किया है। साथ ही-साथ इन क्रियाओं के करने में उन्होंने धुनकी सजाना और उसे काम मे लाना भी सीखा है।

तकली और चर्खे पर कातते वक्त, उन्होंने कताई की शुरू से आखिर तक की तमाम क्रियायें और उप-क्रियायें सीख ली हैं। सूत के नम्बर, समानता और कस के बारे मे भी उन्होंने जानकारी प्राप्त कर ली है।

कपास की सफ़ाई, ओटाई, खोलाई, तुनाई, धुनाई और तकली व चर्खे पर कताई की उक्त क्रियाओं को करते वक्त बच्चे बिल्कुल स्वाभाविक और सुगम ढंग से नये पाठ्यक्रम के निम्न–लिखित विषयों का ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं।

मातृभाषा

(१) जबानी आत्मभाव प्रकाशनः—तराजू-बाट, कपास, ओटनी, सलाई-ओटनी, टोकरी, धुनकी, आत्मा, काकड, मोढिया, डंडी, लटकन, आसनी, गोटीला, हत्था, पूनी-सलाई, पटरी, तकली, खौटी गत्ता, परेता, कस-मापक यन्त्र, चर्खा, (बिहार चर्खा) और उसके तमाम हिस्सों के नाम, लच्छी, गुंडी इत्यादि संज्ञाओं का परिचय बच्चों को हो चुका है। इन चीजों की उपयोगिता, इनके हर हिस्से का नाम, इन चीज़ों का मूल्य, इनके आकार, डीलडौल, मिलने का पता इत्यादि का ज्ञान भी स्वाभाविक ढंग से बच्चों को हो गया है। हर बच्चे के पास जितने सामान हैं उनकी क़ीमत वह कूत लेता है, उनको ठीक स्थानपर ठीक तौर से रखने का अभ्यास कर लेता है और उनकी हिफ़ाज़त का भी ध्यान रखता है। इस तरह मातृभाषा के आत्मभाव-प्रकाशन तथा बच्चों के शब्द-भंडार वाले पाठ्यक्रम के दो भाग आसानी से अनुबद्ध हो गये हैं। यहाँ पर ध्यान देने की बात यह है कि उद्योग की इन क्रियाओं के आधार पर बच्चे सिर्फ़ मातृभाषा के कुछ अंशों को ही नहीं सीखते बल्कि इन क्रियाओं के करते समय उन्हें चीज़ों के नाम, आकार, वजन, गुण, मूल्य वैज्ञानिक उपयोगिता और उनकी पैदावार की जगहों का ज्ञान भी अपने-आप होता जाता है। ये बातें हमारे पाठ्यक्रम के सामान्य-विज्ञान, सामाजिक-विज्ञान, गणित इत्यादि विषयों में अपना स्थान रखती हैं। इसलिए हम लोगों ने देखा कि किसी क्रिया के करने में बच्चे किसी एक ख़ास विषय को न सीख कर उन दूसरे विषयों को भी सीखते हैं जो उस क्रिया की पूर्णता में आवश्यक है।

बुनियादी स्कूलों के इलाके में लड़कों के माँ-बाप तरह-तरह की दस्तकारियाँ और धंधे किया करते हैं जैसे, ताँत बनाना, बुनना, धोना लकड़ी और लोहे का काम इत्यादि। ये धंधे हमारे यहाँ की कताई की व्यवस्था में बहुत मदद पहुँचाते हैं और इनके बारे में बच्चे बातचीत करते हैं। इस इलाके मे बुनियादी स्कूलो की स्थापना और बच्चो की क्रियाशीलता का असर यह हुआ कि ये मृतप्राय दस्तकारियाँ फिर जी उठी हैं।

(२) **कहानी**—कताई की क्रियाओं के करते वक्त बच्चे दूसरे देशो के ऐसे बच्चों की कहानियाँ सुनते हैं जो छोटी उम्र से ही दस्तकारी के कार्मों में अपने माँ-बाप की मदद करते है और आगे चलकर अपने पैरों पर खडे होते हैं। इन कहानियों के द्वारा बच्चो में साहस और उमंग विशेष रूप से बढ हैं। इनके अलावा, दस्तकारी सम्बन्धी ऐसी कहानियाँ भी कही जाती हैं जिनके द्वारा दस्तकारी की चीजों को सावधानी से रखने, मुस्तैदी से काम करने इत्यादि की ओर बच्चों का ध्यान जाता है।

(३). **सरल कविता पाठ और अभिनय**—कताई की क्रियाएँ करते वक्त बच्चे तकली, धुनकी, सूत और कपास सबधी गीत सामूहिक रूप से गाते हैं। क्रियाओं के बाद दस्तकारी के सामानों और क्रियाओं को उपयोगिता का उद्देश्य रखते हुए बच्चे बडे मनोहर ढग से छोटे-छोटे अभिनय किया करते हैं। दूसरे ग्रेड के बच्चे तो अभिनय करने में इतने होशियार हो गये हैं कि आप चाहे कोई कहानी कहें, उसका नाटक वे थोड़े वक्त में खूबी के साथ अपने पास के मौजूदा साधनों से ही कर दिखलाते हैं।

(४) **वाचन (पढ़ाई)**—लड़के उद्योग का काम करते हैं और आवश्यकतानुसार उन क्रियाओं को अपनी कॉपी में नोट करते जाते हैं। उनके पास तरह-तरह की कॉपियाँ (बहियाँ) रहती हैं। एक आम बही, दूसरी रोजनामचा बही, तीसरी कताई बही, और चौथी चित्रांकन की बही। इन बहियों में वे काते हुए तारों, लच्छियों और गुंडियों का हिसाब लिखते और जोडते हैं और पूछने पर वे इन्हीं बहियों को पढ कर अपने कार्यों का विवरण बतलाते हैं। इस तरह वे पढ़ाई का कार्य करते हैं। दिन भर काम के बाद वे अपनी रोज़नामचा बही में लिख लेते हैं कि उस दिन उन्होंने क्या काम किया और उस काम में कौनसी

बात सीखी। ज़रूरत पड़ने पर वे अपनी यह लिखावट साथियों को भी पढ कर सुनाते हैं। इसके अलावा, शिक्षक कहानियो और कविताओं को गत्ते के टुकड़ों या काले-तख्ते पर लिख कर बच्चों से पढवाते हैं। बच्चो की क्रियाओ के आधार पर हमारे यहाँ कुछ किताबे तैयार हुई हैं जो प्रकाशन के लिये भेजी जा रही हैं। ये बच्चो की पढाई के काम मे आयेगी। लेकिन तब तक पुराने पाठ्यक्रम के आधार पर उनके लायक कुछ ऐसी पुस्तकें दी गयी हैं जो उन्हे क्रियाओ के समझने मे मदद देती हैं।

गणित

बच्चे बैठने के पीढो को अपने साथियों में बाटते हैं। बैठ जाने के बाद क्लास का मॉनीटर, जो आवश्यकतानुसार प्रतिदिन या प्रतिसप्ताह बदलता रहता है, अपने साथियो को, एक-एक, दो-दो, चार-चार, पॉच-पॉच और दस-दस करके कताई के यत्रों और सामानो को बाटता है और इकट्ठा करता है। इसके बाद जब बच्चे तकली या चरखे पर कातते हैं तो उन्हे इन बातो को जानने की जरूरत होती है वे कितनी पूनियॉ लाय, उनमे से कितनी खर्च हुईं, कितनी बाकी रहीं; कितने तार, कितनी लच्छियाँ, और कितनी गुडियॉ हुईं, रोज क काते तारों का वज़न क्या हुआ, काते हुए सूत की साप्ताहिक व मासिक मज़दूरी क्या हुई; क्लास में किस लडक ने सबसे ज़्यादा और किसने सबसे कम काता, क्लास की दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक और वार्षिक कताई का औसत क्या हुआ और वह औसत पाठ्यक्रम मे दिये हुए औसत के मुक़ाबले में कितना रहा, सूत का नंबर क्या रहा और उसक कस व समानता कितने फीसदी रहे, आध घटे में चर्खे पर कितनी गति हुई; एक घटे में ओटने, कपास साफ़ करने, रुई साफ़ करने, फिरकियाँ बनाने और धुनने की गति क्या हुई। इन मौकों पर बच्चे बड़ी आसानी से और स्वाभाविक ढग से ९९९ तक की गिनती गिनना और लिखना, बीस तक के जोड़–बाकी, खड़े और आड़े खानों में अंकों का जोडना, १० तक गुणा–भाग, लम्बाई, वजन और मुद्रा–संबन्धी सरल हिसाब इत्यादि का ज्ञान प्राप्त करते हैं और कहीं भी बनावटी समवाय की ज़रूरत नहीं पड़ती।

समाज-विज्ञान

बुनियादी स्कूलों के बच्चे दो तरह से अपना जीवन बिताते हैं। उनका

अधिकाश वक्त तो अब स्कूलो में ही बीतता है और वे घर की अपेक्षा स्कूल को ज़्यादा पसन्द करते हैं। वे रोज समय पर आकर अपने कमरों को झाड़-बुहार कर, दस्तकारी की चीज़ो को सजा कर रखते हैं। अगर कोई चीज ठीक हालत में न हो तो उसे दुरुस्त करने की कोशिश करते हैं, क्योंकि वे सब चीज़ों को अपनी चीज़ें समझते हैं। इस अभ्यास के द्वारा उनमे उत्तरदायित्व की भावना पैदा होती है और बढ़ती है।

आम तौर से पुराने ढंग के स्कूलों में या पब्लिक जगहों में (जैसे जहाज-घाट, रेल्वे-स्टेशन, पोस्ट-आफिस, पोलिंग स्टेशन, मेले, बाज़ार, तीर्थ–स्थान) बड़ी भीड-सी लगी रहती है और दुन्द मचता रहता है। पर इन बच्चों को शुरू से ही शिक्षक बड़ी सावधानी से सहानुभूति के साथ बारी-बारी से उद्योग के सामानों और औजारो को इस्तेमाल करने की आदत डालता है और इस तरह सब बच्चे सामूहिक ढंग से क्यू (queue) बना कर काम करने का अभ्यास करते हैं जो हमारे मुल्क के लिये एक बहुत ही जरूरी चीज़ है। बच्चे यह अच्छी तरह समझने लगे हैं कि यदि उनकी उंगलियाँ गन्दी रहें तो पूनियाँ गदी होती हैं और इससे सूत गन्दा होता है, यदि रुई मे कचरा रह जाय तो सूत बार बार टूटता है, अगर धुनकी दुरुस्त न हो तो धुनते समय बहुत परेशानी उठानी पड़ती है, अगर तकली और चर्खे साफ़-सुथरे नहीं रक्खे जाय तो उनके घूमने मे बड़ी दिकत होती है, इत्यादि। इन बातों को महसूस करके बच्चे उद्योग की क्रियाओं में खूब जी लगाते हैं। काम खतम हो जाने पर वे अपने यंत्रों और सामान को सफ़ाई से समेट कर स्कूल के कमरे में कलात्मक ढग से रखते हैं। मालूम होता है कि उद्योग, बच्चों की उत्तरदायित्व की भावना, कला और स्वच्छता, ये सब एक साथ एक स्थान पर मिल गये हैं।

बच्चों में यह आदत हो गई है कि काम करने के बाद, घर जाने से पहले, वे क्लास की सफाई, अलमारी की सफ़ाई, हाते की सफ़ाई इत्यादि कर लेते हैं। दिन भर की टूट-फूट, कचरा या दूसरी गन्दी और बेकार चीज़ें चलते वक्त ठीक जगह इकट्ठी कर जाते हैं। इस तरह उद्योग क्रियाओं के द्वारा उनमें संघ-भाव, बारी-बारी से काम करने और चीज़ें लेने की आदत, शील के साथ प्रश्न करने और व्यक्तिगत तथा सामाजिक ढग से साफ़ रहने की भावनायें पैदा होकर दिन-दिन दृढ़ होती जाती है, जो उन्हें सच्चे नागरिक बनाने में बड़ी सहायक होंगी।

सामान्य विज्ञान

बहुत से लोगों का ख्याल था कि मौजूदा पाठ्यक्रम के सब विषयो का उद्योग की क्रियाओं के साथ सीधा समवाय नहीं किया जा सकता; पर अनुभव से पता चलता है कि ऐसी बात नहीं है। उदाहरण के लिए सामान्य विज्ञान को ही ले लीजिए। बच्चे को अपनी कताई-बही में तिथियों, दिनो आर महीनों के नाम लिखने पड़ते हैं, उसे कताई की दूसरी क्रियाये करनी पड़ती हैं, और औजारो को दुरुस्त करना पडता है। ऐसा करने में उसे यह अनुभव होता है कि बरसात के दिनो मे ज़रा-सी असावधानी स तकलियॉ मोरचा पकड लेती हैं, ताँत जल्दी-जल्दी टूटती है, धुनाई लगातार कई दिनो तक बन्द रखनी पडती है, तुनाई का काम बडा मुश्किल हो जाता है। इसी तरह जाड़े के दिनो मे सुबह आठ बजे के बाद कोई भी कठिनाई नहीं होती, गरमी के दिनो मे दोपहर को सूत इतना टूटता है कि कातना मुश्किल हो जाता है। यदि भिगोया कपडा अटेरन पर नहीं लपेटा जाय तो सूत की मजबूती कम होनी जाती है। पूनियाँ खुली रहें तो बहुत फूल जाती हैं, इत्यादि। इस तरह कताई की क्रियाओं पर तथा उद्योग के सामानों और यन्त्रों पर मौसमों का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से पडता नजर आता है।

ऋतु-परिवर्तन के साथ-साथ कताई का हिसाब रखने से बच्चों को दिन, सप्ताह, पक्ष. महीना और साल का ज्ञान व्यावहारिक ढंग से हो जाता है। धुनाई क्लास मे उन्हें नाक बाँध कर काम करने की ज़रूरत पड़ती है, क्योंकि नाक खुली रखने से नथुनों में रुई के रेशे भर जाते हैं। इस तरह बच्चों को यह अनुभव होता है कि हमें सास लेने के लिए साफ़ हवा की ज़रूरत है।

चित्रांकन (ड्राइंग)

शिक्षकों की रिपोर्ट से पता लगता है कि पहले दो ग्रेडो में चित्राकन के पाठ्यक्रम में दी हुई बातों का समवाय स्वाभाविक ढंग से कताई के उद्योग की क्रियाओं के साथ नहीं हो सका, पर नीचे लिखी चीज़ों का ड्राइंग समवायी ढंग से किया गया:—धुनकी और कताई क्लास का ख़ाका, तकली और चरखे का चित्र। (अभिनय के समय) परेते और अटेरन वग़ैरा का ड्राइंग खिंचवाया गया।

सहायक उद्योग बाग़वानी का माध्यम

हर बुनियादी स्कूल में लड़कों का अपना बाग है । वे अपने बाग़ की ज़मीन को नाप कर तरह-तरह की क्यारियॉ बनाते हैं । क्यारियॉ बनाने मे उन्हें ज़मीन को गोडने और बराबर करने और उसमे खाद मिलाने और ढाल तैयार करने की ज़रूरत पड़ती है । क्यारियॉ बनाने के बाद वे उनमें बीज या पौधे लगाते हैं, फिर उनमे पानी छिडकते हैं, उन्हें ढकते हैं, और बार-बार पटाते है । अंकुर निकल आने पर वे क्यारियो में निकौनी करते हैं और नमी बनाये रखने का उपाय करते हैं, फूल और तरकारियों को तैयार होने पर इकट्ठा करते हैं, इत्यादि । यदि पौधो मे किसी प्रकार के कीड़े लग गये हो तो उनको दूर भगाने की कोशिश करते हैं, तैयार माल तौलते और बेचते हैं, दूसरे साल के लिए बीज सुरक्षित रखते हैं, क़ीमती पौधों को गमलों में हिफाज़त से रखते हैं, अच्छे अवसरों पर स्कूल की सजावट के लिए अपने बाग के पौधो की सुन्दर सुन्दर पत्तियों, फूलों, फलों इत्यादि को काम में लाते हैं, मालाये बनाते हैं और गुलदस्ते तैयार करते हैं ।

दो वर्षों मे बच्चों ने ऊपर लिखी क्रियाओं के ज्ञान के आधार पर पाठ्यक्रम के निम्नलिखित विषयों का समवायी ढंग से ज्ञान प्राप्त किया हैः—

मातृभाषा

(१) **मौखिक अभ्यास**—बागवानी के साधनों और ऊपर लिखा प्रक्रियाओ पर बातें करते हुए तथा बाग़वानी के औज़ारो और सामान के नाम तथा उनकी उपयोगिता समझते हुए, बच्चे अपना शब्द-भण्डार बढ़ाते हैं ।

(२) **कहानियॉ** — बच्चे पशुओं के जीवन की कहानियाँ सुनते हैं (पशु-पालन के सम्बन्ध मे) । कुछ स्कूलों में बच्चों के अभिभावक अपने पशुओं के द्वारा, उचित मज़दूरी लेकर, लड़कों का बाग़ जोत देते हैं । इस सम्बन्ध में शिक्षक यह बतलाने की कोशिश करते हैं कि जो पशु इतनी तकलीफ़ें उठाकर उनका काम करते हैं उनक लिए बच्चों को अच्छे चारे का इन्तज़ाम करना आवश्यक है । प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाली कथाऐं भी बाग़वानी के आधार पर कही जाती हैं, जैसे इल्ली के क्रमिक विकास का वर्णन, केंचुए के जीवन से प्रकृति के आश्चर्यजनक काम का वर्णन ।

गणित

क्यारियाँ बनाते वक्त बच्चे इंच, फुट, गज़, हाथ से नाप-जोख का ज्ञान तरकारी और दूसरी फसलों के बेते और बेचते वक्त तौल और बाटों का ज्ञान कामत कूतते और लेते वक्त रुपये, आने व पैसे इत्यादि का ज्ञान, और तरह-तरह के आकार के खेतों के द्वारा वर्ग, चतुर्भुज, वृत्त, त्रिभुज, इत्यादि का ज्ञान प्राप्त करते हैं। यहाँ एक बात नोट करने की यह है कि हिसाब-सम्बन्धी यह ज्ञान मौखिक ही नहीं रखा जाता बल्कि लिखित भी होता है जो मातृभाषा मे पढ़ाई का काम देता है।

समाज विज्ञान

उत्तरदायित्व के जो कार्य कताई के उद्योग मे दिखलाये गये हैं वे ही कार्य बच्चे इस उद्योग मे भी करते हैं। इनके अलावा बच्चों को स्कूल के संग्रहालय के लिए तरह-तरह की पत्तियाँ, फूल, बीज, छाल और जडे संग्रह करनी पड़ती हैं। उन्हें तमाम कूडा-कर्कट अलग गड्ढे में फेंकना होता है और इन कामो के करने के बाद उन्हे अपनी सफाई पर पूरा ध्यान देना पड़ता है।

सामान्य विज्ञान

बच्चे स्कूल के बाग़ की तमाम फसलों को पहचानने लगे हैं क्योंकि उनके बारे में उन्हे अपनी बही मे लिखना पड़ता है। पटाने के लिए सबसे अच्छा वक्त कौन-सा है इसका उन्हे पता लगाना पडता है और तब वे सूर्योदय और सूर्यास्त के समय पटाने का लाभ समझने लगते हैं। बाग के पौधों मे जो कीड़े लगते हैं और जो पक्षी उन पौधों को हानि पहुँचाते हैं उनकी जानकारी भी बच्चो को हो जाती है। पौधो के विकास के साथ-साथ वे दिन, महीना, इत्यादि का ज्ञान भी प्राप्त करते जाते हैं और ऋतु-परिवर्तन का पेड़-पौधों पर क्या असर होता है यह भी जान जाते हैं।

चित्र कला

बच्चे अपनी उपजाई हुई तरह-तरह की तरकारियो, अन्य फ़सलों तथा पक्षियों और फूलो इत्यादि की शकले खींचते हैं।

भौतिक-प्रतिवेश का माध्यम

बुनियादी स्कूलों का इलाका बृन्दावन के इलाके के नाम से मशहूर है। स्कूलों के बच्चो ने इसकी प्राकृतिक परिस्थिति का अध्ययन दो वर्ष के भीतर अच्छी तरह से किया है। उनकी रिपोर्ट से साफ़-साफ पता लगता है कि इस इलाके के वृक्षों मे आम, अमरूद, महुआ, खैरा, नीम, बबूल, शीशम और बाँस प्रधान हैं। पालतू जानवरों मे बकरी, भैंस, बैल, घोड़े, गदहे और सूअर, और जंगली जानवरो में गोड़परास, नीलगाय, हिरन, सूअर, गीदड और खेखर ज़्यादातर पाये जाते हैं। बच्चो के घरो में ऊख, धान, मकई, गेहूँ, जौ, अरहर, बैंगन, टमाटर, कद्दू, कोहडा, भतुआ, साग, आलू, सेम, केला, पपीता और पुदीना तो आमतौर पर मिलते हैं, पर चने और मटर के दर्शन मुश्किल से होते हैं। इस इलाके के दक्षिणी हिस्से मे, जहाँ बाढ़ नहीं आती है वहाँ गोजर, बमनी, रामजी का हाथी, छिपकिली, मेंढक, गिरगिट, गिलहरी, बिच्छू, और बड़े-बड़े साँप पाये जाते हैं। बच्चों ने यह भी पता लगाया है कि यहाँ के साँप बड़े विलक्षण होते हैं और इतने जहरीले होते हैं कि उनका काटा हुआ आदमी घंटे भर भी ज़िन्दा नहीं रहने पाता। ताज्जुब की बात यह है कि यहाँ कभी-कभी ढेर-के-ढेर साँप एक साथ निकलते हैं। कोई साँप तो पेडों से ही उछलकर सिर पर आ पड़ते हैं।

इस इलाके में दो तरह की प्रधान हवाएँ बहती हैं बरसात के दिनों में पुरवाई हवा और जाडे तथा गर्मी के दिनों में पछुआ हवा। आँधियाँ भी अक्सर आती रहती हैं। बदकिस्मती से ये आँधियाँ वहाँ के घरों को बहुत नुकसान पहुँचाती है क्योंकि वे घर घास-फूस के बने हुए होते हैं। क्लास के कमरो मे और शिक्षको के घरों में नित्यप्रति गर्द का जम जाना एक मामूली बात है।

हवाएँ तो खूब चलती हैं, पर पानी की दिक़त बहुत रहती है। बरसात में तो चारों तरफ पानी-ही-पानी दिखाई पडता है क्योंकि वर्षा ज़्यादा होती है, पर गर्मी के दिनों में बड़ी तकलीफ होती है। कोसों तक पानी का नाम-निशान भी नहीं मिलता। तालाब, पोखर वगैरा सब सूख जाते हैं जिससे लोगों को बहुत परेशानी उठानी पडती है। इसलिए बेसिक स्कूलों में पानी के नलों (tube wells) का प्रबन्ध कर दिया गया है, और अब शिक्षको की यह कठिनाई दूर हो गई है। बच्चे भी दिन भर इन नलों से लाभ उठाते हैं। लेकिन इस इलाके के जल में

ख़राबी यह है कि कहीं कहीं उसमें बू आती है और सारे इलाके में पानी की वजह से घेघे की बीमारी का ज़ोर है। कहते हैं कि इस बीमारी का कारण जल मे आइडिन (Iodine) का अभाव है। हमारे यहां के शिक्षक इस समस्या को हल करने की चेष्टा मे लगे हुए हैं।

सारे उत्तरी-हिन्दुस्तान की तरह यहाँ भी चार ऋतुएँ होती है जाड़ा, वसंत गर्मी और बरसात। बरसात का ज़िक्र ऊपर हो चुका है। जाडा और गर्मी के मौसम दक्षिण बिहार की तरह भयंकर नहीं होते। बरसात के दिनो के सिवा यहाँ आकाश प्राय साफ़ ही रहता है। रात को सप्तर्षि और ध्रुवतारा आसानी से देखे जा सकते हैं। सर्दियों मे शीत, पाला और कुहरे का असर पाया जाता है। यहाँ से हिमालय का दृश्य बड़ा ही सुन्दर दिखाई देता है। बुनियादी स्कूलो के बच्चों को बरसात के दिनो मे हिमालय के दर्शन बहुत आसानी से हो जाते हैं।

समवाय

इसी तरह से भौतिक-प्रतिवेश में बच्चे अपना जीवन व्यतीत करते हैं और पग-पग पर प्राकृतिक असर का अनुभव करते हैं। इस प्रतिवेश के द्वारा पाठ्यक्रम के निम्नीलिखित विषयों का समवाय बिल्कुल स्वाभाविक ढंग से हुआ है, जैसा कि नीचे लिखे उदाहरणों से मालूम होगा —

मातृभाषा

मौखिक आत्मभाव-प्रकाशन और वाचन—उपर्युक्त प्राकृतिक दृश्यो और घटनाओ का लड़के अपने शब्दों में वर्णन करते हैं, उन्हे अपनी रोजनामचा बही में लिखते है और पढ़ कर सुनाते हैं।

कथाये—पशु-पक्षियों, फ़सलों, वृक्षों, इत्यादि की उपयोगिता सिद्ध करने के लिये बच्चो को मनगढ़ंत कथायें सुनायी जाती है: जैसे चने की नाक टेढी क्यों, पीपल पेड़ का देवता क्यों है, हुदहुद और गिद्ध की कहानी, नीलकंठ के दर्शन, नीम और हकीम, जामुन के पेड़ से डाक्टर तबाह, इत्यादि-इत्यादि।

सामाजिक विज्ञान—त्यौहारो आदि के अवसर पर स्कूल के सजाने मे भौतिक प्रतिवेश बहुत सहायक होता है। लड़के मौसमी त्यौहारो या दूसरे अवसरो पर गॉववालों के मनोविनोद के लिए या स्वयं उत्सव मनाने के लिए आसपास के पेड़ो की सुन्दर पत्तियो, फूलों, फलो, इत्यादि को काम में लाते हैं।

सामान्य विज्ञान—बच्चे भौतिक प्रतिवेश के आधार पर यह अच्छी तरह समझने लगे हैं कि बगुला, नीलकंठ, गिद्ध, कौआ, चील इत्यादि पक्षी उनके दोस्त हैं क्योंकि वे उनके खेतों को नुकसान पहुँचानेवाले कीडों को चुनकर खा जाते हैं। पीपल, बड़ वगैरा घनी छाया वाले पेडो की कद्र क्यों की जाती है, इसको भी वे समझने लगे हैं। फ़सलों की उपज पर मौसिमो का क्या असर पडता है, चंद्रमा और सूरज की रोशनी का पौधों पर क्या असर होता है, कौन–कौन से जगली जानवर खेती को नुकसान पहुंचाते हैं, ग्रहण वगैरा के मौके पर सूरज और चाद का क्या हाल होता है, रात के वक्त दिशा का पता कैसे लगाया जाता है, जाडे में रेंगनेवाले कीडे बहुत कम नजर आते हैं, पर गर्मी में वे विशेष रूप से दीख पडते हैं,—इत्यादि, इत्यादि बातों का और उनके कारणो का सामान्य ज्ञान बच्चो को हो गया है।

सामाजिक प्रतिवेश का माध्यम

मामूली तौर पर किसी भी समाज के अध्ययन के लिये निम्नलिखित बातों का पर्यवेक्षण करना आवश्यक है·—समाज का भोजन, वस्त्र, मकान, रोजगार-धंधे, पानी की व्यवस्था, हाट–बाज़ार, पूजा के स्थान, मेल, आमोद–प्रमोद, त्योहार और आने-जाने के साधन।

भोजन—जैसा कि ऊपर इशारा किया गया है, यह इलाका बहुत गरीब है। यहाँ अमीर लोग बहुत कम हैं, लेकिन जो है वे बहुत बड़े धनी हैं। मध्यम श्रेणी के लोगों की सख्या उनसे कुछ अधिक है, पर ग़रीबों की संख्या बहुत ज़्यादा है। शिक्षकों की रिपोर्ट से पता चलता है कि आधे से अधिक बच्चे बिना कुछ खाये–पिये स्कूलो मे आते है और उनके शरीर पर कपड़ों का भी ठिकाना नहीं होता।

बुनियादी स्कूलों के बच्चे अपने-अपने घरो मे बनने वाले भोजन के पर्यवेक्षण के सम्बन्ध में स्कूल मे बाते करते हैं और शिक्षक उन बातो को नोट करते जाते हैं।

वस्त्र—बच्चों को ऐसा अभ्यास डाला गया है कि वे इन बातों का पता लगायें, उनके घर में कपडा कहा से खरीद कर लाया जाता है, खादी भण्डार से क्यों नहीं लाया जाता, साल मे एक परिवार का कपडों पर कितना खर्च होता है, किस मौसम में किस तरह के कपडे पहने जाते हैं, कपडो के रखने के तरीके कौनसे हैं और कपड़ों की सफ़ाई के साधन क्या हैं।

मकान—इस इलाके के मकान बास और खर के होते है पर इनमें खिड़कियां नहीं होतीं। इनमें सामान इधर-उधर पडा रहता है। बसने की दिशा में भी कोई क्रम नही। हर साल पछुआ और पुरवाई हवा से सैकड़ों घर जल जाते है, पर घर पश्चिम से पूरब की तरफ नही बसाये जायॅ, इसकी कोई परवाह नहीं करता। इसलिए इन समस्याओ को सुलझाने के विचार से बुनियादी स्कूल के शिक्षकों ने बच्चों मे यह भाव भर दिया है कि वे अपने घरो मे खिडकियो का अवश्य इन्तजाम करें और गॉव पश्चिम से पूरब की तरफ़ न बसा कर दक्खिन से उत्तर की तरफ बसाये जायॅ।

दस्तकारियॉ—सन्तोष की बात है कि बुनियादी स्कूलों की स्थापना से यहा की स्थानीय मृतप्राय दस्तकारियॉ, बढ़ईगीरी, लोहारी, कुम्हार का काम, चमडे का काम, धुलाई, रगाई, राजगिरी, टोकरी बनाना, बैलगाडी चलाना, इत्यादि—फिर से जी उठी है। शुरू में कुछ दिनो तक परेता, अटेरन, धुनकी, चरखा, पीढ़ा, तॉत, आतमा, कॉकड़, वगैरा चीज़े बाहर से मंगाई गयी थीं, पर जब यह पता लगा कि इन चीजो की प्राप्ति आसानी से इलाके ही मे हो सकती है, तो इनका बनवाना यहीं शुरू कर दिया गया। छुट्टी के समय बुनियादी स्कूल के बच्चे इन दस्तकारियो के काम मे हाथ बंटाते है। कुछ स्कूलो में तो बच्चों के अभिभावक स्कूल का काम करते हैं और बच्चे समय पाकर वहीं उनको मदद देते हैं। इससे बच्चो में काम के महत्व की भावना विशेष रूप से बढ़ने लगी है।

बाजार-हाट—आप लोगों को यह जानकर शायद ताज्जुब होगा कि इस इलाके की ज़मीन तो बहुत उपजाऊ है पर लोग दरिद्र है। गरीब लोगों को अपने खान-पहनने और उपयोग की प्रायः सभी चीज़े खरीदनी पडती है। इसलिए यहॉ बाजारों की सख्या कुछ अधिक है। इनमें बेतिया, मंगहा, चुहडी और चैनपटिया के बाजार मशहूर है। इन बाज़ारो मे बुनियादी स्कूल के बच्चे अपने घर की चीजे ख़रीदने जाते है, पर अब वे आखे खोलकर सौदा खरीदते है। वे इस बात का पता लगाते है कि किस बाज़ार मे कौन सी चीज सस्ती मिलती है, बाजार कब कब लगते हैं, उनमे सौदा बेचनेवाल कहा के है, देशी हैं या विदेशी, यदि विदेशी है तो उनकी पोशाक कैसी है, बाज़ार मे कौन-कौन सी विदेशी चीजे बिकने को आती हैं, वहा पानी, पेशाब और पाख़ाने का क्या प्रबन्ध है इत्यादि। इसी आधार

पर बच्चे मेलो का भी पर्यवेक्षण करते है। इस इलाके मे लौरिया और अरेराज के बहुत भारी मेल लगते है।

आमोद-प्रमोद और त्यौहार—यद्यपि बुनियादी स्कूलों का इलाका गरीब और पिछड़ा हुआ है, तो भी आमोद-प्रमोद के खयाल से बिहार के किसी हिस्से से पीछे नहीं है। यहाँ के लोग भिन्न-भिन्न मौसमो मे भिन्न-भिन्न तरह के आमोद-प्रमोद करते और त्यौहार मनाते हैं। हमारे यहाँ के आमोद-प्रमोद और त्यौहारो में संगीत की प्रधानता सदा से रही है; और इस संगीत मे यहाँ की सभ्यता सम्बन्धी बाते अब भी पायी जाती है। लेकिन उनमे इतने विकार उत्पन्न हो गये हैं कि क्या आमोद-प्रमोद और क्या त्यौहार, सभी अपने लक्ष्य से दूर जा रहे हैं।

इसलिए बुनियादी स्कूलो के बच्चे इस बात पर ध्यान देने लगे हैं कि उनके आमोद-प्रमोद और त्यौहार के मौको पर लोगो का खाना-पीना और पहनना कैसा होता है, साल में कितने त्यौहार होते हैं, जिस त्यौहार का जो लक्ष्य है उस लक्ष्य से वह त्यौहार मनाया जाता है या नहीं। बच्चे उन त्यौहारों के इतिहास का पता लगाने की कोशिश करते हैं और यह भी कोशिश करते है कि ऐसे मौकों पर जहाँ तक सम्भव हो सके उनके अभिभावक देशी चीजो का ही इस्तेमाल करें।

आने-जाने के साधन—हालाकि नील की कोठियों से बेतिया के इलाके को एक बहुत बड़ा धक्का पहुंचा है, पर उनसे इतना फ़ायदा अवश्य हुआ है कि आने-जाने के साधनों में बिहार के दूसरे हिस्सों की अपेक्षा यहाँ की सडके बहुत अच्छी हैं और उनकी संख्या भी बहुत है। इसलिए बरसात के सिवा और दिनों में आने-जाने की बड़ी सुविधा है। निलहे लोगों के चले जाने के कारण सड़कों की हालत अब धीरे-धीरे ख़राब होने लगी है। इसका उपाय करने के लिए बुनियादी स्कूलों के बच्चों ने जहाँ-तहाँ ज़रूरत समझ कुछ दूर तक सडकों की मरम्मत करना शुरू कर दिया है (जैसे तिरहुति-टोला और रामपुरवा में)। बच्चे अपने आस-पास की गलियों को नियमित रूप से बुहारने का काम करते है और बड़ी-बड़ी सडकों को हफ़्ते में एक बार साफ करत हैं। नालियो के पानी के निकास के लिये पन-सोख गड्ढे भी बनाये गये हैं। हैजा, प्लेग जैसी भयंकर बीमारिया फैलने पर गाववाले किस्मत ही के भरोसे हाय-हाय किया करते थे, पर आज बुनियादी स्कूलों के बच्चे अपने शिक्षकों के साथ रोगियों की सेवा करते हैं और बीमारी शुरू होते ही

बड़ी मुस्तैदी के साथ पब्लिक हैल्थ ऑफिसर को बुलवाकर दवादारू का इन्तज़ाम करत है।

समाज-सेवा—बुनियादी स्कूलों की स्थापना से लोगों में काफी जागृति हुई है। बच्चों ने स्कूलों को गाववालों के मनोरंजन की जगह बना दिया है। कभी वे अभिनय से या सगीत से या सजावट से उनका मनोरंजन करते हैं, कभी सामूहिक कसरत दिखलाकर (Mass Drill) अपनी फुरती और चुस्ती का नमूना पेश करते हैं और कभी देहात की चीजों को इकट्ठी करके और संग्रहालय मे सजा कर उन्हें हैरत में डाल देते हैं। इन बच्चों ने स्थानीय अन्ध-विश्वासों को दूर हटाने मे, लोगों के दिलों में से झूठे डर निकालने मे और गाववालों को दूर-दूर की खबरों मे दिलचस्पी पैदा करने मे पूरी मेहनत की है।

समवाय

सामाजिक प्रतिवेश तो बुनियादी स्कूल के बच्चों के लिए एक व्यावहारिक क्षेत्र है। इस क्षेत्र में बच्चे सच्चे नागरिक बनने की शिक्षा प्राप्त करते हुए शुरू से ही समाज की सेवा करने का अभ्यास करते हैं। सामाजिक-व्यावहारिक कार्य करने मे बच्चो को लोगों को समझाने—बुझाने, स्वदेशी का प्रचार करने और अन्ध—विश्वास छुड़ाने वगैरा के काम भी करने पडते हैं। इन कामो मे उन्हे मातृभाषा, हिसाब-किताब, सामान्य—विज्ञान इत्यादि विषयो का सहारा लेना पडता है और इस तरह वे स्वाभाविक रूप से ही समवाय शिक्षा प्राप्त करते चले जाते हैं। कुछ उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो जायगी।

आत्मभाव प्रकाशन—बच्चे शरीर के विभिन्न अंगों, कपडो, क्लास के कमरों तथा दिन-रात के जीवन की घटनाओ के सम्बन्ध मे बाते किया करते हैं और इनके बारे में अपनी राय भी प्रकट करते है।

कहानियाँ—बच्चे त्यौहारों, तीर्थ-स्थानो, ऐतिहासिक स्थानो के भूषण, इत्यादि के सम्बन्ध मे कहानियाँ सुनते और कहते हैं। बच्चों को अपनी सामाजिक परिस्थिति, घर, स्कूल और गाव, समाज के हित की स्थानीय व्यवस्थाएँ, स्वास्थ्य-रक्षा और आरोग्य-शास्त्र; स्थानीय दस्तकारियाँ; उत्सव और त्यौहार इत्यादि बातों के बारे मे कहानियाँ सुनायी जाती हैं।

सामान्य विज्ञान—शिक्षक लोग बच्चों को खान-पान, रहन-सहन मकान, इत्यादि के सम्बन्ध मे फैली हुई बुराइयाँ समझाते हैं और इन बुराइयो को दूर करने की कोशिश करते हैं।

चित्रकला—भूगोल के नये पाठ्यक्रम के आधार पर बच्चे तरह-तरह के नक्शे खींचने तथा पैमाने पर ड्राइंग करने का अभ्यास करते है।

मौजूदा पाठ्यक्रम के बारे में विचार

कताई—दो साल के अनुभव के आधार पर अभी तो सिर्फ़ इतना कहा जा सकता है कि पाठ्यक्रम में दी हुई प्रक्रियायें बच्चों के अनुकूल हैं और उनम बच्चों के मानसिक विकास के लिये पूरी सामग्रियाँ हैं। इसलिए पाठ्यक्रम मे परिवर्तन करने की कोई ख़ास जरूरत नही मालूम पडती।

बाग़वानी—बच्चो की तबियत बाग़बानी में बहुत ज़्यादा लगती है और पठ्यक्रम में जो कुछ दिया गया है वह बच्चो के अनुकूल है।

मातृभाषा—पाठ्यक्रम मे दिये हुए मातृभाषा संबधी विषयों के पढ़ाने मे कोई भी कठिनाई नहीं हुई, लेकिन आदि मानव और प्राचीन काल के मनुष्यो के संबंध की कहानियाँ अब तक समवायी ढंग से नहीं पढाई जा सकीं। ये बातें सामाजिक विज्ञान के विषय में भी स्थान रखती हैं, पर वहाँ भी समवाय के द्वारा इनकी पढाई नहीं हो सकी और तीनो मे से किसी भी प्रतिवेश को इसका स्वाभाविक आधार नहीं बनाया जा सका।

कहानियों में आकस्मिक घटनाओं से बचने की कहानियाँ रखी जायें तो अच्छा हो; (जैसे, अंधा, लॅंगड़ा, काना, होने से बचने की कहानियाँ)।

हिसाब—पाठ्यक्रम मे दी हुई बातो का ज्ञान बच्चों को अच्छी तरह हो गया, पर किसी-किसी स्कूल मे वहाँ सामाजिक प्रतिवेश के कारण देशी हिसाब पढ़ाना पड़ा है। वृन्दावन के इलाके में दर्जन, गाही, गडा, गिरह, सेर, छटाँक, पसेरी, धूर, कट्ठा, बाँस, ज़रीब, काड़ी इत्यादि के प्रचलित हिसाब सिखाने की सख्त जरूरत है। बुनियादी स्कूलों मे बच्चे जोड़-बाकी, गुणा भाग, रुपया, आना, पाई, छटाँक, सेर, पसेरी, मन इत्यादि के हिसाब लगाने की क्रियाएँ तो सीख जाते है पर उनके घरो में काम आनेवाले नाप-तौल के पैमाने इन निश्चित पैमानो से इतने भिन्न हैं कि वे अपने घरेलू हिसाबों को न तो समझ ही सकते और न लगा

ही पाते हैं। बच्चो के अभिभावक बुनियादी स्कूलों में दो साल की पढ़ाई के बाद उनसे यह आशा करते हैं कि वे घरेलू हिसाबों को समझें-बूझें और हल करें, पर ऐसी बात हमारे स्कूलो के कम बच्चों मे पायी जाती है। इसलिए हम लोग यह चाहते हैं कि हमारे यहा के बुनियादी स्कूलों मे देशी हिसाब-किताब ज़रूर पढाया जाय।

सामान्य विज्ञान—पाठ्यक्रम में पढाई संबंधी वैज्ञानिक बातों का ज़िक थोड़ा-बहुत है, पर उन्हे यदि निम्नलिखित ढंग से बढा दिया जाय तो इससे शिक्षकों को पूरी मदद मिलेगी—

यंत्र-संबंधी क्रियाओं का ज्ञान—(ओटाई करते समय) सलाई ओटनी और हाथ ओटनी मे फर्क—ओटनी मे तेल डालने की जरूरत—ओटने के पहले कपास सुखाने की ज़रूरत—बिनौले के चारों तरफ रेशे सटे रहने का कारण, इत्यादि।

(तुनाई करते समय)—वर्धा रुई की खोलाई क्यों—नवसारी की तुनाई क्यों—गदगी और कचरा बारी-बारी से क्यों दूर किये जायॅ—रेशों को समानान्तर करने की जरूरत क्यों—तुनी हुई रुई तुरंत क्यों धुनी जाय—इत्यादि।

(धुनाई करते समय)—कमठा, मूल, सादरी की जरूरत क्यो—सादरी को एक ओर उठाने की ज़रूरत क्यों—तॉत पर गोटिले की मार आड़ी क्यों नहीं—तॉत में लगी हुई रुई बिना छुटाये धुनना क्यो नहीं—बरसात में तॉत जल्द खराब क्यों—धुनने से पहले तॉंत पर घास का रस क्यों लगाते हैं—रुई को तॉत के आगे वाले हिस्से से ही क्यों उड़ाते हैं—लटकन की रस्सी नारियल ही की क्यों—धुनकी समतेल क्यों रक्खी जाती है—आत्मा नहीं रहने से क्या हानि हो—इत्यादि।

(पूनी बनाते समय)—पूनियॉ हत्था और सलाई के बदले हाथ से क्यों नहीं बनाते—पटरी तिरछी क्यों—पूनियॉ निश्चित लम्बाई की क्यों—आने-आने भर की क्यों—एक ओर से अगूठा लगाना चाहिए या नहीं—पूनियॉ सुरक्षित रखने की ज़रूरत क्यों—पूनी सलाई की परिधि निश्चित क्यों—हत्था और पटले की निश्चित लम्बाई क्यो—इत्यादि।

(तकली से कताई करते समय)—गत्ते का तख्ता नीचे रखने की ज़रूरत क्यो—तकली की डंडी में काला रग क्यों—नाक की ज़रूरत क्यों है—ज्यादा सूत, ढीली कुकडी या अनी घिस जाने से गाते कम क्यों—कुकडी की शकल गावदुम क्यों—राख लगाने की जरूरत क्यो—अटेरन पर लपेटते समय गुणा × का चिन्ह क्यो—काते हुए सूत पर भिगोया कपडा क्यों—इत्यादि।

(चरखे से कताई करते समय)—माल पर गल क्यों लगाते हैं—चमड़े, रस्सी और लकडी की चमरखों में भेद—बिहार चर्खे मे तीन फुटा परेता क्यों—उतारते वक्त सूत में उंगली लगाने की जरूरत क्यों—असमान सुत से क्या हानि—कम कसवाले सूत से किस को परेशानी—कस निकालते वक्त तारो को एक साथ सटाकर क्यो नहीं रखते—इत्यादि ।

समाज विज्ञान—जाकिर हुसैन कमेटी की रिपोर्ट मे समाज-विज्ञान का जो पाठयक्रम दिया गया है उसके व्यवहारिक प्रयोग मे अभी तक कहीं कुछ कठिनाई नहीं हुई । नागरिकता का शिक्षा संबधी जो पाठयक्रम दोनो ग्रेडो के लिये रखा गया है उसे बच्चे बिना किसी दबाब के उद्योग-सबधी कामों को करते वक्त हँसते-खेलते सीख लेते हैं, जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है । बच्चे अवसर मिलने पर अपने सामाजिक प्रतिवेश का अच्छी तरह अध्ययन करते हैं और अपने अनुभवों के बारे में रिपोर्ट भी तैयार करते जाते हैं ।

वृन्दावन (बेतिया) का इलाका एक ऐसा इलाक़ा है जहाँ गौतम बुद्ध, महावीर, अशोक, संघमित्र, राजा जनक, चाणक्य इत्यादि महापुरुषों ने अपने जीवन का बहुत सा समय जनसेवा में बिताया है । उस जमाने के कुछ स्मारक आज भी वर्तमान है । वे स्मारक बुनियादी स्कूलो से इतने नजदीक हैं कि बच्चे छुट्टी के दिनों में उन स्थानों की यात्रा किया करते हैं । इन स्मारकों के पर्यवेक्षण के बाद बच्चे अक्सर इस तरह के सवाल पूछा करते हैं:—लौरिया का स्तभ किसने गाड़ा था—इसे यहा गाड़ने की क्या ज़रूरत थी—खभे की लिखावट का क्या मतलब है—चाणकी गढ का नाम क्यों और कब पडा—चाणकी कौन था—बसाढ (वैसाली) का किला किस जमाने का है और उसे किसने बनवाया था—इत्यादि-इत्यादि । इलाके के भीतर जहॉ-तहॉ निलहे गोरो की कोठियों को देखकर वे सहज ही पूछते हैं कि वे निलहे गोरे कौन हैं या कौन थे और इन्होंने हम लागों पर कैसे अधिकार बसा लिया । शिक्षको न बच्चों क इन कौतूहल-पूर्ण प्रश्नों का समाधान करके उनके ज्ञान को बढाया है और इस तरह सामाजिक प्रतिवेश से लाभ उठाया है ।

हमारा इलाक़ा हिमालय की तराई के पास है । इसलिए वहॉ तिब्बती, नैपाली इत्यादि गैर-मुल्की लोग भी तिजारत के लिए आते जाते रहते हैं । बच्चे इनके संबंध में भी प्रश्न पूछा करते है और शिक्षक लोग उनकी बुद्धि के मुताबिक बतलाने की कोशिश करते हैं ।

उपरोक्त विषयो का समावेश हमने सामाजिक विज्ञान में किया है और इन्हे स्थायी रूप से पाठ्यक्रम में स्थान देने का विचार भी रक्खा गया है। स्थानीय इतिहास सबधी पाठ्यक्रम अभी तैयार किया जा रहा है। दूसरे ग्रेड में भूगोल का प्रारम्भिक ज्ञान (जो पाठ्यक्रम के बाहर की चीज़ है और जिसकी स्वीकृति हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के मंत्री महोदय ने दे भी दी है) देना दो कारणों से जरूरी समझा गया। एक तो इस ग्रेड के बच्चों को इन बातों के बतलाने की ज़रूरत महसूस हुई और दूसरे उन्हे तीसरे ग्रेड से ज़िले का भूगोल पढ़ाने के लिए भी तैयार करने की जरूरत है।

संगीत और व्यायाम—बुनियादी स्कूलों मे बच्चे निम्नलिखित गीत गाते हैं —(१) दस्तकारी की प्रक्रियाओं और (२) दस्तकारी के महत्व के सबंध मे, (३) कर्म सगीत, (४) समाज सेवा या सामाजिक सुधार, राष्ट्रगौरव या राष्ट्र सेवा के बारे मे, (५) प्राकृतिक सौंदर्य सबधी (६) आचार-नीति सम्बन्धी, (७) ग्रामीण-गीत, (८) आध्यात्मिक भजन, इत्यादि। इन गानों को बच्चे मिलकर एक स्वर से गाते हैं।

बुनियादी स्कूलों के इलाके मे प्राचीन ग्रामीण नृत्य की कुछ रूपरेखा अभी तक मौजूद हैं। इन नृत्यों मे सरल से सरल और गम्भीर से गम्भीर भाव देखने को मिलते हैं। बच्चे नृत्य भी करते है और गाते भी है। शिक्षक इन नृत्यों और गीतो को सुरक्षित रखने की कोशिश करते हैं। ऐसा करने से उनका स्वर ठीक होता जाता है और धीरे-धीरे उन्हे राग-रागनियो की परख का आरम्भिक ज्ञान भी अदृश्य रूप से मिलता जाता है।

बच्चे तरह-तरह के देहाती खेल खेलते हैं। स्कूलों में झूला और चढ़-फिसल का प्रबन्ध किया गया है। बच्चे खेलों में इतना मन लगाते हैं कि हटाने पर भी हटने को तैयार नहीं होते। जिन खेलों के साधन और सामान में पैसा तो ज़्यादा खर्च हो और उनसे लाभ कम हो, ऐसे खेलों का प्रबन्ध नहीं है और न करने का कोई विचार है। इनके बदले थोड़ी जगह मे और बिना साधनो की सहायता के खेले जाने वाले देहाती खेल खिलाये जाते हैं। इन खलो के बच्चों का मानसिक विकास तो होता ही है, साथ ही साथ शिक्षक को उन बच्चों की सहज बुद्धि के व्यावहारिक विश्लेषण के मौके मिलते हैं क्योंकि ऐसे मौके पर बच्चे पूरी आजादी के साथ अपने मनोवेगों को दिखलाते हैं (जैसे खेल मे बेईमानी,

कमज़ोरों से फायदा उठाना, इत्यादि) इस तरह व्यायाम के पाठ्यक्रम में परिवर्तन करने की कोई ज़रूरत नहीं मालूम होती ।

समवाय कब होना चाहिए

समवाय क्रियाओं के साथ-साथ होना चाहिए या बाद मे, इसके सम्बन्ध मे कोई निश्चयात्मक दलील नही पेश की जा सकती है । बहुत-सी क्रियाऐ ऐसी है जिन्हें बच्चों को तुरत सिखाना है और जिनके सिखाने मे ज़्यादातर बच्चे ग़लती करते पाये जाते है । ऐसे मौको पर क्रियाओ के भीतर समूची क्लास का ध्यान आकर्षित करके प्रदर्शन करने की जरूरत पडती है । कुछ ऐसी क्रियाएँ है जिन्हे बच्चे सीख गये है पर एक-आध बच्चा उनमे गलती करता है । ऐसे मौके पर उद्योग की सारी क्रियाएँ बन्द न करके, उस ख़ास बच्चे को उन क्रियाओ मे सहायता दी जाय । दोनो हालतों में यन्त्र-सम्बन्धी ज्ञान देने के लिये शिक्षक के तर्क का आश्रय लेना पडता है । जहाँ तक यान्त्रिक क्रियाओं का सम्बन्ध है, वहाँ तक तो उद्योग की क्रियाओ के भीतर ही व्यक्तिगत या सामूहिक ढग से आवश्यकतानुसार समवाय का काम हो सकता है, पर समवाय के अन्य विषयो का ज्ञान देने के लिए क्रियाओं के बाद ही मौक़ा निकालना पडेगा । इसका मतलब यह नहीं है कि बच्चे उद्योग पर ध्यान न देकर विषयों क फेर मे पड़ जायँ । ये दोनो चीज़ें एक दूसरी की पूरक हैं और इनका समवाय इस ढग से किया जाना चाहिए कि वे अलग-अलग न जान पड़ें ।

बाकी दो प्रतिवेशों के समवाय का प्रश्न उद्योग की क्रियाओं से सम्बन्ध नहीं रखता, क्योंकि इन प्रतिवेशों के पर्यवेक्षण के भीतर ही समवायी ज्ञान देने के काफ़ी मौक़े मिल जाते हैं ।

उपसंहार

प्रान्त के दो वर्षो के अनुभव के बाद यह मालूम हुआ है कि पाठ्यक्रम के बहुत बडे भाग का समवाय उद्योग क्रियाओ के साथ ही किया जा सकता है और बाक़ी का बाक़ी दो प्रतिवेशो के साथ । जिन थोडे विषयों का समवाय सीधे और स्वाभाविक ढग से नहीं हो सका है उनकी जरूरत भी हम लोगो ने अभी तक नही महसूस की है । सम्भव है आगे चल कर उनका भी समवाय स्वाभाविक ढंग से किया जा सके ।

चौथा भाग

अनुबन्ध की पद्धति

अनुबन्ध : ऐतिहासिक विवेचन और मौजूदा तसवीर

[अब्दुल ग़फ़ूर]

गेटे (Goethe) ने कहा है, "हालाँकि संसार समष्टि रूप से आगे बढता रहता है, लेकिन नवयुवक को सदा अपनी यात्रा बिल्कुल आरम्भ से शुरू करके व्यक्तिगत रूप से संसार की सस्कृति के विभिन्न युगो मे से होकर गुजरना चाहिए।" अनुबन्ध का नया सिद्धान्त भी इसी तरह के ऐतिहासिक और मनोवैज्ञानिक अनुभवो में विश्वास करता है। यह सिद्धान्त स्कूल की शिक्षा के पुराने तार्किक और बने-बनाये अनुभवों को नहीं मानता। शिक्षक का सम्बन्ध इस नये प्रयोग मे सिर्फ विपय से नहीं होता बल्कि वह तो विषय को एक समष्टि और आगे बढ़ते हुए अनुभव का एक अग समझता है। इसका उद्देश्य यह है कि बच्चे को मानव-जीवन के उन पहलुओं में जीवन बिताने का अवसर दिया जाय जिन्हें स्कूल के पाठ्यक्रम में विभिन्न विषयों के नाम से शामिल कर दिया गया है, ताकि वह जीवन से बिल्कुल अलग और उदासीन रहने के बजाय जीवन के अनुभवो को आगे बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण अंग की तरह काम करे। दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि शिक्षा का सिद्धात बच्चे को एक खोज करने वाले यात्री की तरह जीवन के उन पुराने लेकिन अनिश्चित रास्तो पर चलता रहता है जिनपर चलकर मनुष्य ने विभिन्न युगो मे सच्चाई की नयी-नयी रोशनियाँ प्राप्त की हैं। सक्षेप मे यह प्रयोग तालीमी दुनिया में व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सिद्धान्त की व्यावहारिक पूर्णता है।

अनुबन्ध के सिद्धान्त का दार्शनिक और समाज-वैज्ञानिक प्रारम्भ सबसे पहले जर्मन दर्शनिक ज़िलर (Ziller) के सास्कृतिक युग के सिद्धान्त मे मिलता है। इस सिद्धान्त की हलकी-सी झलक हमें बहुत से विचारकों और शिक्षा-शास्त्रियो के विचारो में मिलती है जिनमें गेटे और कान्ट (Kant) के नाम भी हैं। विषयो का एक विशेष केन्द्र नियत करने का जो सिद्धान्त (Theory of Concentration) ज़िलर ने पेश किया था उसे डाक्टर रेन (Rein) ने बालक शूल

(Volkschule) और डाक्टर स्टॉय (Stoy) और डाक्टर फ्रिक (Frick) ने जमनाजियम के लिए तफसील के साथ तैयार किया।

रूस के युनीफाइड लबर स्कूल मे जो शिक्षा दी जाती थी उसकी नींव भी इसी सिद्धान्त पर थी कि परिश्रम या हाथ का काम (Labour) ही सब तालीमी कामो का केन्द्र है। इस योजना मे बच्चो की प्रवृत्तियो के रूप मे विभिन्न प्रकार के अनुबन्धो के द्वारा शिक्षा दी जाती थी। विषयों का अलग-अलग विभाग करने के पुराने तरीके को बिल्कुल छोड़ दिया गया था और तमाम विज्ञान और मानव-जीवन से सम्बन्ध रखने वाले विषयों को तीन कालमो मे इस तरह बाँट दिया गया था कि परिश्रम को तो बीच में रक्खा गया और समाज व प्रकृति को उसके इधर-उधर। रूस का यह प्रयोग उन हद से ज़्यादा जोशीले राजनैतिक कलाबाजों के लिए एक अच्छी खासी चेतावनी है जो पहले तो तालीमी योजनाओं में जल्दबाज़ी से काम लेते हैं और बाद में अफसोस से हाथ मलते हुए प्रतिशोध के तौर पर फिर पुराने तरीकों पर चलाने लगते हैं। सन् १९२३ मे अनुबन्ध का तालीमी कार्यक्रम शुरू करने के बाद तुरन्त यह आवश्यकता अनुभव की गयी कि कुछ विषयो को इस बनावटी और कठोर अनुबन्धित प्रणाली से अलग किया जाय। धीरे-धीरे जब उत्साह ठडा पड गया और बडे बडे व्यक्तियो का प्रभाव कम होता गया, तो यह तरीक़ा, जिस पर रूस के लोगों के भावी भाग्य का निपटारा निर्भर समझा जाता था, समाप्त कर दिया गया और सन् १९३१ की सरकारी आज्ञा से इसके बजाय शिक्षा की यह पुरानी पद्धति चालू कर दी गयी जिसमे विषयों की शिक्षा अलग-अलग दी जाती थी। शायद यह प्रयोग उस पुरानी गलती का एक उदाहरण है जिसमे शिक्षा की व्यवस्था की नींव दल-बन्दियों के उद्देश्यों की खोखली जमीन मे रक्खी जाती है।

यूरोपीय महायुद्ध के बाद ऑस्ट्रिया की फेडरल रिपब्लिक मे शिक्षा की जो नयी व्यवस्था बनी या म्यूनिच (Munich) के स्कूलों में कर्शनटाइनर (Kerschensteiner) ने जो नया पाठ्यक्रम बनाया उसकी नींव भी अनुबन्ध के सिद्धान्त पर थी।

हम देखते हैं कि पिछली शताब्दी से अनुबन्ध के प्रश्न पर अमेरिका मे बहुत ज़्यादा दिलचस्पी ज़ाहिर की जा रही है। हर्बार्ट (Herbart) और डाक्टर मैक्मरी (Mcmurry) ने ज़िलर के अनुबन्ध के सिद्धान्त को अमेरिका की परि-

स्थिति के अनुकूल बनाने की कोशिश करके इस पद्धति का प्रारम्भ किया। पिछली शताब्दी के अन्त मे कमिटी ऑफ टैन (Committee of Ten) ने प्रायमरी शिक्षा पर और कमिटी आफ फिफ्टीन (Committee of Fifteen) ने सेकन्डरी शिक्षा पर जो रिपोर्टें दीं उनसे अनुमान होता है कि शिक्षा को जीवन के निकट लाने का प्रश्न उस युग मे कितना महत्व प्राप्त करता जा रहा था। वर्तमान शताब्दी के आरम्भ मे डी-गार्मो (De Garmo) की योजना हमारे सामने आती है जिसमे आर्थिक पहलू को शिक्षा की बुनियाद बनाने पर जोर दिया गया है, या मैक्मरी की योजना जिसमें शिक्षा की बुनियाद मानव-जीवन से सम्बन्ध रखने वाले विषयों पर रक्खी गयी है, या कर्नल पार्कर (Parker) की योजना जिसमें विज्ञान को शिक्षा का केन्द्र बनाने की तरफ ध्यान दिलाया गया है। यह बात आश्चर्य मे डालती है कि बुनियादी शिक्षा के तीन सिद्धान्त इन तीन योजनाओं से कितने अधिक मिलते-जुलते हैं।

उस समय से अब तक शिक्षा के इस तरीके के साथ अमेरिका में दो बड़े आदमियों के नामों का सम्बन्ध है। ये दोनों केवल शक्तियां ही नहीं हैं बल्कि शिक्षा के जगत में दो ऐसी शक्तियाँ हैं जो इस दुनियाँ के तालीमी विचार और काम में जीवित आदोलनो का रूप धारण कर चुकी हैं और जिनका असर अमेरिका से बाहर के देशों में भी फैल चुका है। इनमें से एक तो विचारक जॉन डीवी (John Dewey) है और दूसरा एक शिक्षक कर्नल पार्कर। इन दोनों ने शिकागो में अपने-अपने प्रायोगिक स्कूलों मे अनुबन्ध शिक्षा की योजनाएं तैयार की हैं।

यह बात गौर करने की है कि अनुबन्ध के मौलिक सिद्धान्त और उनको कार्यरूप मे लाने के तरीके किस तरह बदलती हुई आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक परिस्थिति के साथ बदलते रहते हैं। हर्बर्ट के अनुयायियों का ख़याल है कि पूरे पाठ्यक्रम का केन्द्र इतिहास होना चाहिए। मालूम होता है कि ये लोग गौण रूप से फिक्टे (Fickte) के विचारों और उसकी फिलासफ़ी से प्रभावित हुए हैं क्योंकि जेना (Gena) में हर्बर्ट फिक्टे का एक मेहनती शिष्य रह चुका था। जर्मन सम्राट के विचार

मे जर्मनी की शिक्षा का उद्देश्य यह है कि उससे बच्चों को सच्चा जर्मन बनाया जाय । रूस के स्कूल परिश्रम को, पार्कर के स्कूल भूगोल को और हमारी योजना दस्तकारी को मूल मानती है। इन बातों को देख कर यह अनुमान होता है कि शिक्षा की योजनाओ और परिस्थिति के प्रभाव मे आपस मे कितना गहरा सम्बन्ध होता है।

लेकिन इससे भी ज़्यादा. महत्वपूर्ण बात यह है कि इन तमाम योजनाओं का मनोवैज्ञानिक मूल मास्तिष्क की वह विचार कल्पना है जिसे साधारण तौर पर हर्बर्ट के मनोविज्ञान के नाम से पुकारा जाता है। हर्बर्ट के नज़दीक आत्मा में विचारों के सिवा और कुछ नहीं है। हमारी भावनाऐ और हमारे उद्गार विचारों के परस्पर सम्बन्ध से ही उत्पन्न होते हैं। वह इस बात पर जोर देता है कि हमारी सब दिलचस्पियों, इच्छाओं और प्रगतियों का मूल हमारी विचार-धाराऐं ही हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार अगर हम विचारों के घेरे को पूरा कर दें या अध्ययन और पर्यवेक्षण के द्वारा बच्चे के लिये ज़रूरी विचारों का भंडार प्रस्तुत कर दें, तो ये विचार अवश्य स्वय ही बच्चे के व्यक्तित्व का नैतिक आधार बन जायंगे और फिर एक इच्छा-शक्ति के रूप में प्रगट हो जायंगे। नतीजा यह हुआ कि हर्बर्ट का यह सिद्धान्त कक्षा की पढाई की प्रणाली में कोई परिवर्तन नहीं कर सका और शिक्षक, जो अब तक बच्चे की स्मरण शक्ति से सहायता लेकर उसकी मानसिक शक्तियों का विकास करना चाहता था, अब उसके मस्तिष्क को विचारो से भरने लगा लगा। यद्यपि पाठ्यक्रम का यह नया सिद्धान्त इस बात पर ज़ोर देता था कि बच्चों को सत्य से परिचित कराया जाय, लेकिन इस सत्य तक पहुँचने का मार्ग यहाँ भी तर्क की कठिन घाटियो से होकर गुजरता था। इस तरह ज्ञान प्राप्त करने की सारी क्रिया अमल से दूर हो गयी।

लेकिन अनुबन्ध शिक्षा की नयी योजनाओं ने उन मौलिक सिद्धान्तों को एक बिलकुल नये मार्ग मे डाल दिया। इन योजनाओं का आधार समाजी और मनोवैज्ञानिक है। आधुनिक मनोविज्ञान ने ज्ञान और क्रिया के महत्वपूर्ण आपसी सम्बन्ध को हमारे सामने प्रकट कर दिया। मस्तिष्क की विचार-कल्पना (Conception) में फैलाव और गहराई पैदा हो गयी और जहाँ तक मानव जीवन की प्रारम्भिक सीढियो का सम्बन्ध है, विचारो के अतिरिक्त

इसमें कुछ और गतिशील कारण पैदा हो गये। नये स्कूल का मौलिक सिद्धान्त क्रिया-शीलता (Activity) है, चाहे यह क्रिया-शीलता मानसिक हो या शारीरिक। इसका उद्देश्य विचारों को इस तरह अन्धाधुन्ध ग्रहण करना नहीं है कि वे किसी चमत्कार से ऐच्छिक कार्यों का रूप धारण कर लें।

डीवी का कहना है कि विचार स्वयं कोई चीज़ नहीं और न वह स्वय कोई उद्देश्य ही हो सकता है। यह तो किसी कठिनाई को दूर करने की ज़रूरत से उत्पन्न होता है। इसका उद्देश्य इस कठिनाई पर विजय पाने का कोई उपाय सोचना है।उपाय पर गौर करना, मस्तिष्क में उसके परिणामों की एक तसवीर बनाना, उसके बाद अपने कार्यों की विभिन्न मजिले सोचना और उनमें अनुकूल क्रम पैदा करना, विचार के फल है। क्रिया का यह ठोस तर्क खाली सोच-विचार और कल्पित अनुसन्धान के तर्क से बहुत पहले पैदा होता है। इस तरह के विचार से जो आदते बनती हैं वे मास्तिष्क को सोच-विचार और अनुसन्धान के लिये तैयार करती हैं।

यहाँ हमें मास्तिष्क के प्रति एक नये रुख और उसकी उन्नति की एक नयी प्रक्रिया की झलक मिलती है। इसकी छाया हमे अनुबन्ध शिक्षा की आधुनिक प्रणालियों में दिखायी देती है। हर्बर्ट के अनुयायी ज्ञान को बौद्धिक बनाना चाहते हैं, पर नये तरीकों मे शिक्षक का मुख्य उद्देश्य उसे मनोवैज्ञानिक बनाना है।

बुनियादी शिक्षा की योजना और अनुबन्ध की प्रणाली का जो इस योजना का एक विशेष अंग है, आधार भी मस्तिष्क और शिक्षापद्धति की इसी विचार कल्पना पर है। लेकिन दूसरी पद्धतियों की कमियाँ, इसके संतुलन (Balance) और लचीलेपन से पूरी हो जाती हैं। यह पद्धति अनुबन्ध को उस भद्दी हद तक नहीं चढ़ा देती जहाँ अनुबन्ध जबरदस्ती की ठूँस-ठाँस मालूम हो। हमारी पद्धति इतनी अनिश्चित और अंधेरी नहीं कि वह एक अहंकारी शिक्षक के हाथ में जाकर सिर्फ़ एक दिखावटी और ऊपरी दिलचस्पी की चीज़ बन कर रह जाय।

मेरी राय में बुनियादी शिक्षा में अनुबन्ध का पहलू वह चीज़ है जो इस देश की शिक्षा के पाठ्यक्रम की समस्याओ का सबसे अच्छा हल है। स्कूल और समाज के बीच जो खाई बन गयी है यह सिर्फ उसी को दूर नहीं करेगा, बल्कि स्कूल के पाठ्यक्रम की सारी पुरानी व्यवस्था, जो ज्ञान और अनुभव को दो बिल्कुल

स्कूल ज्ञान के आधारवाली उस प्रक्रिया को भी अच्छी तरह क़ायम नहीं रख सके जो पुराने शिक्षक को जी-जान से प्यारी थी और जिसमें शिक्षक-ज्ञान का वह स्रोत था जिसमें विद्यार्थी अपने ज्ञान की प्यास बुझाते थे। सचमुच अगर हमारा उद्देश्य यह है कि हम बच्चे का मानसिक और समाजी विकास करें तो हमें विषयों की संख्या और पढने के सामान का परिमाण बहुत कुछ घटाना पड़ेगा, या इनकी जगह अनुबन्ध शिक्षा की कोई योजना जारी करनी पडेगी।

अब मैं संक्षेप में अनुबन्ध शिक्षा की उन अच्छाइयों को दोहराऊँगा जो हर्बर्ट के विचार से इसमे हैं और जिनके लिए पुराने शिक्षक के दिल में इतना आदर था·

(१) विषयों में आपसी अनुबन्ध पैदा कर देने से हमारे मानसिक जीवन में दृढ़ता और अविचलितता पैदा हो जायगी। अगर हम यह समझे कि हमारा "अहं' (Self) कोई ऐसा "कुछ" है जो बराबर विकास और उन्नति करता रहता है, तो इसकी एकता या व्यक्तित्व उसके साधारण ज्ञान और अनुभव की एकता पर निर्भर है।

(२) इससे विद्यार्थी संसार की कुछ उपयोगी दिलचस्पियों का अनुभव करने लगते हैं और अगर ज्ञान की किसी एक शाखा में उनकी दिलचस्पी पैदा कर दी गयी है, तो यह दिलचस्पी अनुबन्ध की शृखला के द्वारा दूसरी शाखा की तरफ़ स्थानातरित की जा सकती है।

(३) अगर हम अनुभव और ज्ञान के बीच अनुबन्ध पैदा कर लें तो हमारी ऐच्छिक क्रियाओं के बीच भी अनुबन्ध और एकता पैदा हो जाती है और अगर हम ज्ञान को अलग-अलग टुकड़ो में बाँट लें, तो बच्चे की प्रगति पर इसका कोई सम्मिलित असर नहीं होगा।

नये और पुराने ज़माने मे अनुबन्ध शिक्षा को जो महत्व प्राप्त था उसका विस्तृत विवेचन कर चुकने के बाद अब हमको प्रयोग और छानबीन की उस प्रक्रिया की तरफ भी दृष्टि डालनी चाहिए जो हमें इस तरह की अनुबन्ध शिक्षा की कोई पद्धति तैयार करने में मदद दे सके। शिक्षा की प्रक्रिया की गति भी जैव प्रक्रियाओं की तरह मर्ज़ी के मुताबिक़ नहीं बढ़ायी जा सकती। जल्दबाज़ी के निर्णय और ग़लत नतीजे हमें रास्ते से भटका देगे। शिक्षक और राज्य दोनों

अक्सर तत्काल फल देनेवाले कामों को प्रोत्साहित करने के फंदे में फंस जाते हैं और यही कठिनाइयाँ कमसे-से-कम एक प्रान्त में हमारी योजना के सामने भी आ चुकी हैं।

शिक्षा की प्रक्रिया एक बहुत ऊँची श्रेणी की सृजनशील घटना है। इसमें एक महान् कला के तमाम गुणों का होना ज़रूरी है। अन्य कलाओं की तरह इसपर भी वे ही नियम लागू होते हैं जो इसके आन्तरिक गुणों में और इसे प्रकाशित करनेवाले माध्यम की सीमितता में निहित हैं। शिक्षा की तसवीर बनाने के लिए हमारे पास बड़ा अच्छा चित्र-पट (Canvass) मौजूद है, पर दूसरे चित्र-पटों की तरह यह चित्र-पट भी एक ऐसे चौखटे में जडा हुआ है जो इसी के लिए अनुकूल और उपयुक्त है। यह चौखटा बच्चे के मनोवैज्ञानिक और नैतिक विकास का नियम है। हमें कोई नयी इमारत खडी करने में उस अवस्था में और भी देख-भाल और सावधानी की ज़रूरत पड़ती है जब ज़मीन हर तरफ़ कई पीढ़ियों के पुराने रिवाज़ों की इमारतों के खंडहरों से ढकी पड़ी हो जिन्हें साफ़ किये बिना नयी इमारत नहीं बनायी जा सकती।

दूसरे देशों में अनुबन्ध शिक्षा का जो पाठ्यक्रम बना है उसे सोचने में लोगों को बहुत ज़्यादा समय और परिश्रम लगाना पड़ा है। इसलिए यह सोच लेना कि बुनियादी स्कूल सिर्फ़ एक या दो साल के प्रयोगसे एक बिल्कुल नया कार्यक्रम तैयार करने में सफल हो जायँगे बुद्धिमानी की बात नहीं है। यह काम इतना कठिन और जटिल है कि डाक्टर फ्रिक और उसके सौ साथी जर्मन जमनाज़ियम में पूरे आठ साल तक परिश्रम और प्रयोग करने के बाद देश के सामने अनुबन्ध शिक्षा का एक कार्यक्रम रख सके थे। गत महायुद्ध के बाद ऑस्ट्रिया में शिक्षामंत्रियो के रिफार्म डिवीज़न ने जब हर ग्लोकल (Herr Glockel) के योग्य मार्ग प्रदर्शन में पाठ्यक्रम की बिलकुल नयी व्यवस्था का एक कार्यक्रम बनाने का काम हाथ मे लिया, तो सात साल के लम्बे प्रयोग के बाद जाकर कहीं ये लोग दिलचस्पियों के उन केन्द्रों का पता लगा सके जो विभिन्न अवस्थाओं के बच्चो की आवश्यकता और उनके मानसिक विकास से मेल खाती थीं।

पूना कॉन्फ्रेंस के अनुसार यह बात संभव है और शिक्षा की दृष्टि से लाभदायक है कि बचो को अनुबन्ध के ज़रिये से पढ़ाया जाय। लेकिन इस कॉन्फ्रेंस ने

यह भी जता दिया था कि अनुबन्ध ज़बरदस्ती ठूँस-ठाँस करके न पैदा किया जाय और शिक्षा का अनुबन्ध सिर्फ़ मूल-उद्योग स ही नहीं बल्कि बच्चे के समाजी और भौतिक चौगिर्द से भी पैदा किया जाय। इसलिए कि ये दोनों चौगिर्द शिक्षा की दृष्टि से बहुत उपयोगी अवसर पैदा कर सकते हैं और इनकी सहायता से बच्चों के मौलिक ज्ञान को बहुत बढया जा सकता है।

मूल उद्योग और दूसरे उद्योगों के बीच अनुबन्ध की क्या संभावनाएँ हैं, यह बात विस्तृत रूप से मालूम करने के लिए कई साल के लगातार प्रयोग और अमली जाँच पड़ताल की जरूरत है और इसके लिए उत्साही शिक्षकों से ज़्यादा अच्छे विशेषज्ञों की सलाह और मार्गप्रदर्शन ज़रूरी हैं। इनसे भी ज़्यादा ज़रूरत इस बात की है कि देश के भिन्न भिन्न भागों म जो लोग प्रयोग कर रहे हैं उनके कामों का सगठन किया जाय। अगर इस तरह मिलजुल कर काम न किया गया तो किसी संगठित योजना का बनना बहुत कठिन है। अमेरिका में अनुबन्ध की योजना के असफल रहने का असली कारण यह था कि योजना बनानेवाली कमेटी ने मिलजुल कर काम करने के महत्व पर अधिक ध्यान नहीं दिया। मिल-जुल कर काम करना सिर्फ़ इसलिए जरूरी नहीं कि उसके बिना इस तरह की किसी योजना का बनना असम्भव है, बल्कि इसलिए भी जरूरी है कि इसकी मदद से दिलचस्पी के उन केन्द्रों का पता चल जाता है जिनसे शिक्षा को जीवन के वे अनुभव मिलते हैं जो इस योजना के दायरे में अच्छी तरह नहीं आते।

पाठ्यक्रम के हर विषय के लिए अलग-अलग लिखतों की कापियाँ या शिक्षकों की डायरियॉ होनी जरूरी हैं। साधारण तौर पर तो ये डायरियॉ शिक्षक के काम को ठीक ढंग पर चलाने और नियत्रण करने का एक साधन है, पर हमारे काम मे ये डायरियॉ पढ़ाई की कला और उसकी प्रक्रियाओं में एक सृजनशील कारण बन सकती है, ख़ास तौर पर प्रयोग के इस समय मे, जब हम भूल-चूक और जॉच-पड़ताल के मार्गों पर होकर चल रहे हैं। इन डायरियो मे उस योजना का तो बयान होगा ही जिसके आधार पर बच्चों को शिक्षा दी जानेवाली है, लेकिन डायरी का सबसे अधिक मूल्यवान भाग वह होगा जिसमें शिक्षक अपने अनुभवों के आधार पर यह लिखेगा कि उसने कितना काम कराया और किस तरह उसे बच्चों के दिमाग़ तक पहुँचाया। अगर हम इस बात की बिल्कुल सही लिखते रख सकें

कि पढ़ाते समय शिक्षक और बच्चो के बीच क्या-क्या बाते हुई तो हम अच्छी तरह बच्चे की मानसिक अवस्था और उसकी मानसिक आवश्यकताओं का पता चला सकते हैं और हमें मालूम हो सकता है कि बच्चे को उसके जीवन के निकट की वास्तविक (Concrete) वस्तुओं की सहायता से पढ़ाने में क्या अन्तर है। यह पद्धति शिक्षा-जगत मे कोई नयी नहीं है। रूस की जनरल रिसर्च लेबोरटरी ऑफ ऐज्युकेशन ने शीघ्र-लिपि लेखक (Stenographer) की सहायतासे इस तरह की पूरी-पूरी लिखते तैयार करवायी हैं और ये लिखतें अनुसन्धान का बडा कीमती साधन प्रमाणित हुई है। बच्चे के मास्तिष्क के इन गुप्त और अपरिचित रहस्यों का अनुसन्धान सम्भव है हमें कभी इस योग्य बना दे कि हम अपनी शिक्षा-पद्धति को या इसी तरह की दूसरी शिक्षा-पद्धतियों को ज्यादा दृढ़ नीवों पर खड़ी कर सके। यह बडे सन्तोष की बात है कि हमारे कुछ बुनियादी स्कूलों में इस तरह के प्रयोग भी हो रहे हैं लेकिन अभी हमें बहुत-सी लडाइयाँ जीतनी हैं। लोगों को सन्देह है कि शिक्षा के क्षेत्र में सिद्धात (Theories) व्यावहारिकता की जगह लेते जा रहे हैं और शिक्षक शिक्षा के सिद्धात निरूपण करने वाले विशेषज्ञ से पिछडता जा रहा है। हमारे यहाँ भी नयी तालीम ने शिक्षा के प्रश्नों पर लिखनेवाले काम करने वालों से अधिक पैदा कर दिये हैं। मैं चाहता हूँ कि हम शिक्षकों में जान फूँक सकें कि उनमें क्रियात्मक सहयोग जाग्रत हो जाय और वे शिक्षा के अनुसन्धान के महान कार्य में बराबर के हिस्सेदार बन जायं। हमें उनमें किसी तरह पुराने गुरुओं का-सा आत्म-विश्वास और उनकी-सी श्रद्धा पुनर्जीवित करने की कोशिश करनी चाहिए जिससे वे अनुभव करने लगें कि शिक्षा की समस्याओं को सुलझाने में उनका शामिल होना भी नितान्त आवश्यक है। इस बात से मुझे एक घटना याद आती है। शिक्षा-विभाग के डायरेक्टर ने एक शिक्षक से कहा कि वह अपने दैनिक काम का साल भर का एक काम-चलाऊ कार्यक्रम तैयार करलें। शिक्षक ने आश्चर्य से उत्तर दिया "काम—चलाऊ कार्यक्रम? मै किसी काम-चलाऊ कार्यक्रम में विश्वास नहीं करता। मैं तो आपको आपने अनुभव की सच्ची बातें बतला सकता हूँ।" मेरा दिल चाहता है कि हममे बहुत से ऐसे शिक्षक पैदा हो जायं जो हमें ऐसी ही सच्ची बात बता सकें क्योंकि अनुभव की बातें ही किसी ठोस शिक्षा-योजना की बुनियाद बन सकती हैं।

हमे इस बात की गहरी छान-बीन की ज़रूरत है कि ऐसे तरीके कहाँ-कहाँ चालू किये गये और उनके क्या-क्या नतीजे निकले। रूस क जटिल तरीके में हर कक्षा मे हर विषय के पाठ्यक्रम में दो या तीन ऐसी मूल बाते रक्खी गई थीं जिनका दायरा बडा था और जिनका आधार समाज विज्ञान पर था। इन मूल बातों की मदद से हर विषय में जितना सैद्धान्तिक मसाला इकट्ठा हो जाता था, उस पर विचार करके उसे नियमित रूप से क्रमबद्ध कर लिया जाता था और अन्त में मुख्य मूल बात के अनुसार जो व्यावहारिक नतीजे निकलते थे उनके आधार पर एक रिपोर्ट तैयार की जाती थी। आस्ट्रिया के स्कूलों मे शिक्षक को अपने सप्ताह भर के काम की रिपोर्ट तैयार करनी पडती है। डायरेक्टर इसे देखता है और इस पर हस्ताक्षर करता है। डिक्रोली-पध्दति मे बच्चे जो चार्ट तैयार करते हैं या पर्यवेक्षण की लिखते रखते हैं, उनका भी कुछ हद तक यही उद्देश्य है।

पूना कॉन्फ्रेंस और शिक्षा के एडवाइज़री बोर्ड, दोनो ने इस बात की आवश्यकता अनुभव की है कि बच्चो की शिक्षा का सिर्फ मूल उद्योग से ही नहीं बल्कि उनके चौगिर्द से भी अनुबन्धित किया जाना चाहिये। हम प्रयोग के तौर पर जो स्कूल चला रहे है उनमे भी इसी तरह की आवश्यकता अनुभव की गयी है। सेवाग्राम के स्कूल ने इस सिलसिले में एक हिम्मत का कदम बढाया है और अपने पाठ्यक्रम का आधार बच्चे की इन चार मौलिक आवश्यकताओं को बनाया है—भोजन, पानी, काम और खेल-कूद। यह पध्दति हर्बर्ट स्पैन्सर के विकासवादी सिध्दांतों और डिक्रोली-पध्दति से इतनी मिलती-जुलती है कि आश्चर्य होता है। डिक्रोली-पद्धति मे बच्चे की मौलिक आवश्यकताएं ये हैं—पहली भोजन, दूसरी प्राकृतिक तत्वों स रक्षा (मकान और वस्त्र), तीसरी शत्रुओं और खतरों से बचाव और चौथी काम यानी क्रिया और संगठन की आवश्यकता।

दस्तकारी ज्यादा से ज्यादा इनमें मे सिर्फ दो आवश्यकताओ के साथ लगाव पैदा कर सकती है और इसलिए ज़रूरी है कि हम अपनी पढाई मे इसकी कमी बच्चे की दिलचस्पी की दूसरी चीज़ों की सहायता से पूरी करें। छोटी कक्षाओ में कई चीज़ो को अनुबन्ध का केन्द्र बना कर और ऊँची कक्षाओं में

सिर्फ एक चीज़ को केन्द्र मान कर पढाना बच्चो की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की दृष्टि मे सबसे उपयोगी तरीका है। दिलचस्पी के उन केन्द्रों का चुनाव बच्चे के चौगिर्द का अच्छी तरह पर्यवेक्षण करने के बाद करना चाहिए। जैसे पानी का प्रश्न उन जगहों के लिये सबसे ज्यादा महत्व रखता है जहाँ का पानी खराब है। लेकिन जहाँ पानी अच्छा मिलता है वहाँ दिलस्पी का केन्द्र दूसरी चीजे बन सकती हैं। इसके अतिरिक्त हमें बच्चे की आवश्यकताओं, ऋतुओं के परिवर्तन, आस-पास के चौगिर्द, बच्चे की दिलचस्पी और उसकी भाषा के विकास की तरफ भी ध्यान देना चाहिए और इनमे से हर चीज़ से मदद लेनी चाहिए। कार्यक्रम मे सप्ताह में आधा दिन आस पास घूमने के लिए रखना चाहिए और इसके अतिरिक्त साल मे कम से कम छै सैरें होनी चाहिए। दिलचस्पी के केन्द्र का कार्यक्रम तो खुद शिक्षक के ही काम से विकसित होगा। यह भी बहुत जरूरी है कि शिक्षको के लिए एक काम-चलाऊ विस्तृत कार्यक्रम बना लिया जाय जो एक अच्छे उत्साही शिक्षक के लिए स्फूर्ति देने वाला हो और ढीले शिक्षक के लिये आदर्श का काम दे।

अन्त में मैं एक बार फिर इस बात पर जोर देना चाहता हूँ कि इस योजना मे अनुबन्ध का पहलू सिर्फ बुनियादी स्कूलो ही के लिए नहीं बल्कि पुराने ढर्रे के स्कूलों के लिए भी एक विशेष महत्व रखता है। अनुबन्ध के काम में मानसिक काम के परिणाम से ज्यादा उसकी अच्छाई को महत्व दिया जाता है। अनुबन्ध की बडी विशेषता यह है कि उसमें मानसिक शक्ति की बडी बचत होती है और बहुत ज्यादा कठिनाइयो के बिना मनुष्य स्वतन्त्रता के मार्ग पर आगे बढ़ता चला जाता है। यह योजना इस बात पर ज़ोर देती है कि मस्तिष्क को शुरू से आखिर तक शिक्षा के गहरे विचार पर केन्द्रीभूत रहना चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि बच्चे के लिए उसकी अवस्था के उस समय मे जब आदतें बनती हैं और जब उसमें कौतूहल उत्पन्न होता है, इस पद्धति की सहायता से सच्चाई के स्रोतों के मार्ग खुल जाते हैं और इस तरह उसके भावी विकास की दृढ़ नींव रक्खी जाती है। इससे उसमे आरम्भ ही से ध्यान, पर्यवेक्षण और प्रयत्न की आदतें पक्की होने लगती हैं। यह पद्धति ज्ञान को व्यावहारिक रूप देनेका पाठ पढाती है। इससे निर्णय और ठीक परिणाम निकालने की शक्ति पैदा होती है। यही

पध्दति स्कूल और जीवन का सच्चा सम्बन्ध स्थापित करती है । अपने व्यक्तिगत प्रयत्न में पूरी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता प्राप्त करना ही अनुबन्ध के सिध्दान्त का वास्तविक उद्देश्य है । प्रसिध्द शिक्षक कर्नल पार्कर, जो चार साल तक बराबर ससार की सबसे बड़ी लोकतन्त्री सरकार को अन्दरुनी झगड़ो की बुराइयों से बचाने की कोशिश मे लगा रहा, उसने अमेरिका के शिक्षकों के सामने अपना अनुबन्ध का सिद्धान्त रखते समय ये शब्द कहे थे–"सिर्फ लोकतन्त्र मे ही सम्भव है कि व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के सिद्धान्त को व्यावहारिक रुप दिया जा सके । व्यक्तिगत स्वतन्त्रता और अनुबन्ध के सिद्धान्त बिलकुल समान हैं । इसलिए ऐ मेरे साथियो ! ईश्वर, मनुष्य और लोकतन्त्र पर गहरी श्रद्धा रखते हुए मै अनुबन्ध के इस सिद्धान्त को सत्य के प्रस्ताव की तरह तुम्हारे सामने रखता हूँ ।"

यही शब्द इसी जोर के साथ बुनियादी योजना के अनुबन्ध के सिद्धान्त के बारे मे भी कहे जा सकते है ।

[अंग्रेजी से अनुवाद]

अनुबन्ध की पद्धति

[उत्तमसिंह तोमर]

बुनियादी शिक्षा को आरम्भ हुए लगभग तीन साल होने आये। इस समय मे बुनियादी ट्रेनिंग कालेजो मे कितने ही शिक्षकों को ट्रेनिंग दी गयी और बुनियादी कक्षाओं में कितने ही बच्चों ने शिक्षा पायी, पर अनुबन्ध की पद्धति— जिसपर काफी चर्चाएँ हो चुकी हैं—अभी तक गरमा-गरम बहस का विषय बनी हुई है। कुछ लोग कहते हैं कि यह तो समझ मे आनेवाली चीज ही नहीं है, और कुछ लोग इसे हौवा समझते हैं। वे कहते हैं—"हम बुनियादी शिक्षा को समझते हैं, इसके लक्ष्यों और उद्देश्यो को समझते है, 'उत्पादक उद्योग के द्वारा' या 'दस्तकारी के द्वारा' शिक्षा का क्या अर्थ है, यह भी समझते हैं पर अनुबन्ध की पद्धति क्या है, यह बिल्कुल नहीं समझते।" मुझे इसमे आश्चर्य की कोई बात नही मालूम होती।

'उत्पादक उद्योग के द्वारा शिक्षा' देने की कल्पना को समझना एक चीज़ है और उस कल्पना को व्यवहार मे लाने की कोशिश करना दूसरी चीज़ है। वे लोग, जिन्हें शिक्षको को ट्रेनिंग देनी पडती है या जिन्हें तीस बच्चों की कक्षा को पढाने मे अनुबन्ध की पद्धति का प्रयोग करना पड़ता है, अपने आपको ऐसी नदी के बीच खड़ा हुआ पाते हैं, जिसका तीर कही दिखायी नही देता। पर वास्तव मे इन्हीं लोगो को अपना किनारा ढूँढ़कर इस पद्धति की अच्छी तरह समझना है, ताकि वे उसे व्यवहार मे ला सकें। इस पद्धति को व्यवहार मे लाना कठिन है, पर असम्भव नहीं हैं। कोरी बातचीतो और चर्चाओ के द्वारा इसका ज्ञान नही हो सकता। इसे अच्छी तरह जानने और समझने के लिए धीरज और श्रद्धा के साथ काम करने की आवश्यकता है।

'अनुबन्ध' शिक्षा के क्षेत्र में कोई नयी चीज़ नहीं है। और इसका नया न होना ही नयी शिक्षा-पद्धति और साधारण शिक्षक की समझ के बीच एक दीवार बन गया है। अनुबन्ध की एक परिभाषा शिक्षक के दिमाग मे पहले से

ही जड़ जमाये हुए है, इसलिये यह इसे नयी रोशनी में देखने और समझने की चाहे जितनी कोशिश करे, पुरानी परिभाषा उसके विचारों पर प्रभाव डालकर सब मामला गड़बड़ कर देती है। बुनियादी शिक्षा के अनुबन्ध को अगर कोई दूसरा नाम दे दिया गया होता, तो कम-से-कम यह ख़राबी न पैदा होने पाती।

पुराने अर्थों में अनुबन्ध का तात्पर्य सबसे अधिक विचार-सहचर्य (association) माना जाता था--विशेषकर प्रायमरी कक्षाओं में--और इसका उपयोग किसी पाठ या प्रसंग को आरम्भ करने के लिए किया जाता था। जैसे, गाय का पाठ या तो एक जीती-जागती गाय को ही दिखला कर पढाया जाता था (हालाकि ऐसा बहुत कम होता था) या गाय के खिलौने या चित्र को दिखाकर। कभी-कभी किसी पाठ के द्वारा ऐसी बात भी सिखाई जाती थी, जो उस पाठ के विषय से मिलती-जुलती हो या उसके विपरीत हो। कभी कभी किसी विषय के एक प्रसंग से किसी दूसरे विषय के प्रसंग को समझाया जाता था।

कुछ लोगों की, जो बुनियादी शिक्षा को एक बिल्कुल नयी पद्धति समझते हैं, यह धारणा है कि अनुबन्ध, अपने पुराने अर्थ में, बुनियादी शिक्षा में बिल्कुल उपयोगी न होगा। पर ऐसी धारणा रखते हुए भी वे लोग शिक्षक के हाथ मे सिर्फ तकली देकर कपास, सूत व खादी की चर्चा छेड़ देते हैं और कहते हैं कि बुनियादी शिक्षा का अनुबन्ध यही है। यह निरी आत्मप्रवचना है। बुनियादी शिक्षा मे ही क्या, किसी भी शिक्षा में अनुबन्ध के पुराने अर्थ को फेक देना और छोड़ देना सभव नहीं है, और न ऐसा किया ही जायगा।

चारों तरफ यही सवाल पूछा जाता है कि आखिर यह नया अनुबन्ध है क्या? उस सवाल पर साधारण जवाब यह दिया जाता है-"यह अनुबन्ध है पढाई के विषयों का दस्तकारी के सामान के साथ, दस्तकारी की क्रियाओं के साथ, दस्तकारी के काम के साथ और बच्चे के प्राकृतिक और सामाजिक चौगिर्द के साथ अनुबन्ध।" यह बात ठीक तो है, पर पूरी नहीं है। ऐसी मोटी बातों मे शिक्षक का सन्तोष नहीं होता। सिर्फ यह कह देना कि जब बच्चे अटेरन पर सूत लपेट रहे हों, तब उन्हें गिनती सिखायी जाय और जब वे दो-दो या तीन-तीन बच्चो की टोलियो को दस्तकारी का सामान बाँट रहे हों तब उन्हे पहाडे सिखाये जायँ, इस पद्धति के तात्पर्य को समझाने के लिए काफी नहीं है, क्योंकि हमे तो हर रोज,

हर घंटे और हर मिनिट में तीस-तीस बच्चों की कक्षा को तरह-तरह के विषय, तरह-तरह की परिस्थितियों मे पढ़ाने के लिए इसका उपयोग करना है।

शिक्षण एक कला है। शिक्षा-मनोविज्ञान के इतने विकास के साथ यह एक विज्ञान भी बन गया है। इसलिए जब तक किसी शिक्षा पद्धति का मनोवैज्ञानिक आधार मज़बूत न हो और जब तक वह वैज्ञानिक न हो, तब्तक हम उसे उपयुक्त नहीं कह सकते। और, कोई भी पद्धति ठोस और वैज्ञानिक तभी हो सकती है, जब उसके पीछे कोई सिद्धान्त हो। नयी शिक्षा पद्धति के बारे में शिक्षक को ऐसे ही वैज्ञानिक ज्ञान की तलाश है और जब इसी तरह की कोई व्याख्या करने की कोशिश की जायगी, तभी अनुबन्ध का वास्तविक अर्थ लोगों की समझ में आ सकेगा।

साधारण तौर पर अनुबन्ध के लिये दो चीज़ें हमेशा ज़रूरी हैं। एक तो वह चीज़ जिसका अनुबन्ध किया जाय और दूसरी वह चीज़ जिसके साथ अनुबन्ध किया जाय। इसी तरह बुनियादी शिक्षा मे भी अनुबन्ध के लिये दो चीजे ज़रूरी हैं। एक चीज़ तो वह जिसका अनुबन्ध करना है, और दूसरी चीज़ वह जिससे अनुबन्ध की आवश्यकता पैदा हो। इस दूसरी चीज़ को बुनियादी शिक्षा में 'अवसर' कह सकते हैं। बुनियादी शिक्षा में अवसर और अनुबन्ध की जानेवाली चीज़ का आपसी सम्बन्ध शायद उस सम्बन्ध से भिन्न न जान पडे, जो अनुबन्ध के पुराने तरीक़े में उसके दोनो अंगो में होता है। पर वास्तव में उस सम्बन्ध और इस सम्बन्ध में अतर है, यद्यपि यह अंतर बाहरी रूप में इतना नहीं है जितना दोनों के दर्जे मे। बुनियादी शिक्षा में यह सम्बन्ध बहुत निकट और घनिष्ट होता है और अनिवार्य आवश्यकता की गाँठ से बँधा रहता है। अगर बच्चा एक गाय देखता है, तो यह ज़रूरी नहीं कि उसे गाय के बारे में कुछ बतलाया ही जाय। अनुबन्ध के पुराने तरीक़े मे शायद ऐसा अनुबन्ध ठीक समझा जाय, पर बुनियादी शिक्षा में नहीं। हाँ अगर बच्चा गाय को चरा रहा हो, या उसकी कुछ और सेवा कर रहा हो, या उसे मार ही रहा हो, तो यह ज़रूरी हो जाता है कि उसे गाय के बारे में कुछ बातें बतलायी जायँ, ताकि उसका ज्ञान बढे। जो शिक्षक यह समझते हैं कि दस्तकारी या बच्चे के प्राकृतिक चौगिर्द या सामाजिक चौगिर्द से सम्बन्ध रखने वाली हर चीज़ शिक्षा देने का स्वाभाविक अवसर बन जाती है, वे भूल करते हैं।

इतना ही नहीं, बल्कि वे अपनी नासमझी से अपने मार्ग में अनावश्यक और अकारण कठिनाइयाँ पैदा कर लेते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में अनियंत्रित अनुबन्ध न तो संभव है और न वांछित ही। अनुबन्ध अवसर की स्वाभाविकता पर निर्भर रहता है और इस स्वाभाविक अवसर का पता लगाने मे शिक्षक को उस निकट और घनिष्ट सम्बन्ध से सहायता मिलती है, जिसका जिक्र पहले किया जा चुका है। अवसर की स्वाभाविकता इस बात में नहीं है कि क्या दिखाई दे रहा है, या क्या हो रहा है, बल्कि दिखाई देनेवाली या होनेवाली बात के बच्चे के साथ मनोवैज्ञानिक सम्बन्ध मे है। जो अवसर बच्चे के विचार, मस्तिष्क और रस को जाग्रत करे, वही स्वाभाविक माना जा सकता है। स्वाभाविक अवसर मे यह गुण चाहिए कि उससे कुछ हलचल पैदा हो और बच्चे की मानसिक वृत्ति क्रियात्मक हो जाय।

बहुत लोग कहेंगे कि शिक्षा-मनोविज्ञान के लिये यह बात नयी नहीं है। ठीक है, यह नयी नहीं है। लेकिन फिर क्या कारण है कि नयी न होते हुए भी यह नयी मालूम पड़ती है? इसका कारण यह है कि अभी तक इसका रूप निरा सैद्धान्तिक था, पर अब जब शिक्षक को उसे व्यावहारिक रूप देना पडता है, तब यह उसे एक बिलकुल नयी चीज़ दिखाई देती है। तमाम शिक्षा-मनोविज्ञान और शिक्षा-पद्धतियो का उद्देश्य है 'सच्ची शिक्षा देना'। लेकिन व्यवहार में आज तक शिक्षा का अर्थ है—विषयों की ऊपरी और लादी हुई शिक्षा। अपनी जानकारी की बनिस्बत अपने काम का असर हमारे ऊपर ज्यादा पड़ता है, और इस अन्तर का कारण है सिद्धान्त और व्यवहार के बीच खाई। पर बुनियादी शिक्षा एक सच्ची शिक्षा है और सारे व्यक्तित्व की शिक्षा है, इसलिए इसके सिद्धान्तों में और व्यवहार में कोई अतर नहीं है।

शिक्षा के कुछ सिद्धान्त बालमनोविज्ञान की नींव पर बनाये गये हैं। शिक्षा की कुछ पद्धतिया आम हैं और कुछ खास। लेकिन सब युगो, सब घटनाओ, सब अवसरो और सब शिक्षकों के लिये उपयुक्त कोई एक पद्धति हो सकती है, इसमे सन्देह है। किसी विषय को किस तरह बच्चो के सामने पेश किया जाय, यही पद्धति है। हरएक शिक्षक का काम करने का अपना अलग तरीक़ा होता है। इस तरीके पर उसकी योग्यता का और उसके विचारों का व ज्ञान का असर पड़ता है,

और सबसे ज्यादा असर पड़ता है शिक्षा के उस उद्देश्य का, जिसे प्राप्त करने की वह कोशिश करता है।

बुनियादी शिक्षा का उद्देश्य है बच्चे पर एक निश्चित असर डालना। इस असर का अनुमान इस बात से इतना नहीं हो सकता है कि बच्चे ने बिना स्वय अनुभव किये और बिना जाने क्या पढा और क्या सीखा, बल्कि इन बातों से होता है कि बच्चा क्या काम करता है, उसका जीवन किस तरह का है, वैज्ञानिक ढंग से और सही तौर पर काम करनें के लिए और अच्छी तरह हंसी-खुशी के साथ रहने के लिए उसे किस पद्धति से और किस ढंग से सहायता दी जाती है और किस तरह उसे आगे बढाया जाता है। जो शिक्षक शिक्षा की इस भावना के रंग मे रग गया है और जो बच्चे पर अच्छा असर डालना चाहता है, वह दूसरी सब पद्धतियों को छोड़ कर निस्सदेह अनुबन्ध की पद्धति का ही सहारा लेगा। यह स्वाभाविक पद्धति उसमें से इस तरह वह निकलेगी जैसे झरने में से पानी बहता है।

साधारण अनुबन्ध और बुनियादी अनुबन्ध में दो स्पष्ट विभिन्नताएँ हैं। साधारण अनुबन्ध में शिक्षा के मुख्य विषय की किसी बात को समझाने के लिए कोई दूसरी बात पढ़ायी या समझायी जाती है। पर बुनियादी अनुबन्ध मे अगर किसी बात को समझाना इसलिए ज़रूरी हो जाता है कि उसे समझाये बिना किसी दूसरी बात को समझाना असंभव हो, तो दोनों बातें बराबर का महत्व प्राप्त कर लेती हैं। उदाहरणो से यह बात स्पष्ट हो जायगी। मान लीजिये कि शिक्षक ध्रुव प्रदेशो का भूगोल पढा रहा है और विद्यार्थियों को बतलाता है कि वहा समुद्र की सतह पर बर्फ की पपड़ी जम जाती है। और फिर यह समझाने के लिए कि बर्फ की पपड़ी के नीचे का पानी क्यों नहीं जमता, वह पानी के गुण और स्वभाव समझाता है। यहाँ शिक्षक के लिए सिर्फ़ भूगोल का प्रसंग ही महत्व की चीज़ है, क्योंकि वह भूगोल पढ़ा रहा है। विद्यार्थियो को पानी के और स्वभाव तो वह सिर्फ़ इसलिए बतलाता है कि उससे उन्हें ध्रुव प्रदेशों का भूगोल अच्छी तरह जानने मे सहायता मिले। यह तो हुआ साधारण अनुबन्ध लेकिन बुनियादी शिक्षक की दृष्टि में भूगोल का प्रसंग और पानी के गुण व स्वभाव ये दोनो बातें बराबर का महत्व प्राप्त कर लेगी। इसी तरह, मान लीजिए कि बच्चा तकली पर कात रहा है और उसका सूत गर्मी की वजह से बार-बार टूटता है। बुनियादी शिक्षक सिर्फ़ टूटने

की बात को ही महत्व नहीं देता, बल्कि मौसम की हालतों के ज्ञान को भी उतना ही महत्वपूर्ण समझता है और दोनों बातों को इस तरह पढ़ाता है जैसे उनमें बहुत निकट और घनिष्ट आपसी सम्बन्ध हो।

दूसरी विभिन्नता तो बहुत ही महत्वपूर्ण है और इसी मे बुनियादी अनुबन्ध का वास्तविक अर्थ निहित है। वह यह कि बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तो के अनुसार अनुबन्ध में और क्रिया में अधिक भिन्नती नहीं है। अगर हम इसे 'अनुबंध' के बजाय 'काम करके सीखना' कहे तो नया अर्थ ज्यादा अच्छी तरह स्पष्ट हो जाता है, क्योंकि अनुबध का व्याव अर्थ तो दुर्भाग्यवश अब तक कुछ दूसरा ही समझा जाता रहा है। लेकिन 'काम करके सीखना' भी शिक्षक के लिए एक खास अर्थ रखता है। और इससे भी बुनियादी अनुबंध का अर्थ पूरी तरह प्रगट नहीं होता। यह तो वास्तव मे 'काम करके सीखना और काम करके सीखने में ऐसा प्रयत्न करते रहना है' जिससे काम करने के अच्छे तरीके और मार्ग मालूम हो और फिर व्यवहारिक उपयोग के द्वारा उसमें कुशलता प्राप्त हो।

इस विचार को स्पष्ट करने के लिए मैं कुछ उदाहरण देता हूँ। सागभाजी लगाने के लिए ज़मीन की तैयारी कमरे में पाठ देकर नहीं सिखानी चाहिए, बल्कि सीखनेवाले से खुद ज़मीन तैयार करवानी चाहिए। इस तरह ज़मीन तैयार करने मे वह बहुत सी बाते सीखेगा। लेकिन साथ ही शिक्षक उसकी रहनुमाई इस तरह करता रहे कि सीखने वाले का ज्ञान बढे और उस ज्ञान के द्वारा वह और भी अच्छे परिणाम प्राप्त कर सके। अगर शिक्षक स्वयं ही ज़मीन तैयार करके बतला दे या सिर्फ एक ही बार ज़मीन तैयार की जाय, तो इस काम से जो शिक्षा मिल सकती है, वह पूरी तरह न मिलने पायेगी, क्योंकि यह काम जितने स्वाभाविक अवसर पेश कर सकता है, उतने उस हालत में पेश न कर पायेगा। इसलिए यह एक ही काम बार-बार गौरवपूर्ण, आत्म-सम्मानपूर्ण और सच्चे काम की तरह योग्यता, कुशलता और बचत के साथ किया जाना चाहिए। यह काम उसी भावना से किया जाना चाहिए, जिस भावना से एक निबंध लिखा जाता है, जिसे लिखने में लिखने वाला भरसक प्रयत्न करता है और शिक्षक बुद्धिमानों के साथ परामर्श देता है।

इसी तरह मान लीजिए कि बच्चा एक हफ्ते की लगातार कताई के बाद या बहुत समय तक हर हफ्ते में एक दिन कताई करके कताई के सामान-सरंजाम के नाम सीख जाता है। लेकिन इससे न तो उसको शिक्षा के लिए काफ़ी मौक़े मिलेंगे और न उसे सोचने, काम करने और सीखने के सारे विभिन्न अवसर प्राप्त हो सकेंगे। मतलब यह है कि इससे बच्चे को कुशलता और बचत के साथ कताई का काम करने में सहायता न मिलेगी। इसके सिवा कताई के काम से बच्चा सिर्फ यही नहीं सीखता कि सूत किस तरह निकाला जाता है। यह चीज तो उसकी शिक्षा का सिर्फ दिखायी देने वाला पहलू है और उस शिक्षा का एक बहुत ही नन्हा-सा हिस्सा है। कताई के काम के द्वारा बच्चा सावधानी सीखता है, हर काम को कायदे के साथ करना सीखता है, चीजों को व्यर्थ नष्ट नहीं करना सीखता है, अपने मस्तिष्क और शरीर को कुछ देर तक लगातार काम में लगाना सीखता है, हिसाब किताब रखना सीखता है और इन सब बातों के अलावा और भी बहुत-सी महत्व की बातें सीखता है। लेकिन ये तमाम गुण वह तभी सीखता है, जब वह बरसों तक, बुद्धिमानी के साथ विभिन्न परिस्थितियों में कुशल शिक्षक की देखरेख में कताई का काम करता रहे।

अनुबन्ध के तरीके से पूरा पूरा लाभ उठाने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक अपने कार्यक्रम का ढाचा दस्तकारी, कक्षा, स्कूल, समाज और प्रकृति से संबंध रखने वाली चीज़ों के आधार पर बनाने और फिर उसके अनुसार कायदे के साथ, पूरी तरह और खूब लग कर काम करें। अगर तकली सिखाते समय तकली पर पाठ दे दिया तो यह बुनियादी किस्म का अनुबन्ध नहीं हो सकता। तकली के बारे में अनुबन्धित रूप में बच्चा वही बातें सीखता है जो खुद तकली चलाते-चलाते उसे मालूम होती हैं। इसी तरह दस्तकारी का हिसाब लगाने और जरूरी हिसाब-किताब रखने में वह जिस गणित का उपयोग करता है, सिर्फ वही गणित वह अनुबन्धित रूप में सीखता है, अपने भावों को प्रकट करने के लिए वह जिस भाषा को बोलता है और प्रयोग करता है, सिर्फ उसी भाषा को वह अनुबन्धित रूप में सीखता है; दूसरे बच्चों के साथ वह समाज-सेवा के जो काम करता है, सिर्फ वही समाज-विज्ञान की बातें वह अनुबन्धित रूप में सीखता है।

देखने में तो ये सब बातें बहुत अच्छी मालूम होती हैं। लेकिन बहुत से

लोग शायद पूछ बैठें "क्या ये सब बातें व्यावहारिक हैं?" दूसरे लोग शायद यह पूछने लगें—"अगर यही बात है, तो बुनियादी पाठ्यक्रम की जरूरत ही क्या है? और अगर बुनियादी पाठ्यक्रम की जरूरत है, तो कक्षाओं की शिक्षा के पुराने ढंग से उसका मेल किस तरह मिलाया जाय?" इत्यादि।

बुनियादी शिक्षक के लिए ये सब समस्याएँ वास्तविक और व्यावहारिक हैं। पर क्या कोई शिक्षक पाठ्यक्रम के बिना काम चला सकता है? जब तक तमाम शिक्षक असाधारण योग्यता और प्रतिभावाले न हों, तब तक पाठ्यक्रम की जरूरत रहेगी ही। असाधारण योग्यता वाले शिक्षक को भी पाठ्यक्रम की जरूरत पड़ेगी। यह बात दूसरी है कि किसी तरह का पाठ्यक्रम वह अपने लिए खुद बना ले, या उसके लिए कोई दूसरा बना कर दे दे। इसी तरह शिक्षा में कक्षाओं का विधान भी सदा रहेगा, और अच्छी शिक्षा के हित में यह बहुत हद तक जरूरी भी है। कम से कम वर्णमाला, पढाई, लिखाई इत्यादि कुछ विषयों की नियमित शिक्षा से भी कभी छुटकारा नहीं मिल सकेगा।

ये तमाम बातें, जो समस्याएँ मालूम पडती हैं, वास्तव में तथ्य है, और जरूरी तथ्य हैं। ये बुनियादी शिक्षक के लिए कठिनाइयाँ अवश्य उपस्थित करते हैं, पर न तो बुनियादी शिक्षा-पद्धति इनके लिए ज़िम्मेदार है और न बुनियादी पाठ्यक्रम। कठिनाइयाँ तो खुद उस शिक्षक में हैं जो दुनिया भर की बातें अनुबन्धित रूप में सिखाना और पढाना चाहता है, जो अपनी कक्षा की पढ़ाई में हररोज और हरदम हर बात का अनुबन्ध तुरन्त मुख्य दस्तकारी के साथ खोजने का प्रयत्न करता है। व्यावहारिक पाठों तक में वह यही अनुबन्ध खोजता है। नतीजा यह होता है कि वह पहाड़े तभी सिखाता है, जब दो-दो तीन-तीन करके चीजों का बँटवारा किया जाता हो और इन पहाड़ों को दुहराने के लिए वह फिर ऐसे ही अवसर का इतज़ार करता है। तकली के सिलसिले में वह "त" अक्षर लिखता है और जब तक "त" अक्षर से शुरू होनेवाला कोई दूसरा शब्द न सिखाया जाय, तबतक फिर इंतज़ार करता है। बच्चे कपास साफ़ कर रहे हैं, इसलिए वह उन्हें बालों को साफ़-सुथरा रखने की शिक्षा देता है। ये सब बातें ज़ाहिर करती हैं कि न तो वह बुनियादी शिक्षा के रँग में ही रँगा है और न उसने इस नयी शिक्षा के महत्व को ही ठीक तरह समझा है। हर बात को अनुबन्धित रूप से पढाने में और

हर चीज़ के लिए तुरन्त अनुबन्ध खोजने के प्रयत्न में वह पढ़ाई के विषय और पढ़ाने के तरीके दोनो को बनावटी कर देता है।

ये दिक्कतें इसलिए पैदा होती हैं कि शिक्षक यह समझता है कि दूसरे पाठ्यक्रमों की तरह बुनियादी पाठ्यक्रम मे भी ऐसी बातें है, जिनको पढ़ाना, अवधि के भीतर पूरा करना और बच्चों को रटाना ज़रूरी है। जैसे, अगर पहली कक्षा के लिए तीस कहानियाँ रक्खी गयी हो, तो शिक्षक समझता है कि बच्चों को ये तीसों कहानियाँ पढ़ाना और याद कराना ज़रूरी है और इनके सिवा दूसरी कोई कहानियाँ उन्हें बतलाने की जरुरत नहीं है। बुनियादी पाठ्यक्रम को इस दृष्टि से देखने का अर्थ है बुनियादी शिक्षा के उद्देश्य को भूलकर पाठ्यक्रम को महत्व देना और बुनियादी शिक्षा को नीचे गिराकर उसे विषयों की रटाई की शिक्षा के दर्जे पर ले आना। जबतक शिक्षक का दृष्टिकोण ऐसा रहेगा, तबतक उसे बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तों के अनुसार अनुबन्ध के तरीके का उपयोग करने मे कठिनाई होगी।

शिक्षा मे सब से महत्वपूर्ण वस्तु उसका उद्देश्य है। पाठ्यक्रम और पद्धतियाँ तो शिक्षक के लिए दो औज़ार है, जिनका ठीक उपयोग करके वह इस उद्देश्य को प्राप्त कर सकता है। बुनियादी शिक्षा मे निरी ऊपरी जानकारी से ज़्यादा महत्वपूर्ण बात है बच्चे के समूचे व्यक्तित्व पर शिक्षा का परिणाम। इसलिए शिक्षक को सबसे पहले बुनियादी पाठ्यक्रम की हर बात के लक्ष्य और उद्देश्यों को समझना और फिर उसके अनुसार अपने काम का ढाँचा बनाना ज़रूरी हैं। अगर वह ऐसा करेगा, तो उसे मालूम होगा कि दस्तकारी के द्वारा शिक्षा बहुत ज़रूरी है और उसके साथ अनुबन्ध करना बिल्कुल कठिन नहीं है।

बुनियादी क़िस्म की शिक्षा के लिए यह लाज़िमी (अनिवार्य) नहीं है कि इसके सब कार्यों और कार्यक्रमों का ढाँचा बने-बनाये पाठ्यक्रम के ही अनुसार रचा जाय। पाठ्यक्रम तो सिर्फ एक अच्छे मार्ग-दर्शक का काम करता है। बच्चा, उसका चौगिर्द और उसकी परिस्थितियाँ ज़्यादा महत्व की चीज़े है। बच्चे की सामर्थ्य और उसके चौगिर्द से सामञ्जस्य रखनेवाली शिक्षा और काम की लगन, ये दो बुनियादी शिक्षा के तत्व हैं। वास्तव में बुनियादी शिक्षा केले के पेड़ की तरह है, जिसमे स्वाभाविक कार्यक्रमो के परत एक के ऊपर एक जमे हुए हैं।

ये कार्यक्रम घेरे में, गहराई मे और अवधि में एक दूसरे से विभिन्न होते हैं, और इनमें एक विभिन्नता यह भी है कि कोई कार्यक्रम कम बार व्यवहार में आता है और कोई ज़्यादा बार। उदाहरण के लिए, बुनियादी दस्तकारी बरसो सिखायी जायगी, मौसमी परिवर्तनों के निरीक्षण का काम पूरी एक ऋतु तक होता रहेगा, सूरज की किरणों का निरीक्षण एक साल में पूरा होगा, आलुओं की खेती का काम फसल ख़तम होने तक किया जायगा, इत्यादि। इसी तरह सामाजिक कामो का भी ढाँचा बनाया जायगा और हर शिक्षक को यह निश्चय करना पडेगा कि वह कितने समय में और किस तरह पूरा किया जाय। पाठ्यक्रम का उद्देश्य और उसकी भावना तो हर जगह वही रहेगी, पर उसका व्यावहारिक प्रयोग हर स्कूल मे अलग-अलग तरह से होगा, हालाँकि यह अन्तर बहुत ज़्यादा न होगा।

पढ़ाई, लिखाई, पहाडे, इत्यादि सब स्कूली बातों को सिखाने का सवाल भी शिक्षक को चक्कर में डालनेवाला है। लेकिन ये बाते जरूरी हैं और इन्हें सिखाना भी पडेगा। "ल" अक्षर चाहे तो "लड़का" शब्द के सिलसिले मे बतलाया जाय या "लपेटा" शब्द के सिलसिले में, पर उसे पहचानना और लिखना तो सिखाया ही जायगा और इसका अभ्यास भी कराया ही जायगा। दस्तकारी का सामान बाँटते समय पहाड़े सिखाये जा सकते हैं, पर इसका अर्थ यह नहीं है कि अभ्यास के लिए उन्हें दोहराया न जाय। बिना अनुबन्ध के कोई बात न रह जाय, इस डर से शिक्षक लोग पढाई, लिखाई जैसी चीज़ों का काफी अभ्यास नहीं कराते। वे भूल जाते हैं कि पढाई, लिखाई, वगैरा का भी शिक्षा में उतना ही महत्व है, जितना और किसी काम या क्रिया का। इसलिए पढ़ाई और लिखाई के काम का भी नियमित रूप से ढाँचा बनाना चाहिए। हाँ, वह ध्यान ज़रूर रहे कि बच्चों के व्यावहारिक अनुभव से बाहर की कोई बात उसमे न आने पाये। कुछ बातो की आवश्यकता के अनुसार विशेष तरीक़े से पढ़ाने के लिए बुनियादी पद्धति में कोई रुकावट नहीं है। वह तो सिर्फ इस बात पर जोर देती है कि पढ़ाई, लिखाई और भूगोल व इतिहास की बातें सिखाने के लिए अच्छे अवसर का उपयोग करना चाहिए और उन्हें प्रभावोत्पादक ढग से पेश करना चाहिए।

यह सवाल भी अक्सर पूँछा जाता है, "शिक्षा उस वक्त देनी चाहिए जब बच्चे दस्तकारी का काम कर रहे हों या बाद में?" ऊपर जो कुछ लिखा जा

चुका है, उसमें इस सवाल का जवाब मिल जाना चाहिए। लेकिन वह सवाल इतना आम हो गया है कि इसका अलग जवाब देना जरूरी मालूम होता है। जब बच्चे दस्तकारी का काम करते हैं, तब काम करते-करते खुद ही शिक्षा ग्रहण करते जाते हैं। काम के दौरान में हर बच्चे को जो दिक्कत पेश आये, उसे उसी समय हल करना चाहिए। काम शुरू करने से पहले ज़रूरत हो तो प्रदर्शन (demonstration) के द्वारा बच्चों को सब बातें समझानी चाहिए। काम ख़तम होने पर जो दिक्क़तें सब बच्चों को समष्टिरूप से पेश आयी हों, उन्हें समझाना और ज़रूरत हो तो लिखवाना भी चाहिये। बच्चों को अपने अनुभवों, भावों और विचारों को प्रकट करने का मौका भी देना चाहिए। बच्चों को अपने काम के दौरान में जो हिसाब लगाने की जरूरत पडती है, वही अनुबन्धित गणित है, लेकिन अगर यह काफ़ी न हो, तो गणित के और भी पाठ दिये जाने चाहिए। इस तरह काम और उससे सम्बन्ध रखनेवाले ज्ञान, हिसाब, ज़बानी अभ्यास, इत्यादि के बीच सच्चा अनुबन्ध होगा। यह अनुबन्धित शिक्षा बहुत हद तक हर बच्चे को अलग-अलग दी जायगी। सारी कक्षा के काम का अनुबन्ध उसी हद तक किया जायगा, जहाँ तक पढ़ाई की बातें सब बच्चों के समान अनुभव की हों। कक्षा का बाकी सब काम मामूली ढर्रे पर चलता रहेगा, लेकिन इसका आधार बच्चों के क्रियात्मक अनुभव पर होने के कारण यह ज़्यादा स्वाभाविक और दिलचस्प होगा।

दस्तकारी, प्रकृति, समाज, स्कूल, कक्षा और मामूली विषयों की पढ़ाई के सम्बन्ध में काम के संगठित कार्यक्रम का जो सिद्धान्त ऊपर बताया गया है, उससे शिक्षक को यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि हर रोज़ और हरदम विचार-सहचर्य (association) की तरह अनुबन्ध तलाश करना ग़लती की बात है। इससे यह शंका भी दूर हो जानी चाहिए कि बुनियादी शिक्षा में कोई नियम और प्रणाली (system) ही नहीं है। इसके विपरीत शिक्षक को अब यह विश्वास हो जाना चाहिए कि बुनियादी तालीम में ज़्यादा नियम और प्रणाली हैं और इसके लिये शिक्षक को ज़्यादा अच्छी तरह और पूरी तरह तैयारी की आवश्यकता है। उसे अपने काम का सालाना, तिमाही, मासिक, साप्ताहिक और दैनिक ढाँचा बनाना पड़ेगा और इस ढाँचे की हरएक बात एक बड़ी इकाई का आवश्यक और मनोवैज्ञानिक अंग होगी।

इन तमाम बातो से हम इस नतीजे पर पहुचते हैं कि बुनियादी शिक्षा मे अनुबन्ध से जिस गहरे सम्बन्ध का बोध होता है, उतना विचार-सहचर्य से प्रगट नहीं होता। यह वह सम्बन्ध है, जो काम और उस काम के करने से प्राप्त होने-वाली शिक्षा के बीच रहता है। इसमे विषयों को अलग-अलग डिब्बो में रखने की गुंजायश नहीं है। इसमे ज्ञान की सब बातें बराबर का महत्व रखती हैं और इसे सफल बनाने के लिए ऐसे सावधान, तत्काल-बुद्धि, निश्चित और अच्छी ट्रेनिंग पाये हुए शिक्षक की जरूरत है, जिसमें किसान का-सा उद्योग हो, वैज्ञानिक की-सी सूझ-बूझ हो, माता का-सा हृदय हो और कलाकार की-सी अनुभूति हो।

[अंग्रेज़ी से अनुवाद]

हमारा अनुबन्ध का कार्य

[गोपालराव कुलकर्णी]

अनुबन्ध के तरीके हर जगह भिन्न-भिन्न देखने में आते हैं। यह बात जितनी स्वाभाविक है उतनी ज़रूरी भी है। स्वाभाविक इसलिए कि अनुबन्ध के तरीके बहुत सी आन्तरिक (Subjective) और बाह्य (Objective) परिस्थितियो के साचो में ढल-ढल कर बनते हैं। और जरूरी इसलिए कि काफी समय तक हर किस्म के प्रयोगों को आज़मायश किये विना अनुबन्ध का कोई भी निश्चित तरीका बना डालना ठीक नहीं।

बुनियादी तालीम के स्कूल की नैसर्गिक और सामाजिक परिस्थिति, राज्य की नीति, लोगों की मनोवृत्ति, प्रयोग के क्षेत्र का विस्तार वगैरा बाह्य कारणो या परिस्थितियो का असर अनुबन्ध के तरीके पर पडता है। साथ ही स्कूल के बच्चों की संख्या और श्रेणियाँ, बुनियादी दस्तकारी का स्वरूप, स्कूल की आर्थिक स्थिति और शिक्षकों की कुशलता, ये सभी आन्तरिक परिस्थितियाँ हैं। पर इनमें बड़ा आन्तरिक कारण तो बुनियादी स्कूल चलाने वाले की मनोवृत्ति है।

अपने प्रयोग के पहले वर्ष मे हमे अनुबन्ध मे काफी दिक्कतें पेश आई क्योंकि हमारी धारणा थी कि पाठ्यक्रम के हरेक विषय का अनुबन्ध बुनियादी

दस्तकारी के साथ हो सकता है और होना जरूरी है। लेकिन समाज–परिचय और सामान्य विज्ञान के अभ्यास मे हमे कई बाते ऐसी दिखायी दीं जिनका अनुबन्ध दस्तकारी के साथ नहीं हो सका। इनका अनुबन्ध जबरदस्ती कताई के साथ करते हुए उसमे कृत्रिमता आने लगी और हमे यह प्रयत्न ही छोड़ देना पडा। लेकिन पूना की परिषद ने हमारा रास्ता साफ़ कर दिया। पूना कॉन्फ्रेंस के निर्णयो से अनुबन्ध का क्षेत्र विशाल हो गया क्योंकि यह बात मान ली गयी कि अनुबन्ध सिर्फ़ दस्तकारी के साथ ही नहीं बल्कि बच्चो की नैसर्गिक और सामाजिक परिस्थिति के साथ भी किया जाना चाहिए।

अपने अनुबन्ध के प्रयोग का वर्णन करने से पहिले मैं आपको यह बतला देना चाहता हूँ कि अनुबध के बारे मे हमारा क्या विचार है। एक विचार-प्रणाली अनेकातिक अनुबध (Multilateral Correlation) मे विश्वास करती है। अनेकान्तिक अनुबन्ध से मेरा मतलब यह है कि दस्तकारी या बच्चे की परिस्थिति में से किसी एक बात को चुन कर उसके साथ जितने बन सके उतने विषयो का अनुबंध कराना। एक मिसाल से यह मतलब ज्यादा स्पष्ट हो जायगा। मान लीजिये कि दूसरी कक्षा के बच्चे पूनियों के लिये रुई धुन रहे हैं। दिन मे काफ़ी बारिश हो रही है और धुनकी की तात बार-बार टूट जाती है। यहाँ दस्तकारी से हमे एक प्रसंग (Theme) मिल गया। होशियार शिक्षक इस प्रसंग को लेकर और बच्चो के मन मे तॉत टूटने की मुसीबत से छुटकारा पाने की इच्छा का लाभ उठा कर इस दिक्कत के बारे मे चर्चा चलाता है और इस चर्चा मे अनुबंध का जितना क्षेत्र वह ला सके उतना लाने की कोशिश करता है। वह हवा की नमी से बातचीत शुरू करेगा और इस सिलसिले मे बच्चो को साल की चारो ऋतुओं का ख़याल देगा। फिर वह तॉत के बारे में बात करेगा और उससे भेड-बकरियों की ऑतो का ख़याल देगा। ऑतो से वह अन्न प्रणाली (Alimentry System) की चर्चा पर आ जायगा और मनुष्य-शरीर की रचना समझायगा। भेड-बकरियों के ज़िकर से वह आदमिया के लिए उपकारक जानवरो का ख़याल देगा। फिर ताँत की लम्बाई, उसकी कीमत, उसकी काम देने की काल मर्यादा, धुनने की गति, वग़ैरा बातो को लेकर वह बच्चो से काफी हिसाबी काम करायेगा। इस सारी चर्चा के बाद वह दो या तीन भाषा पाठ भी बच्चो को देगा। समाज परिचय का अनु-

बंध करते हुए वह धुनियों और चरवाहों की जातियों का परिचय करायेगा। तात्पर्य यह कि इस तरह दस्तकारी के एक ही प्रसग को लेकर चारों विषयों का अनुबंध सिद्ध करने की कोशिश करेगा।

यह अनेकान्तिक पद्धति हमने दो-तीन महीने तक चलाई पर हमें अनुभव हुआ कि इससे अच्छा परिणाम नहीं प्राप्त होता। उसका कारण यह है कि इस सारे क्रम में एक तरह की कृत्रिमता आ जाती थी जो बच्चो और शिक्षक दोनों को महसूस होती थी।

इसलिए हमने अपना मार्ग बदल दिया और दूसरी पद्धति का सहारा लिया जिसे मैं एकान्तिक (Unilateral) पद्धति के नाम से पेश करना चाहता हूँ। इस पद्धति को सफल बनाने के लिए पाठ्यक्रम के गहरे अध्ययन और बच्चों की दस्तकारी के काम और उनकी सारी परिस्थिति को पूरी तरह निरीक्षण करने की शक्ति की आवश्यकता है। दस्तकारी में या बच्चे की परिस्थिति में से किसी एक बात या प्रसंग को चुनकर पाठ्यक्रम की किसी एक चीज़ का उसके साथ अनुबन्ध करना इसी को मैं एकान्तिक पद्धति कहता हूँ। ऊपर दी हुई मिसाल यानी ताँत टूटने की ही घटना को अगर हम लें, तो एकान्तिक पद्धति में इस प्रसंग का एक ही बात के साथ अनुबन्ध किया जायगा। अगर साधारण विज्ञान से अनुबन्ध करना हो तो यह बात होगी वर्षा ऋतु में हवा की नमी और उसका असर।

यह एकान्तिक पद्धति अनेकान्तिक पद्धति से इसलिए अच्छी है कि यह ज़्यादा स्वाभाविक और बच्चों पर कम बोझ डालने वाली है।

इस पद्धति में हम चालू पाठ की अलग-अलग सीढियाँ बना लेते हैं। पहले कोई प्रसंग लिया जाता है और उसपर अनुबन्ध की भूमिका खडी की जाती है। फिर बात-चीत या क्रियाओं के द्वारा विषय का विस्तार किया जाता है। विस्तार के बाद हम सारी चर्चा या क्रियाओं के सार रूप में एक लिखित पाठ बच्चों के सामने रखते हैं। उस पाठ को बच्चे पढते हैं और लिखते भी हैं। इसके बाद श्रुत-लेखन और पुनरावृत्ति से बच्चों के मन में विषय का ज्ञान पक्का कर दिया जाता है।

अनुबन्ध का एक तीसरा तरीक़ा भी है। उसे हम समन्वित अनुबन्ध (Collateral Correlation) के नाम से पुकारेंगे। जब क्रिया और ज्ञान दोनों

एक ही साथ चलते हैं तब समन्वित अनुबध हो जाता है। जैसे, बच्चे सूत के तार अटेरन पर लपेटते जाते हैं और साथ-साथ उनको गिनते भी जाते हैं। इसमें लपेटने की क्रिया और गिनती का ज्ञान दोनों एक साथ चलते हैं। बस यही समन्वित अनुबध है। यह अनुबध बच्चे अपने आप ही सिद्ध करते हैं। इसमे शिक्षक की मदद की जरूरत नहीं रहती। शिक्षक का काम बस इतना ही रहता है कि ऐसे अनुबंध के लिए अनुकूल वातावरण और परिस्थिति पैदा कर दे। बाकी की सारी क्रियायें बालक खुद कर लेता है।

यद्यपि एकान्तिक अनुबध की पद्धति को हमने सबसे अच्छा पाया है, पर इसका यह मतलब नहीं कि दूसरे दो तरीकों से काम ही न लिया जाय। शिक्षा को परिस्थिति के अनुसार अनुबन्ध के तीनों तरीकों का उपयोग करना पड़ता है। जिस समय जो तरीका फलदायी हो उस समय उसी को उपयोग में लेना आवश्यक होता है और कौन-सा तरीका किस वक्त काम में लाना चाहिए इसका निश्चय शिक्षक को ही करना पड़ता है।

लेकिन सफलता के साथ अनुबंध करना आसान काम नहीं है। अनुबंध एक कला है जिसमे कुशलता प्राप्त करने के लिए शिक्षक को बाल-मनोविज्ञान का परिचय होना जरूरी है और साथ ही उसमें तीव्र निरीक्षण शक्ति भी होनी चाहिए। जब दस्तकारी का काम चल रहा हो तब शिक्षक को खूब बुद्धिमानी और बारीकी से निरीक्षण करना चाहिए। जब बच्चे सृष्टि निरीक्षण के लिये बाहर जायँ या गाँव निरीक्षण के लिए जायँ या किसी भौगोलिक सैर के लिए जायँ तब शिक्षक को बड़ी सावधानी के साथ हरेक छोटी-मोटी घटना और छोटे-मोटे अनुभव को नोट कर लेना चाहिए क्योंकि इन्हीं नोटों और पर्य्यवेक्षणों की सहायता से शिक्षक को अपनी अनुबंध की योजना तैयार करनी है। कभी-कभी तो मामूली घटनाओं ही से बहुत से कीमती अनुबंध पाठ बनाने की चाभी मिल जाती है। मान लीजिए कि शिक्षक किसी बच्चे के हाथ पर खुजली के फोड़े देखता है। अगर उसमें योग्यता और सूझ हो तो वह इस प्रसंग के आधार पर ही स्वास्थ्य-रक्षा का अनुबध पाठ बना लेगा। गाव की सीमा पर घूमते-फिरते बजारों का दल आ पड़ा हो, तो शिक्षक इसको लेकर समाज परिचय के अच्छे अनुबध पेश करेगा। कताई व धुनाई के दैनिक काम को लेकर शिक्षक, हिसाबो के अनुबध बना लेगा। खेल का मैदान

नापने और तैयार करने की क्रिया मे से वह भूमिति के अनुबंध पाठो की रचना करेगा। प्रकृति निरीक्षण के प्रवासों मे से सामान्य विज्ञान के अनुबध निकलेगे, इत्यादि–इत्यादि। अब मै अपने अनुभवो से ऐसे अनुबंधों की मिसाले आपके सामने रक्खूँगा।

इन मिसालो से आप लोगों को शायद ऐसा लगे कि अनुबंध कुछ बनावटी हुआ है। पर समय की कमी के कारण मै यहा उन सब बातों और सवालो–जवाबो का पूरा वर्णन नहीं कर सकता हूँ जिनके आधार पर ये अनुबध के पाठ दिये गये।

एक बार बच्चे एक छोटी-सी यात्रा पर गये थे। उन्होने पहाड़ी मे एक गुफा देखी और उनके मन में कौतूहल हुआ। इस प्रसंग को लेकर हमने उनको प्राचीन गुफा–निवासियों का हाल बतलाया। खजूर से भरी एक बैलगाडी गाव में आई। खजूर की बात को लेकर हमने अरब देश और वहा के बद्दुओं का अनुबध कर दिया। एक दिन सुबह ठड के कारण बहुत से लड़के स्कूल मे नही आये। इस बात पर हमने दूसरे दिन बर्फ के प्रदेशों के लोगो के बारे मे अनुबध का पाठ दिया। एक लड़का ऊनकी नयी बडी पहनकर स्कूल में आया। उसकी बडी के बारे मे पूछताछ करके हमने ऊन के बारे मे अनुबध का पाठ दिया। स्कूल मे बढ़ई के काम के लिए बच्चो से एक झोपडी बनवायी गयी और उस पर हमने भिन्न–भिन्न प्रकार के मकानो का खयाल दिया।

ऊपर की सब मिसालो मे अपने-आप पैदा होनेवाले प्रसंग आते है। लेकिन कभी–कभी ऐसा होता है कि पाठ्यक्रम की कई बाते स्वाभाविक प्रसंगों के साथ अनुबंध मे नहीं लायी जा सकती है। ऐसे अवसर पर शिक्षको को चाहिए कि वे अपनी सूझ मे कुछ नये प्रसग स्वय ही पैदा करे जो अनुबंध को स्वाभाविक बनाने मे सहायक हों। अंग्रेजी मे इसे (Setting the stage) कहते हैं। हम इसे पूर्व तैयारी कह सकते हैं। इस पूर्व तैयारी का अनुबंध मे बड़ा भारी महत्व है। जलाशयो के बारे मे पाठ देते हुए बच्चो को नजदीक के किसी तालाब पर ले जाना पक्षियो के पाठ के लिए बच्चो को जगलों मे ले जाना, एक-दल व द्विदल बीजो का परिचय कराने के लिए उनसे अलग-अलग तरह के बीज बुवाना, गाव की सफ़ाई के बारे मे अनुबध शिक्षा देने के लिए उनसे गाव की प्रत्यक्ष सफाई करना,

गाव और राज्य-पद्धति की कल्पना देने के लिये कक्षा मे ही चुनाव पद्धति से बच्चो की पञ्चायत बनाना ये सब बातें अनुबध की पूर्व-तैयारी मे आ जाती हैं। शिक्षक को समय समय पर इस पूर्व तैयारी की रीति का उपयोग करना अनिवार्य हो जाता है। इसकी एक मिसाल मैं देता हूँ। तीसरी कक्षा में हमे ओलिम्पिक खेलो की बात बतलानी थी। इसकी पूर्व तैयारी के लिए हमने एक खेल-कूद की प्रतियोगिता का आयोजन किया। प्रतियोगिता मे जो बच्चा सबसे आगे रहा उसे हमने बड़ा सन्मान दिया और दूसरे दिन अनुबध के द्वारा हमने ओलिम्पिक खेलो की बात बतायी।

यह तो हुआ अनुबध के तरीको का वर्णन। पर अब यह सवाल पैदा होता है कि अनुबध पाठों के लिये यह सारा मसाला हम कहा से लाये? हमारे पास पाठ्य—पुस्तकें नहीं हैं, और हमे एक नये रास्ते पर चलना है। इसलिये अनुबंध पाठ पढाने के लिये हमें विभिन्न विषयो की बहुत-सी पुस्तकों (Reference Books) की ज़रूरत पड़ेगी।

पर विभिन्न विषयो का परिचय देने वाली ये पुस्तकें बहुत कीमती होती हैं और हरेक मदरसे मे नहीं रक्खी जा सकतीं। इसलिए मेरी राय मे बुनियादी तालीम के हरेक सघन हलके के लिए एक—एक गश्ती पुस्तकालय का प्रबध होना ज़रूरी है। यह पुस्तकालय ट्रेनिंग सेन्टर में रहे जिससे उसके आस-पास के तमाम बुनियादी स्कूल उससे लाभ उठा सकें। ऐसे पुस्तकालयों की अभी इसलिए भी जरूरत है कि हमारे पास आज पाठ्य-पुस्तके नहीं हैं, और हो भी नहीं सकती हैं क्योंकि पाठ्य-पुस्तकें तो तालीम का काफ़ी समय तक प्रयोग होने के बाद ही तैयार हो सकती हैं। अभी अगर जल्दबाजी से काम करके पाठ्य-पुस्तकें बनायी जायेंगी तो हर साल उनमें परिवर्तन करने पड़ेंगे। इसलिए जब तक कोई आदर्श और निश्चित परिणाम न प्राप्त हों तब तक हमे किताबों की मदद से पाठ खुद बनाने चाहिए और हम ऐसा कर भी रहे हैं।

लेकिन मेरा ख्याल है कि बच्चो को पढने के लिए कुछ पुस्तकें तो देनी ही पड़ेंगी क्योंकि इनके बिना उनका अभ्यास पक्का नहीं होगा। बच्चे घर पर जो कुछ पढ़ते-लिखते हैं उसमें हम अनुबन्ध का कोई आग्रह नहीं रखते। पुस्तकालय की कोई भी रसीली किताब वे घर पर ले जाकर पढ़ सकते हैं। हमने अपनी मातृभाषा गुजराती की एक प्रचलित पाठ्य-पुस्तक ले ली है और उसमें जितने पाठ

हैं उन सभी को हमने पाठ्यक्रम की किसी न किसी बात के साथ अनुबन्धित कर दिया है। इसी तरह हमने गणित की भी एक प्रचलित पुस्तक को लेकर यही क्रम रक्खा है। मतलब यह है कि हमने निश्चय कर लिया है कि बिना अनुबन्ध के कोई चीज़ बच्चों के सामने न रखना। इसी वजह से पाठ्यक्रम की जिन बातों का अनुबन्ध हम नहीं कर सके उन्हें हमने छोड़ दिया है।

अभी तक मैंने संगीत, चित्रकला, या शारीरिक शिक्षा के बारे में कुछ नहीं कहा है। यद्यपि बच्चों को इन तीनों विषयों की शिक्षा देने की हमने पूरी कोशिश की है, पर बुनियादी तालीम के तरीके के अनुसार इन विषयों को हम ठीक तरह अनुबन्ध में नहीं ला सके हैं। कारण यह है कि हमारे जो शिक्षक इन विषयों को जानते हैं वे अनुबन्ध करना नहीं जानते और हम लोग जो अनुबन्ध को जानते हैं उन्हें इन विषयों की पूरी जानकारी नहीं है। तो भी संगीत के बारे में हम थोड़ा बहुत ज्ञान अनुबन्ध के रूप में दे सके हैं। हम अपनी दैनिक प्रार्थना के साथ कुछ भजन रखते हैं। इसी तरह उत्सवों के साथ भी संगीत का अनुबन्ध करते हैं। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी और चर्खा-द्वादशी (गाधी जयती) के उत्सव हमने बड़ी धूमधाम से मनाये और इनमें हमने संगीत, नृत्य, रास, गरबा, नाटक, इत्यादि का कार्यक्रम रक्खा। स्कूल के वार्षिकोत्सव के अवसर पर भी हमने संगीत का बड़ा जलसा मनाया था।

शिक्षक अगर चतुरस्त्र यानी सूझ-बूझ वाला हो, तो उसके लिए अनुबंध एक आसान चीज़ है। हरेक शिक्षक अनुबन्ध की कला में कुशल हो सकता है बशर्ते कि उसमें अच्छी निरीक्षण शक्ति हो और नये नये प्रसंग पैदा करने की तुरंत बुद्धि हो। इसके अलावा उसे पाठ्य-विषयों का गहरा और सर्वतोमुखी ज्ञान भी होना ज़रूरी है।

बच्चों के दैनिक जीवन की घटनाओं में से भी कितने ही अच्छे अनुबधित पाठ तैयार हो सकते हैं। दस्तकारी के काम में या सैरों के समय, या कोई सामाजिक कार्य करते हुए या हर रोज के व्यवहार में ऐसे प्रसंग आते हैं कि बच्चों के दिल में "क्यों" और "कैसे" के प्रश्न उठते हैं। जो शिक्षक इन "क्यों" और "कैसे" का ठीक उपयोग करना जानता है वही सफल अनुबन्ध कर सकता है। लेकिन जहाँ इस शक्ति का अभाव हो वहाँ अनुबन्ध या तो निष्फल होता है या निष्प्राण रहता है।

अनुबन्ध की पद्धति पर कुछ विचार

[जविनलाल पंडित]

पिलानी के बिड़ला बेसिक स्कूल में बुनियादी शिक्षा के दो साल के प्रयोग में अनुबन्ध शिक्षा पद्धति पर मुझे जो अनुभव हुए हैं, उन्हें मैं आपके सामने रखता हूँ।

मुझे ऐसा लगता है कि अनुबन्ध का सिद्धान्त एक अन्ध श्रद्धा की चीज़ बना दिया गया है। कुछ लोग अपने उतावलेपन के कारण इसी को अन्तिम लक्ष्य समझ बैठे हैं और यह भूल गये है कि अनुबन्ध तो बच्चे को सच्ची शिक्षा देने का सिर्फ एक साधन है। कुछ लोग इससे दहल गये हैं। कुछ लोग इसे शका-दृष्टि से देखते हैं और कुछ लोग इससे निराश-से हो गये हैं। ट्रेनिंग पाये हुए शिक्षको मे बहुत कम ऐसे हैं जिन्होंने बुनियादी अनुबन्ध के सच्चे तात्पर्य को वास्तव में समझ लिया हो। मैंने कुछ शिक्षक ऐसे देखे हैं जो एक बात का मेल दूसरी बात मे मिलाकर इन दोनों के आधार पर तीसरी बात निकालते हैं और उसे अनुबन्ध का नाम दे देते हैं। कुछ शिक्षक ऐसे हैं जो बुनियादी शिक्षा के प्रयोग मे हर्बर्ट स्पैन्सर के सिद्धान्त 'परिचित से अपरिचित का ज्ञान' का उपयोग करते है और अक्सर इसी को अनुबन्ध कहते हैं। ज्यादातर शिक्षक दस्तकारी सिखाने के बाद दूसरे विषयों की शिक्षा दस्तकारी की प्रक्रियाओं के साथ जोड देते हैं। मैं पूछना चाहता हूँ कि क्या ये सब अनुबन्ध के तरीके हैं?

मेरे विचार से तो एक प्रसंग का दूसरे प्रसंग से मेल मिला देना या किसी प्रसंग का दस्तकारी क्रिया से मेल मिला देना अनुबन्ध नहीं है। मैं तो सच्चा अनुबध उसे समझता हूँ कि बच्चे अपने सामाजिक और भौतिक वातावरण मे जिस दस्तकारी का काम करे उसी की प्रक्रियाओ मे से अपने-आप शिक्षा के अवसर उपजें और उसके फलस्वरूप बच्चों का ज्ञान बढ़ाया जा सके और ज्ञान की एक शाखा का दूसरी शाखा से सहमेल (Co-ordination) किया जा सके। अगर हमारा इस कथन में विश्वास है कि बच्चा पहले और शिक्षा बाद में', तो फिर हम सारे ज्ञान का बुनियादी दस्तकारी से सहमेल करने की व्यर्थ कोशिश क्यों करते हैं? बच्चे पर बाहर से भी

तो कुछ सस्कार पडते हैं। पढ़ाई के तरीको मे बुनियादी दस्तकारी के साथ इन संस्कारो को भी उचित स्थान मिलना चाहिए।

मानव सभ्यता के इतिहास मे 'अनुबन्ध' कोई नयी चीज नहीं है। जिस दिन मनुष्य कमर सीधी करके और कंधो को सिर पर साध कर खडा हुआ उसी दिन मानव सभ्यता शुरू हुई। यह था शरीर के विभिन्न अंगों का सहमेल। और जब मनुष्य अपने हाथो से औज़ार बनाने और लकडी काटने लगा तब इसी दिशा मे यह कदम था। मतलब यह है कि दिमाग़, दिल और हाथो का क्रियात्मक सहयोग ही अनुबन्ध है। अनुबन्ध ऐसी चीज़ है जो दस्तकारी की विभिन्न प्रक्रियाओ के परिणाम मे ही निहित है।

अगर अनुबन्ध का यह सैद्धान्तिक रूप ठीक है तो बुनियादी दस्तकारी के सम्बन्ध मे इसे हम किस तरह अमल मे ला सकते हैं? मैं यह मानने को तैयार नहीं हूँ कि पाठ्यक्रम का दस्तकारी के साथ अनुबन्ध किया जाय, बल्कि मैं तो यह मानता हूँ कि दस्तकारी मे से ही पाठ्यक्रम निकलना या बनना चाहिए। अनुबन्ध का मूल ही स्वतःप्रवृत्ति (Spontaneity) है, यानी दस्तकारी मे से शिक्षा के अवसर स्वत (अपने आप) ही निकलते चले जाने चाहिए। यह तभी सम्भव है जब शिक्षा का काम योग्य शिक्षक के हाथ मे दिया जाय।

अब मैं अनुबन्ध शिक्षा–पद्धति के बारे में अपने दो साल के अनुभवो के कुछ नतीजे आपके सामने पेश करता हूँ।

(१) अनुबन्ध की शिक्षा दस्तकारी करते समय भी और उसके बाद भी दी जा सकती है। मसलन ठीक ढंग से बैठने और काम करने की शिक्षा दस्तकारी के समय दी जाती है और सफाई और चीजो को तरतीबवार जमाने की शिक्षा बाद मे। लेकिन अगर दस्तकारी के काम मे बीच-बीच मे दखल दिया जायगा तो बच्चे की दिलचस्पी कम होने का डर है। दूसरे, बीच-बीच में काम रोकने से उपज भी कम होगी और बुनियादी शिक्षा के कमाई के पहलू पर बुरा असर पडेगा। हाँ, अगर बच्चे की दिलचस्पी में बाधा न पड़े और शिक्षा की सम्भावना हो तो दस्तकारी के बीच मे ही अनुबन्ध किया जा सकता है।

(२) शिक्षक का काम केवल यह है कि वह बच्चे को समझने में मदद दो

और सवालों के ज़रिये उसे अपने काम का वास्तविक अर्थ बतलाये। यह पहले दर्जे के लिए है। आगे के दर्जों में तो बच्चे खुद ही शिक्षक से प्रश्न करने लगेंगे।

(३) अनुबन्ध करने में समय विभाग की घंटियों के अनुसार चलने की ज़रूरत नहीं है। ज़रूरत और अवसर के मुताबिक मातृभाषा की घंटी में विज्ञान की बातें बतलायी जा सकती हैं और विज्ञान की घंटी में मातृभाषा की या किसी दूसरे विषय की।

(४) अनुबन्ध और दस्तकारी में कुशलता साथ-साथ चलती हैं। जितनी बातें दस्तकारी की क्रिया में से अपने-आप उपज सकें उनके अलावा दूसरी बातों का अनुबन्ध करने की कोशिश न की जाय।

(५) मातृभाषा में भी उन्हीं चीज़ों तक सीमित रहना चाहिए जिन्हें बच्चे दस्तकारी में उपयोग करें या अपने दैनिक जीवन में देखें।

ज्ञान की विभिन्न शाखाओं के सहमेल के बिना अनुबन्ध अधूरा रहता है। ऊँचे दर्जों में इसकी आवश्यकता होगी।

पांचवां भाग

शिक्षकों की ट्रेनिंग

बिहार में बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग

[रायसाहब रामशरण उपाध्याय]

यह एक मानी हुई बात है कि किसी भी शिक्षा-पद्धति की सफलता उसके शिक्षको की योग्यता और लगन पर निर्भर है। बुनियादी शिक्षा जैसी एक बिलकुल नये दृष्टिकोण की शिक्षा-पद्धति के लिए तो यह बात और भी ज्यादा लागू है। भारत सरकार के एज्युकेशन कमिश्नर मि० जॉन सारजेन्ट ने पहली बुनियादी शिक्षा परिषद् के अवसर पर इस सम्बन्ध मे जो शब्द कहे थे वे ध्यान देने लायक हैं। उन्होने कहा था, "उत्साह, चतुराई और सूझ के बल पर आगे बढने की योग्यता की जितनी मॉग बुनियादी शिक्षा-पद्धति अपने शिक्षकों से करने जा रही है उतनी हद तक इन गुणों की मॉग किसी भी देश की शिक्षा-पद्धति ने आज तक अपने शिक्षकों से नहीं की।"हम अपने नये शिक्षको से आशा रखते हैं कि वे हमारे बच्चे के व्यक्तित्व का चौमुख विकास करके उन्हें इस योग्य बना दे कि वे अपनी सामाजिक और भौतिक परिस्थितियो के अनुकूल रहकर भी उनके गुलाम न बने।

लेकिन सवाल यह है कि हम इस तरह के योग्य शिक्षक किस तरह तैयार करे। इस सवाल के भीतर ये तमाम बाते आ जाती है कि इन शिक्षको की ट्रेनिग देनेवाले अध्यापक कहॉ से लाये जायॅ, उनकी ट्रेनिग के लिए क्या-क्या साधन और उपकरण कहॉ-कहॉ से इकट्ठे किये जायॅ, ट्रेनिग स्कूलो और कालिजों का सगठन कैसा हो और उनकी व्यवस्था किस तरह की हो; ट्रेनिंग का पाठ्यक्रम क्या हो; ट्रेनिग स्कूलों का समय-विभाग (time-table) कैसा रक्खा जाय, ट्रेनिंग स्कूल या कालिजो मे भर्ती किये जानेवालो का चुनाव किस सिद्धान्त पर हो, कच्चे-शिक्षको (Pupil-teachers) के लिए अभ्यास पाठों (Practice teaching) का क्या इन्तजाम किया जाय उनके लिए पढ़ाई की किताबें कैसी हों और उन्हे कौन तैयार करें; ट्रेनिग खतम हो जाने पर इन शिक्षको की योग्यता नापने का आधार क्या हो इत्यादि।

अब मैं इन तमाम बातों के सम्बन्ध में अपने ये अनुभव आपके सामने रक्खूगा जो हमे पटना के बेसिक ट्रेनिंग स्कूल में बुनियादी शिक्षकों की तीन टोलियॉ तैयार करने मे पिछले दो वर्षों मे प्राप्त हुए है।

उम्मीदवारों का चुनाव

शिक्षकों की तैयारी के सम्बन्ध में उम्मीदवारो के चुनाव का प्रश्न सबसे पहले आता है। हमारे पुराने शिक्षक पुराने ढर्रे की शिक्षा और ट्रेनिग पाये हुए हैं। लेकिन इनमें कुछ ऐसे भी है जिनमे नये मार्ग पर चलने का उत्साह और उमंग है। हमारा अनुभव तो यह रहा है कि नये उम्मीदवारो की बनिस्बत ये पुराने उत्साही शिक्षक बुनियादी शिक्षा के काम के काम के लिए ज्यादा सफल शिक्षक बनकर निकले हैं। कमी सिर्फ यह है कि ये शिक्षक सिर्फ मिडिल तक शिक्षा पाये हुए हैं। पुराने शिक्षको को लेते वक्त हमे यह बात भी जाचनी चाहिए कि उनमें अपने आपको नयी परिस्थिति के अनुकूल बना लेने की योग्यता है या नहीं। मामूली तौर पर मैट्रिक तक शिक्षा पाय हुए उत्साही नवयुवक, जा अपने स्कूल के जीवन मे समाज-सेवा के सगठित कामों मे दिलचस्पी लेते रहे हैं, अच्छे शिक्षक बन कर निकलते हैं।

ट्रेनिंग स्कूल में भर्ती होने के लिए सभी तरह के उम्मीदवार आते हैं। कुछ तो नये या पुराने शिक्षक होते हैं, कुछ स्कूलो या कालिजो से निकल हुए जीविका की तलाश में फिरनेवाले नवयुवक होते हैं, कुछ नवयुवक ऐसे भी आते हैं जिनमें सेवा की लगन है लेकिन जिन्हे दुनिया का कुछ अनुभव नहीं होता और कुछ नवयुवक सब तरफ से हताश होकर और अपना उत्साह खोकर इधर आते हैं। इन उम्मीदवारों मे से ऐसे आदमियो को छाट लेना, जो बुनियादी शिक्षा का काम कर सकें, कुछ आसान बात नहीं है।

चुनाव करते वक्त हम यह देखते हैं कि उम्मीदवार वास्तव मे शिक्षा के काम से दिलचस्पी रखता है या सिर्फ रोजगार की तलाश मे है और इस काम को सिर्फ अपनी उन्नति का साधन बनाना चाहता है। हम उसके दूसरे गुणों की भी जाच करते हैं और यह जानने की कोशिश करते हैं कि उसमें बच्चों के लिए सहानुभूति और प्रेम, मिलनसारी, उदारता, दूसरे मज़हबो के लिए आदर-भाव, देहात से प्रेम, इत्यादि गुण हैं या नहीं।

ऊपर लिखे गुणों की जाच और परीक्षा करना बड़ा कठिन है। अगर स्कूल और कॉलिजो में हरेक विद्यार्थी के काम, उसके आचरण, उसकी दिलचास्पियो, इत्यादि की नियमित लिखतें रखने का इन्तजाम हो तो इनसे बड़ी मदद मिल

सकती है । पर अभी तो यह हालत है ही नहीं । हाँ, हम यह आशा ज़रूर करते हैं कि हमारी नयी शिक्षा में इस कमी को दूर किया जायगा और स्कूलो में रक्खे गये हर विद्यार्थी के रेकार्ड देखकर यह पता लगाया जा सकेगा कि उसका रुझान किधर है । लेकिन जबतक ऐसा न हो तब तक इन गुणो की पहचान करने का एक साधन बातचीत (Interview) है । नये शिक्षको के चुनाव के लिए भेंट और बातचीत की यह विधि अनुभवों के आधार पर बनेगी ।

पटना के बेसिक ट्रनिग-स्कूल मे उम्मीदवारों के चुनाव के लिए हमने एक प्रतियोगिता का इम्तहान रक्खा है । इसके विषय ये रक्खे गये हैं कताई, हिंदी जानने वालो के लिए उर्दू का और उर्दू जानने वालों के लिए हिन्दी का ज्ञान, और बुनियादी शिक्षा के मूल सिद्धातो और पाठ्यक्रम की जानकारी । कताई की योग्यता का नाप यह रक्खा गया है कि उम्मीदवार तकली पर दो घन्टे में ६० फी सदी कस और ८० फीसदी समानता और कम से कम १० नम्बर के सूत के ३८० तार कात सके ।

ट्रेनिग स्कूल का स्थान

गाधी जी के शब्दों में हमारी नयी शिक्षा "देहाती उद्योगों के द्वारा देहाती राष्ट्रीय शिक्षा" है । इसलिए इसके शिक्षको का ट्रेनिंग स्कूल भी देहात में ही रहना चाहिए । अगर किसी वजह से यह सम्भव न हो, तो कम से कम ऐसे ट्रेनिग स्कूल का वातावरण तो जरूर दहाती होना चाहिए । ऐसा न हुआ तो शिक्षको को न तो देहाती समस्याओं का प्रत्यक्ष अनुभव होगा और न उनमे देहात के लिए सहानुभुति और प्रेम ही उदय होगा । शहरी वातावरण में पले हुए शिक्षक को यकायक देहात मे भेज दिया जाय तो उसकी हालत पानी के बाहर मछली जैसी हो जाती है और उसे अपने आपको देहाती परिस्थिति के अनुकूल बनाने मे काफी समय लग जाता है ।

ट्रेनिग की अवधि

जकिर हुसेन कमेटी की रिपोर्ट मे बुनियादी शिक्षको की पूरी ट्रेनिग के लिए तीन वर्ष की अवधि रक्खी गयी है । हमारा तीन वर्ष का अनुभव भी यही हुआ है कि तीन वर्ष से कम मे बुनियादी शिक्षा के लिए उपयोगी शिक्षक तैयार नहीं किये जा सकते । इसलिए पूना कॉन्फ्रेंस के निर्णय के अनुसार अब पहला कोर्स

एक वर्ष का कर दिया गया है और उसके बाद यह व्यवस्था की गई है कि ट्रेनिंग पाया हुआ शिक्षक कम से कम एक वर्ष किसी बुनियादी स्कूल में काम करके और व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करके फिर ट्रेनिंग स्कूल मे आकर ट्रेनिंग को पूरा करे। मेरी राय में तीन वर्ष की लगातार ट्रेनिंग की अवधि को इस तरह तीन हिस्सों में बाट देना ज्यादा उपयोगी है।

ट्रेनिंग का पाठ्यक्रम

जाकिर हुसैन कमटी की रिपोर्ट और अपने अनुभवों के आधार पर हमने पटना के बेसिक ट्रेनिंग स्कूल मे ट्रेनिंग शुरू की और आखिरी एक-एक वर्ष की अवधि के पाठ्यक्रम नीचे लिखे अनुसार रक्खे हैं —

एक वर्ष का प्रारम्भिक कोर्स—

क. बुनियादी दस्तकारी—

(१) बुनाई और तकली व चर्खे पर कताई।

(२) खेती और बागवानी—मिट्टी की बनावट और पौधों की वृद्धि के सरल सिध्दान्त (पहले तीन ग्रेडों को पढाने की योग्यता के लायक)।

ख. विशेष बातें—

(१) कच्चे शिक्षकों को बुनियादी दस्तकारी के लिए रोज कम से कम चार घटे देने होंगे।

(२) कताई और खेती की बुनियादी दस्तकारियो से अनुबन्धित पहले, दूसरे और तीसरे ग्रेडों के पाठ्यक्रम का अध्ययन।

(३) साधारण विज्ञान और समाज विज्ञान के पाठ्यक्रमों की तमाम बातों का अध्ययन।

(४) बुनियादी शिक्षा के मूल सिध्दान्त।

(५) बाल-मनोविज्ञान (Child Psychology) की सरल रूपरेखा के साथ शिक्षा के साधारण सिध्दान्त।

(६) स्कूल का संगठन और प्रबंध।

(७) चित्रकारी और गत्ते का काम।

(८) शारीरिक शिक्षा—[अ] सैद्धान्तिक और [आ] व्यावहारिक। इसमें खेल-कूद का संगठन, जूनियर रेडक्रास और शेर बच्चों (Cubbing) का संगठन भी शामिल है।

(९) मातृभाषा—हिंदी या उर्दू की इंटरमीडियेट दर्जे की एक पुस्तक के अध्ययन के साथ हिंदी पढ़ने वालों के लिए उर्दू में और उर्दू पढ़ने वालों के लिए हिंदी में प्राइमरी क्लास की दो पुस्तकों की पढ़ाई।

(१०) सयानों की पढ़ाई।

(११) संगीत—खास-खास–हिन्दुस्तानी रागों और सरल तालों का परिचय, साथ मिलकर एक स्वर से या अकेले गाना।

(१२) ट्रेनिंग स्कूल से लगे हुए प्रैक्टिसिंग स्कूल में निगरानी के साथ अभ्यास–पाठ।

(१३) पाठ्यक्रम के अलावा इन विषयों पर करीब २० व्याख्यान, (अ) भारतीय राष्ट्रीय जाग्रति का इतिहास, (आ) आजकल के भारतीय जीवन की सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और भाषा सम्बन्धी समस्यायें, (इ) आजकल की दुनिया की सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक समस्याएँ, (ई) संसार के धर्मों का श्रद्धा के साथ अध्ययन, और सब धर्मों की मौलिक एकता का दर्शन।

एक वर्ष का अन्तिम कोर्स—

जब प्रारम्भिक कोर्स पूरा करके शिक्षक लोग एक साल बुनियादी स्कूलों में व्यावहारिक अनुभव प्राप्त कर चुकेंगे तो उन्हें एक साल फिर नीचे लिखी बातों की ट्रेनिंग दी जायगी –

क. बुनियादी दस्तकारी—

पांच बुनियादी ग्रेडों को पढ़ाने की योग्यता प्राप्त करने के लिए नीचे लिखी बुनियादी दस्तकारियों में से किसी एक का पूरा अभ्यासः–

(१) कताई और बुनाई।

(२) खेती—इसमें साग–भाजी और फलों की बागवानी और मुर्गियों, जानवरों व मधु–मक्खियों का पालन भी शामिल है।

(३) गत्ते, लकडी व धातु का काम ।

ख. शिक्षा के सिद्धांत—

इसमें नीचे लिखे विषय रहेंगे—

(१) उत्पादक क्रिया के द्वारा शिक्षा ।

(२) स्कूल का स्थानीय जनता से सम्बन्ध ।

(३) बाल मनोविज्ञान ।

(४) अनुबध की शिक्षा प्रणाली ।

(५) बुनियादी शिक्षा के उद्देश्यों का देश के जीवन की वास्तविक अवस्था की दृष्टि से अध्ययन ।

(६) साधारण विज्ञान और समान विज्ञान के पूरे पाठ्यक्रम का गहरा अध्ययन।

ग. मातृभाषा—

भारतीय कला और साहित्य से शिक्षक को परिचय कराने के लिए एक छोटा-सा पाठ्यक्रम और मातृभाषा का गहरा अध्ययन । हिन्दी या उर्दू की बी. ए. के दर्जे की कम से कम दो पुस्तकों का पाठ और हिन्दी वालो को उर्दू की तथा उर्दू वालो को हिन्दी की मिडिल की दो किताबों की पढाई ।

घ. शारीरिक शिक्षा—

आरम्भिक कोर्स की बातो को दोहराना, घायलों का प्राथमिक चिकित्सा सम्बन्धी अभ्यास और क़वायद, सैरें, रोवलिंग व स्काउटिंग ।

च. संगीत ।

छ. कला, चित्रकारी, खाके बनाना, रग का काम, बुनियादी दस्तकारी से सम्बन्ध रखने वाले चित्र और डिज़ाइन ।

ज. ट्रेनिंग स्कूल से लगे प्रैक्टिसिंग स्कूल में अभ्यास-पाठ ।

झ. पाठ्यक्रम के अलावा दूसरे विषयों पर व्याख्यान ।

ञ. विशेष बातें—

ट्रेनिंग स्कूल के प्रारम्भिक कोर्स में पहले तीन बुनियादी ग्रेडों को पढाने की ट्रेनिंग दी जायगी और इस अन्तिम कोर्स में पाच ग्रेडो को पढ़ाने की ।

इसके लिए कम से कम मैट्रिक तक की योग्यता रखने वाले शिक्षकों की जरूरत होगी। ऐसा खयाल किया जाता है कि छठे और सातवें दर्जों के पढाने क लिए कम से कम बी. ए. तक की योग्यता वाले शिक्षकों को ट्रेनिग देनी होगी। लेकिन यह आशा की जाती है कि मैट्रिक तक की योग्यता रखने वाले कुछ मौजूदा शिक्षक व्यावहारिक अभ्यास और अनुभव प्राप्त करके छठे और सातवें ग्रेडों को पढाने लायक बन सकेंगे। ऐसे शिक्षकों के लिए शायद तीन से छ महीने तक की ट्रेनिंग का एक तीसरा पाठ्यक्रम काफी होगा।

ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापक

शिक्षकों को ट्रेनिग देने और उन्हे कुशल कलाकार व दस्तकार बनाने का काम वे ही लोग कर सकते हैं जो खुद भी शिक्षित हों, जिन्हें उद्योग और कला का सैद्धान्तिक और व्यावहारिक ज्ञान हो और जो उद्योग की शिक्षा सम्बन्धी मभावनाओं का दूसरे विषयों के साथ अनुबंध करने मे विशेष योग्यता रखते हों। अभी तो ऐसे विशेषज्ञो का मिलना मुश्किल है। इसलिए ट्रेनिग स्कूलो में बुनियादी दस्तकारियों के लिए और साधारण विषयो के लिए अलग–अलग अध्यापक मुकर्रर करने पड़ेंगे। लेकिन बुनियादी शिक्षा की सफलता के लिए बहुत ही जरूरी है कि अलग–अलग अध्यापक रखने की यह दिक्कत जल्दी-से-जल्दी दूर हो। हमारे बेसिक ट्रेनिंग स्कूल मे यह कोशिश की जा रही है कि हरेक दस्तकार अध्यापक कुछ दिनो में किसी एक विषय का विशेषज्ञ बन जाय और दूसरे विषयो का हरेक विशेषज्ञ किसी-न-किसी उद्योग मे होशियार हो जाय। इस इरादे से हरेक शिक्षक को किसी-न-किसी उद्योग मे लगा दिया गया है ताकि उसे उस उद्योग का अभ्यास हो जाय और वह उसकी प्रतिक्रियाओं का निरीक्षण करके और उसकी शिक्षा सम्बन्धी संभावनाओ को खोज करके शिक्षकों के लिए कुछ साहित्य तैयार कर सके।

उद्योग और दूसरे विषयों के विशेषज्ञों के अलावा हर ट्रेनिग स्कूल में एक–एक हिन्दी और उर्दू का विशेषज्ञ भी रखना ज़रूरी है। इनका काम यह होगा कि दोनों भाषाओं का समन्वय करके मामूली व्यवहार की एक भाषा का विकास करें, एक लिपि जानने वालो को दूसरी लिपि सिखाने का अच्छा उपाय निकालें और ऐसी तरकीब ईजाद करे जिससे एक ही शिक्षक एक ही समय में एक कक्षा को

दोनों लिपियाँ साथ-साथ सिखा सके। इस तरह हर ट्रेनिंग स्कूल ने एक समाज विज्ञान का विशेषज्ञ, एक विज्ञान का विशेषज्ञ, एक साहित्य का विशेषज्ञ और एक कला का विशेषज्ञ रखना जरूरी है। बिहार सरकार ने हमारे ट्रेनिंग स्कूल को पूर्ण बनाने के लिए इन सब बातों को ध्यान में रक्खा है और इन विशेषज्ञों की सहायता से हम अपने प्रयोग की बहुत-सी समस्याओं को सुलझाने में लगे हुए हैं।

ट्रेनिंग स्कूल का समय-विभाग (Time-Table)

ट्रेनिंग स्कूलों के समय-विभाग का सवाल भी एक जटिल सवाल है। जहां दूसरे स्कूलों या कालिजों का रोज़ाना कार्यक्रम ज्यादा-से-ज्यादा छ: घंटे का होता है, वहा हमें अपने काम और उससे अनुबन्धित पाठ्यक्रम को पूरा करने के लिए कम-से-कम आठ घंटे देने पड़ते हैं। इस तरह हमें सप्ताह में ४८ घंटे मिलते हैं। इन्हीं ४८ घंटों में हमें बुनियादी दस्तकारी की सैद्धान्तिक और व्यावहारिक शिक्षा के अलावा ट्रेनिंग के पाठ्यक्रम के दूसरे विषय भी पढाने पड़ते हैं। बुनियादी दस्तकारी सिखाने के लिए रोज ४ घंटे से कम में काम नहीं चल सकता, यानी हफ्ते में २४ घंटे तो इसी एक चीज़ में लग जाते हैं। बाकी घंटों में से २ घंटे रोज़ के हिसाब से १२ घंटे साधारण विषयों की पढाई में और १२ घंटे स्वास्थ्य, समाज इत्यादि से सम्बन्ध रखनेवाले कामों में बट जाते हैं। इस तरह किसी विषय को तो सप्ताह में सिर्फ एक घंटा मिलता है और किसी को ज्यादा-से-ज्यादा दो घंटे। सप्ताह में एक घंटे का अर्थ होता है साल-भर के पूरे कोर्स में कुल २७ या २८ घंटे। सवाल यह है कि साल भर में २७-२८ घंटे की पढ़ाई से किसी विषय की योग्यता कहां तक बढायी जा सकती है? यह प्रश्न तभी हल हो सकता है जब कच्चे-शिक्षक ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापकों की देख-रेख में इन विषयों का स्वावलम्बी ढंग से ट्रेनिंग स्कूल के पुस्तकालय में अध्ययन करें। इस पर आगे चलकर प्रकाश डाला जायगा।

अब हमें यह देखना है कि रोज़ाना काम के आठ घंटे कौन-से रक्खे जायँ। आजकल के रिवाज के अनुसार स्कूलों का काम साढे दस या ग्यारह बजे से शुरू होकर चार या साढे-चार बजे खतम हो जाता है। लेकिन यह समय हमारे देश की जल-वायु और परिस्थिति के अनुकूल नहीं है। एक बात और भी है। दस या साढे दस बजे काम शुरू करके भी हमें दिन में ५ घंटे से ज्यादा नहीं मिल

को इसी तरह के स्वाध्याय का अभ्यास कराया जाना चाहिए। इससे दो लाभ होंगे। एक तो दैनिक समय-विभाग मे जिन विषयो को ज्यादा समय नहीं दिया जा सकता उनका अध्ययन हो जायगा, और दूसरे यह कि शिक्षक लोग आगे चलकर अपने विद्यार्थियों को भी इसी तरह का अभ्यास करा सकेंगे। लेकिन जैसा कि मैं कह चुका हूँ यह स्वाध्याय ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापकों की देख-रेख मे होना चाहिए। इसके लिए ज़रूरी है कि इन अध्यापकों के अध्ययन का दायरा बहुत बडा हो और वे अपने अध्ययन के नोट रखकर उनके आधार पर कच्चे-शिक्षकों को बतलावे कि पाठ्यक्रम के कौन-से विषय की कौन-सी बात किस पुस्तक में किस रूप मे मिलेगी। ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापकों को यह भी जाँचते रहना चाहिए कि कच्चे-शिक्षको का स्वाध्याय सफल हो रहा है या नहीं और अगर न हो रहा हो तो उन्हें ठीक रास्ता बतलाना चाहिए। यह तरीका सप्ताह मे २५-३० लेक्चर देने के बजाय ज्यादा उपयोगी साबित होगा। हमने अपने ट्रेनिंग स्कूल मे इस तरीके को प्रारम्भ कर दिया है और उसके फल बहुत उत्साह बढ़ानेवाले मालूम हुए हैं।

अभ्यास-पाठ (Practice teaching)

पढाने के व्यावहारिक अभ्यास के बिना शिक्षकों की कोई भी ट्रेनिंग पूरी नहीं समझी जा सकती। बुनियादी शिक्षा मे तो इसका और भी ज्यादा महत्व है।

अभ्यास-पाठों का आरम्भ ट्रेनिंग के तीसरे या चौथे महीने मे आसानी से किया जा सकता है। इन तीन या चार महीनों में कच्चे-शिक्षक बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तों से साधारण जानकारी प्राप्त कर लेंगे और उन्हे अनुबंध शिक्षा प्रणाली का भी कुछ परिचय हो जायगा। साथ ही उन्हे ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापकों और प्रैक्टिसिंग स्कूल के स्थायी शिक्षकों द्वारा दिये गये पाठों के देखने का भी अवसर मिल जायगा।

बुनियादी शिक्षा-पद्धति के शिक्षक के अभ्यास के लिए पुराने ढर्रे की ट्रेनिंग की तरह आधे या एक घटे के २५-३० पाठ काफी नहीं हो सकते। बुनियादी शिक्षा की पहली कॉन्फ्रेंस मे यह निर्णय हो चुका है कि अभ्यास पाठ की इकाई ४२-५० मिनट की घटी नहीं बल्कि सारे दिन का काम ही हो सकती है। दिन भर के सारे काम के साथ अभ्यास करते हुए प्रारम्भिक कोर्स मे सिर्फ एक प्रैक्टि-

सिंग स्कूल में १५ दिन के अभ्यास काफ़ी तो नहीं हैं, लेकिन इससे ज्यादा दिन तभी मिल सकते हैं जब हरेक ट्रेनिंग स्कूल के साथ कई प्रैक्टिसिंग स्कूल लगे हुए हों।

बिहार के बेसिक ट्रेनिंग स्कूल में ऐसी व्यवस्था की गयी है कि हर कच्चा शिक्षक १५ दिन तक लगातार अभ्यास-पाठ दे सके। पुराने तरीके में तो अभ्यास पाठ दो दो चार-चार दिन छोड कर भी दिये जा सकते हैं, पर इस नयी शिक्षा में लगातार अभ्यास पाठों की व्यवस्था हो जाने से शिक्षक को काम और उससे अनुबन्धित शिक्षा की योजना बनाने का अच्छा अवसर मिल जाता है। यह योजना हर कच्चा-शिक्षक प्रैक्टिसिंग स्कूल के स्थायी शिक्षक और ट्रेनिंग स्कूल के विशेषज्ञ और उद्योग-शिक्षक की मदद से हर हफ्ते बनाता है। हमारे ट्रेनिंग स्कूल मे दो-दो कच्चे-शिक्षक एक ही दर्जे मे एक साथ पाठ देने का अभ्यास करते हैं। ये दोनों इस तरह मिल कर काम करते हैं कि जब एक पाठ देता है तो दूसरा क्लास मे किये गये सब कामों और सवाल-जवाबों को अपनी नोट बुक मे लिखता रहता है। काम खतम होने पर रोज यह लिख लिया जाता है कि दिन भर मे कितना काम हुआ, बनी हुई योजना के अलावा और कौनसे काम नयी हालतों के पैदा होने से किस तरह किये गये, क्लास के काम के आधार पर क्या-क्या लिखने पढने की सामग्री बच्चो को प्राप्त हुई, इत्यादि। १५ दिन के अभ्यास के बाद इन शिक्षकों से आशा की जाती है कि वे बच्चो के जीवन और उनकी दिलचस्पियों से सम्बन्ध रखने वाली पढ़ाई की सामग्री तैयार करें। इस सामग्री के आधार पर हमें बच्चों के लिए बुनियादी शिक्षा का साहित्य निर्माण करने में बहुत सहायता मिलेगी।

निरीक्षण

बुनियादी शिक्षा में अभ्यास-पाठो का निरीक्षण पुराने ढग से नहीं हो सकता। पुराने तरीके मे ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापक अभ्यास-पाठ के समय क्लास जाते हैं और कुछ मिनट वहा बैठ कर पाठ-टीका की कापी मे अपनी आलोचना और सम्मति लिख कर चल देते हैं। पर नयी शिक्षा में तो निरीक्षक को पाठ को काफ़ी देर तक देखना और अध्ययन करना पड़ता है। उसे यह देखना पड़ता है कि उद्योग की क्रिया ठीक ढंग से कराई जा रही है या नहीं, अनुबंध स्वाभाविक हो रहा है या बनावटी, पाठ के द्वारा बच्चों की होशियारी किस हद तक बढ़ी, उनका मानसिक विकास कितना हुआ और उन्होने कितनी उन्नति की। इसलिए

अभ्यास पाठों का सच्चा निरीक्षण तो प्रैक्टिसिंग स्कूल के प्रधान शिक्षक और क्लास-शिक्षक ही कर सकते हैं। लेकिन जब तक ये शिक्षक बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तों और उसके व्यावहारिक रूप से अच्छी तरह परिचित न हो जाय तब तक की ट्रेनिंग में यह व्यवस्था रक्खी है कि एक साल का प्रारम्भिक कोर्स पूरा करने के बाद शिक्षक लोग ट्रेनिंग स्कूल से लगे हुए सघन हलके के बुनियादी स्कूलों मे एक साल पढाते हैं और फिर एक साल का अंतिम कोर्स पूरा करने के लिए ट्रेनिंग स्कूल में आते हैं। इस तरह उन्हें स्कूलों के अनुभवी प्रधान शिक्षकों और ट्रेनिंग स्कूल के निरीक्षकों के सम्मिलित निरीक्षण का लाभ मिल जाता है और ट्रेनिंग स्कूल होने के कारण अभ्यास पाठो की जो कमी रहती है वह पूरी हो जाती है।

लिखतें (Records)

बुनियादी शिक्षा में वैज्ञानिक लिखतों का बहुत बडा महत्व है। इसके दो कारण हैं। एक तो यह शिक्षा अभी प्रयोग की हालत में है, इसलिए इसके प्रयोगों की लिखतें रखना लाजिमी है जिससे यह जाना जा सके कि प्रयोग सफल हो रहे है या नहीं। दूसरे, इसका आधार कोई-न-कोई बुनियादी दस्तकारी होता है, इसलिए उस दस्तकारी के काम की प्रगति के बारे में जानकारी प्राप्त करने का लिखतों से अच्छा कोई साधन नही हो सकता। संक्षेप में हम यूँ कह सकते हैं कि क्लास मे सिखायी जानेवाली दस्तकारी का कार्यक्रम या ढॉचा, उसे सिखाने का ढंग, उसकी क्रिया और उपक्रियाओ का बयान और अंत मे उससे प्राप्त होनेवाले फल, इन सब बातों की लिखतें उसी तरह रक्खी जानी जरूरी है जिस तरह वैज्ञानिक प्रयोग की रक्खी जाती हैं।

इस तरह की लिखतों से सबसे पहले तो यह पता लगता है कि कौन कच्चा शिक्षक किस हद तक किस योग्यता के साथ अपने काम में प्रगति करता है। अगर वह किसी काम मे प्रगति नहीं दिखलाता हैं तो उसे खुद को या उसके अध्यापक को उसका कारण जानने की कोशिश करनी पड़ती है। इन सब बातों के अलावा लिखतों से यह भी जाना जा सकता है कि कच्चा-शिक्षक कितना कच्चा माल लेता है, कितना पक्का माल तैयार करता है, कितनी छीजन करता है, इत्यादि।

लिखतों के और भी कई महत्वपूर्ण पहलू हैं। पिछली लिखतों के अध्ययन से यह मालूम हो जाता है कि किसी कार्य-योजना को पूरा करने मे सफलता किन

कारणों से हुई। इससे अध्यापक और कच्चा-शिक्षक दोनों को आगे के काम मे सहायता मिलती है और एक तरह से कच्चे-शिक्षक की परीक्षा भी होती जाती है।

हमारे ट्रेनिंग स्कूल में नीचे बयान की हुई लिखते रखवाने का प्रयोग हो रहा है:-

उद्योग सम्बन्धी लिखते

क. कताई—(१) दैनिक बही, (२) आलेख (Graph) बही, (३) सैद्धान्तिक बही, (४) स्कूल की सामूहिक बहियाँ (अ) कताई की प्रगति बही, (आ) खाता बही, (इ) मासिक चिट्ठा बही, (ई) भंडार बही, (उ) धुनाई बही।

ख. बुनाई—बुनाई का काम अभी शुरू ही हुआ है। इसकी लिखतो के लिए भी एक बही है जिसमे बुनाई के तरीके, समय और तैयार माल का ब्यौरा लिखा जाता है।

ग. गत्ते का काम—(१) दैनिक बही, (२) आलेख बही, (३) सैद्धान्तिक बही।

घ. खेती और बागवानी—(१) फील्ड डायरी, (२) दैनिक बही, (३) सैद्धान्तिक बही।

स्वाध्याय सम्बन्धी लिखते

निरीक्षण स्वाध्याय का ज़िक्र पहले किया जा चुका है। कच्चे-शिक्षक ट्रेनिंग स्कूल के पुस्तकालय में स्वाध्याय करते हैं और नीचे लिखे विषयों की लिखतें रखते हैं.-

(१) समाज-विज्ञान, (२) सामान्य-विज्ञान, (३) बाल-मनो-विज्ञान, (४) बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्त, (५) मातृभाषा, (६) हिन्दुस्तानी, अर्थात् हिंदी वालो के लिए उर्दू और उर्दू वालों के लिए हिंदी, (७) शरीर-विज्ञान, (८) चित्र-कला, (९) संगीत, (१०) देशी खेल-कूद।

दस्तकारी सिखाने की विधि

सैद्धान्तिक विषय पढ़ाने और उद्योग सिखाने की शिक्षा-विधियों मे बहुत अंतर है। इसी तरह बच्चों की पढ़ाई और नवयुवकों की पढ़ाई की पद्धतिया भी मनोविज्ञान के सिद्धान्तो के अनुसार अलग-अलग होती है।

हमारे यहा अभी तीन उद्योग सिखाये जाते हैं . [१] कताई और बुनाई, [२] खेती और बागवानी और [३] गत्ते का काम । हर उद्योग के सालाना कार्य-क्रम की रूपरेखा कच्चे–शिक्षकों को शुरू में ही दे दी जाती है । इसके आधार पर फिर वे अपने अध्यापकों की सलाह से छमाही, मासिक, पाक्षिक, साप्ताहिक और दैनिक कार्य–योजनाएं तैयार करते हैं। इन कार्य–योजनाओं के बन जाने पर कच्चे–शिक्षकों को वह पूरी जानकारी रहती है कि कौन से दिन क्या काम करना है और उसके लिए क्या–क्या साधन और सामान की ज़रूरत है ।

सामान बाटने और इकट्ठा करने के लिए कच्चे–शिक्षकों ने अपना एक मन्त्रि–मंडल बना लिया है जिस पर सामान को ठीक–ठीक रखने की पूरी ज़िम्मेदारी रहती है । लेकिन हमारे सामने एक अड़चन यह आ रही है कि जगह और सामान की कमी से हम सब कच्चे–शिक्षकों को एक साथ कोई काम नहीं सिखा सकते । इसलिए हमने यह इन्तज़ाम किया है कि धुनाई की क्लास में दस–दस कच्चे–शिक्षक बारी–बारी से धुनाई करते हैं । जब कि एक टोली बुनाई करती है तो दूसरी टोली कताई का काम करती है । गत्ते की क्लास मे एक बार में पन्द्रह कच्चे–शिक्षक काम करते हैं, यानी दो–दो कच्चे–शिक्षकों के पीछे एक–एक औजार दिया जाता है । यही बात खेती की क्लास मे भी होती है ।

इस अवस्था में कुछ दिक़्क़त जरूर रहती है, पर इसके कई लाभ भी हमे नजर आते हैं । बुनियादी स्कूलों में अभी जगह और सामान की कमी है । इसलिए अगर कच्चे–शिक्षकों को कम से कम जगह मे कम सामान और औज़ारो की मदद से उद्योग सिखाने की ट्रेनिंग मिल जाय, तो उन्हें बुनियादी स्कूलो मे काम करने में कठिनाई नहीं मालूम पडेगी । दूसरे, इससे ख़र्च की भी बचत होगी, क्योंकि बुनियादी योजना से आर्थिक पहलू को भी हमे ध्यान मे रखना है ।

उद्योग की शिक्षा–विधि में लिखतो को बहुत बड़ा स्थान दिया जाता है । सब कच्चे–शिक्षक महीने के अन्त मे उद्योग के कामो का हिसाब करते हैं । यह मासिक हिसाब दैनिक, साप्ताहिक और पाक्षिक ऑकड़ो पर निर्भर है । इस मासिक हिसाब के आधार पर वे तिमाही और सालाना लिखतें तैयार करते हैं । ये तमाम ऑकड़े, लिखतें, हिसाब इत्यादि उनके समवायी विषयों के पठन–पाठन की सामग्री बन जाते हैं और इन्हीं के आधार पर वे अपने परिश्रम और अपनी लगन का मूल्य आकते हैं ।

शिक्षकों के लिये कताई का पाठ्यक्रम

हिन्दुस्तानी तालीमी संघ ने शिक्षकों के लिए कताई का एक विस्तृत पाठ्य-क्रम तैयार किया है। इसके सम्बन्ध में अनुभव के आधार पर मैं दो-एक बाते कहना चाहता हूं। हमारे ट्रेनिंग के प्रारम्भिक कोर्स में कच्चे-शिक्षकों को पहले तीन ग्रेडों को पढ़ाने की योग्यता प्राप्त करनी होती है। तीन ग्रेडों की पढ़ाई के लिए कताई का जो पाठ्यक्रम है वह तो उन्हें पूरा करना ही पड़ता है, लेकिन व्यवहार में इतना ज्ञान उनके लिए काफ़ी नहीं सिद्ध होता। शिक्षकों की दस्तकारी की योग्यता बच्चों की योग्यता से ऊंची होनी चाहिये, इसलिए प्रारम्भिक कोर्स में शिक्षकों को पाच ग्रेड तक की कताई की योग्यता प्राप्त करनी होती है। जब ये शिक्षक एक साल बुनियादी स्कूलों मे पढ़ाई का काम करके अन्तिम कोर्स पूरा करने के लिए ट्रेनिंग स्कूल में आयेंगे तो इन्हें पाचवें ग्रेड को पढ़ाने की योग्यता प्राप्त करनी होगी। लेकिन पाचवे ग्रेड तक की कताई की योग्यता ये लोग पहले कोर्स मे ही प्राप्त कर चुके हैं, इसलिए दूसरे कोर्स मे इन्हे कताई और धुनाई की क्रियाओं का पूरा अभ्यास कराया जायगा और साथ ही बुनाई की आरम्भिक क्रियाओं का ज्ञान देना ज़रूरी होगा। इसका कारण यह है कि जब तक शिक्षक खुद यह अनुभव न करे कि बुनाई के लिए किस तरह का सूत चाहिए और कमज़ोर व असमान सूत से बुनकरों को कितनी दिक्कत होती है, तब तक वह बच्चों को मज़बूत और समान सूत का महत्व नहीं बतला सकेगा। इसलिए शिक्षको को बुनाई का थोड़ा बहुत ज्ञान बहुत आवश्यक है।

काश्मीर में बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग

(जी. ए मुख्तार)

१—ट्रेनिंग का कार्यक्रम

श्रीनगर के ट्रेनिग स्कूल का डेढ साल का पहला सत्र (Session) अप्रैल १९४० मे पूरा हो गया और एक साल का दूसरा सत्र अप्रैल १९४१ में पूरा होगा।

पहले सत्र मे समय और काम का बटवारा नीचे लिखे मुताबिक रहा —

			हफ्ते के छै दिन में कुल कितना समय दिया गया।	
१ दस्तकारियाँ				
(अ) खेती–बाडी			७	घंटे
(आ) लकडी और गत्ते का काम			७	,,
(इ) कताई और बुनाई			७	,,
२ बाल–मनोविज्ञान और शिक्षा के सिद्धान्त			२	,,
३ शिक्षा की पद्धतियाँ और स्कूल व्यवस्था			४	,,
४ साधारण विज्ञान और उसे पढाने के तरीके			५ १/४	,,
५ समाज विज्ञान	,,	,,	३ १/२	,,
६ कला	,,	,,	३ १/२	,,
७ भाषा	,,	,,	३ १/२	,,
८ पढ़ाई, लिखाई, हिसाब	,,	,,	१ १/४	,,
९ शारीरिक शिक्षा			१५	,,

दूसरे सत्र मे छै महीने की मियाद कम हो जाने से समय और काम के बटवारे में नीचे लिखे मुताबिक सशोधन करने पडे:–

१ दस्तकारियाँ			
(अ) खेती–बाडी		९	घंटे
(आ) लकडी और गत्ते का काम		९	,,
(इ) कताई और बुनाई		९	,,
२ बाल मनोविज्ञान	..	२	,,
३ शिक्षा की पद्धतियाँ	...	५ १/४	,,
४ साधारण विज्ञान	...	६	,,

५	समाज विज्ञान	...	$३\frac{३}{४}$,,
६	कला	...	३ ,,
७	भाषा	...	$३\frac{३}{४}$,,
८	पढाई, लिखाई, हिसाब	...	$५\frac{३}{४}$,,
९	शारीरिक शिक्षा		१५ ,,

(सुबह और शाम)

नोट —हफ्ते मे जो $३\frac{३}{४}$ घंटे बढे उनको स्कूल का रोजाना समय $\frac{१}{२}$ घंटा बढा कर और बीच की छुट्टी को कुछ मिनट घटा कर पूरा किया गया।

अभी तक के अनुभवो से यह नतीजा निकलता है कि दस्तकारी के लिए जितना समय ऊपर के समय-विभाग में दिया गया है उससे भी ज्यादा देने की ज़रूरत है। हर कच्चे-शिक्षक को अपनी पसंद की हुई दस्तकारी मे इच्छित कुशलता हासिल करने के लिए रोज़ ढाई-तीन घंटे देना चाहिए। हमारे ट्रेनिंग स्कूल ने यह व्यवस्था कर दी है कि दस्तकारी में कुशलता प्राप्त कराने के लिए कच्चे-शिक्षकों को रोज़ सुबह और शाम एक घंटा विशेषज्ञों की निगरानी मे अलग शिक्षा दी जाती है।

ऊपर जिन विषयो का ज़िक्र किया गया है उनके अलावा हर कच्चे शिक्षक को एक शौकिया मशग़ला (Hobby) पसन्द करना पड़ता है और उसे पूरा करने के बारे में उसे हर तरह की सहूलियत और मदद दी जाती है।

अभी जो १०२ कच्चे-शिक्षक ट्रेनिंग पा रहे हैं उनके शौकिया मशग़लो में कुछ ख़ास मशगले ये हैं·—साबुन बनाना, स्याही बनाना, तेल और इत्र बनाना, फ़ुलवे बनाना, काँच पर क़लई चढाना, कपडे पर छपाई, क़सीदे का काम, मोजे-बनियान बुनना, अबरी बनाना, शहद की मक्खियाँ पालना, बाग़वानी, फ्रेट का (Fretwork), आचार-मुरब्बे बनाना, काग़ज बनाना, मिट्टी के बरतन बनाना।

शारीरिक शिक्षा के लिए हर कच्चे-शिक्षक को सुबह एक घंटे सामूहिक व्यायाम मे शामिल होना लाज़िमी है और शाम को डेढ घंटे कोई-न-कोई खेल भी खेलना पड़ता है।

चूंकि तमाम कच्चे-शिक्षकों को क़ायदे के मुताबिक़ ट्रेनिंग स्कूल की होस्टल में रहना पड़ता है। इसलिए लोकतंत्री और सांस्कृतिक समितियों की व्यवस्था

करना बहुत आसान हो गया है। होस्टल के भीतरी प्रबन्ध को चलाने के लिए प्रतिनिधियों की एक सभा है जिसे पूरे अधिकार हैं और होस्टल-निवासियों की सांस्कृतिक जरूरतों को पूरा करने के लिए एक वाद-विवाद सभा (Debating Society) है। हर शुक्रवार को अध्यापक और कच्चे-शिक्षक दोनों किसी अनुबन्ध विषय पर आदर्श-पाठ (Demonstration Lesson) के लिए ढाई घण्टा देते हैं।

कच्चे-शिक्षकों का ज्ञान-भंडार बढ़ाने के लिए और उनमें ज्ञान प्राप्त करने की सच्ची उत्कंठा पैदा करने के लिए उन्हें दो सीनियर अध्यापकों की देखरेख में किसी उपयोगी विषय की कम-से-कम दो किताबें महीने भर में पढ़नी पड़ती हैं।

२—अभ्यास-पाठ (Practice Teaching)

अभी तक हमारे ट्रेनिंग स्कूल में ज्यादातर सरकारी स्कूलों के शिक्षकों को लिया गया है और इनमें ४९ फीसदी से ज्यादा कोई-न-कोई पुराने तरीके का छोटा ट्रेनिंग कोर्स पास किये हुए होते हैं। इसलिए पहले ही महीने में बहुत कुछ कामयाबी के साथ अनुबन्ध पद्धति पर अभ्यास पाठ देना सम्भव हो गया है। इस तरह के शिक्षकों को पढ़ाई के तरीकों के बारे में तो कोई कठिनाई नहीं होती, लेकिन दस्तकारी के शास्त्रीय ज्ञान के बारे में उनकी कमी फौरन जाहिर हो जाती है। इसलिए पहले महीने में तो उन्हें ज्यादातर दस्तकारी में ही काम-चलाऊ कुशलता प्राप्त करनी पड़ती है। शुरू के तीन महीने तो ट्रेनिंग पाये हुए शिक्षकों को अभ्यास-पाठ के लिए दिये जाते हैं और इनके बाद उन शिक्षकों की बारी आती है जिन्होंने ट्रेनिंग तो नहीं पायी है पर जिन्हें पढ़ाई का अनुभव है। सबसे आखिर में उन नये कच्चे-शिक्षकों को अभ्यास-पाठ दिये जाते हैं जिन्हें न तो ट्रेनिंग मिली है और न जिन्हें पढ़ाई का अनुभव है।

हमारे स्कूल में अबतक जितने अभ्यास-पाठ हुए हैं उन सबकी शुरू से ही बाकायदा लिखतें रक्खी गयी हैं। इन लिखतों से कच्चे-शिक्षकों को कम-से-कम यह अन्दाज़ा हो जाता है कि दस्तकारी से अनुबन्धित पाठ किस तरह के होते हैं। इन पाठों की संख्या करीब ८००० हो गयी है और इनसे अनुबन्ध सम्बन्धी बहुत-सी गुत्थियाँ सुलझाने में मदद मिलती है।

शिक्षक जितने ज्यादा अभ्यास-पाठ ले सके उतना ही उसके लिए और उसके स्कूल के लिए अच्छा है। लेकिन सिर्फ़ पढ़ाने से ही ट्रेनिंग पूरी नहीं हो

जाती । शिक्षक को और भी बहुत-सी बाते सीखनी पडती हैं। उसका ज्ञान मामूली दर्जे का होता है, इसलिए उसके और बच्चों के दोनों के दिल में इस ज्ञान को बढाने की जरूरत रहती है । इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए हमारे शिक्षा विभाग ने यह नियम बना दिया गया है कि बुनियादी तालीम के तरीके और शास्त्रीय ज्ञान की व्यावहारिक बातों को खूब अच्छी तरह समझने के लिए हर कच्चे-शिक्षक को कम से कम चालीस अभ्यास पाठ लेना जरूरी है । पुराने ढर्रे के ट्रेनिंग स्कूलों में अभ्यास पाठ के लिए ४०-४५ मिनट की एक या दो घन्टिया (Periods) दी जाती हैं, पर बुनियादी स्कूलों मे अभ्यास पाठ की अवधि कम से कम आधा दिन होनी चाहिए, हालाकि मामूली तौर पर यह अवधि पूरे दिन की होती है । इस तरह अगर हर कच्चे शिक्षक को ४० आधे-दिन अभ्यास पाठ के लिए दिये जाये तो एक क्लास में साल भर मे सिर्फ आठ शिक्षकों को अभ्यास पाठ का मौका मिल सकता है । हमारे तीन प्रैक्टिसिंग स्कूलों मे से दो मे सिर्फ तीसरे दर्जे तक बुनियादी पाठ्यक्रम के मुताबिक पढाई होती है और एक मे सिर्फ दूसरे दर्जे तक । इसलिए आधे-आधे दिन के चालीस अभ्यास-पाठों की योजना मे तीनों स्कूलो मे साल भर मे कुल ५६ कच्चे-शिक्षकों को अभ्यास-पाठ दिये जा सकते हैं और बाकी ४६ कच्चे-शिक्षक बिना अभ्यास-पाठो के रह जाते है । इस कठिनाई को हल करने के लिए हमने सब के लिए आधे–आधे दिन के चौदह अभ्यास–पाठ नियत कर दिये हैं । दस्तकारी से अनुबन्धित आधे–दिन के अभ्यास–पाठ को हम तीन मामूली अभ्यास–पाठों के बराबर मान लेते हैं और इस तरह शिक्षा–विभाग के नियत किये हुये ४० अभ्यास–पाठों की खाना–पूरी कर देते हैं । अप्रैल १९४१ से तीनो स्कूलों में एक–एक और दर्जा बुनियादी दर्जा बना दिया जायगा और फिर अभ्यास–पाठों की संख्या १४ से १५ कर दी जायगी ।

यहा यह ऐतराज किया जा सकता है कि कच्चे–शिक्षकों को अभ्यास–पाठ के लिए आधे दिन के बजाय पूरा दिन क्यों न दिया जाय । बात यह है कि शिक्षा की दृष्टि से हम इसे अच्छा नहीं समझते कि छोटे–छोटे बच्चो को बिलकुल ऐसे शिक्षकों के हाथ में सौंप दिया जाय जो हर पन्द्रहवें दिन बदलते रहे । यह लाज़िमी है कि क्लास के स्थायी शिक्षक का क्लास पर मानसिक प्रभाव बना रहे । इसलिए आधा दिन उसे दिया जाता है ताकि वह कच्चे–शिक्षक की आधे–दिन की पढ़ाई के असर को ठीक करके पक्का कर दे ।

अब सवाल यह होता है कि अभ्यास–पाठ एक दम लगातार दिये जायं या बीच–बीच में कुछ दिन के फ़ासले से। हमने दोनों तरीको को अच्छी तरह आज़माया और हमारा तजरबा यह रहा कि अभ्यास–पाठ लगातार होने चाहिए। बीच-बीच में अभ्यास–पाठो का सिलसिला तोड़ने से शिक्षक का जोश कम हो जाता है और वह दस्तकारी से अनुबन्धित शिक्षा योजना की भीतरी सम्भावनाओं से पूरी तरह परिचित नहीं हो पाता। कच्चे–शिक्षक के साथ क्लास के स्थायी–शिक्षक का सम्बन्ध दोस्त, उपदेशक और मार्गदर्शक (रहनुमा) का–सा रहता है। कच्चे–शिक्षक के आधे दिन के अभ्यास–पाठ के बाद वह बच्चो को तैयार करके उसके लिए ज़मीन तैयार करता है। इसके अलावा वह कच्चे–शिक्षक को सारी क्लास की योग्यता और हरएक बच्चे की निजी विशेषताएँ भी बतला देता है जिससे कच्चे–शिक्षक को क्लास संभालने मे बहुत सहूलियत हो जाती है।'

जब कच्चा–शिक्षक क्लास को पढाता है तो स्थायी शिक्षक क्लास में ही मौजूद रहता है और अनुशासन कायम रखने मे, दस्तकारी के काम की व्यवस्था करने में और लिखतें रखने में उसकी मदद करता है। फिर ये दोनो शिक्षक मिल कर क्लास की समस्याओं पर विचार करते हैं और अगर कोई कठिनाई हो तो उसे सुपरवाइज़र के सामने रखते हैं। हमने स्कूल के स्थायी शिक्षको को यह अधिकार दे दिया है कि वे कच्चे–शिक्षको के पाठों की लिखित टीका (Criticism) करें। सुपरवाइज़र इन टीकाओं की जाच करके कच्चे–शिक्षक के पास भेज देता है।

हमारे ट्रेनिग स्कूल ने पहले चार दर्जों के लिए (१) कताई–बुनाई (२) लकड़ी और गत्ते का काम और (३) खेती–बाडी, इन तीन बुनियादी दस्तकारियो का हफ्ते-वार अनुबन्धित पाठ्यक्रम बना दिया है। अभ्यास–पाठ शुरू करने से एक हफ्ते पहले हर कच्चे–शिक्षक को यह पाठ्यक्रम बतला दिया जाता है और कच्चे–शिक्षक इसके मुताबिक तैयारी करके हर हफ्ते मे काम का दैनिक बटवारा कर लेते हैं। इसके बाद हर कच्चा–शिक्षक अपने दैनिक काम के बटवारे को क्लास के स्थायी शिक्षक को दिखलाता है और उसकी सलाह के मुताबिक उसमे सुधार कर लेता है। ये सुधार हो जाने के बाद वह कार्यक्रम सुपरवाइज़र के पास जाता है और वह भी उसमे कुछ छोटे–मोटे सुधार कर देता है।

दैनिक काम तय हो जाने के बाद कच्चा–शिक्षक अपने पहले पाठ का

तफसीलवार ढॉचा बनाता है और इसका सुधार भी दैनिक कार्यक्रम की तरह होता है। इतनी तैयारी के बाद कच्चा-शिक्षक किसी बुनियादी स्कूल मे अभ्यास-पाठ शुरू करता है।

कच्चा-शिक्षक क्लास मे जो कुछ काम करता या पढाता है उसका ब्यौरा वह खुद नहीं बल्कि क्लास का स्थायी शिक्षक लिखता रहता है। कच्चे-शिक्षक की नोट बुक में मामूली तौर पर यह लिखा रहता है कि उसे क्या पढ़ाना है और सुपरवाइजर की टीकाओं से यह पता लगता है कि उसने क्या-क्या गलतिया कीं। लेकिन स्थायी शिक्षक की लिखतो से यह आईने की माफ़िक साफ ज़ाहिर हो जाता है कि कच्चे-शिक्षक ने क्लास मे क्या काम किया। स्थायी-शिक्षक की डायरी से हमे यह मालूम हो जाता है कि कच्चे-शिक्षक की कमियाँ किस तरह पूरी की जा सकती है और उसकी गलतियॉ किस तरह दुरुस्त की जा सकती हैं।

जब कच्चा-शिक्षक अपने सब पाठ पूरे कर चुकता है तो स्थायी-शिक्षक उसके पाठ संकेतों (Lesson notes) को सुधार देता है ताकि उनमें वही बातें शामिल हो जॉयँ जो अमली तौर पर पढ़ायी गयी हो।

स्थायी-शिक्षक हर बच्चे के रोजाना दस्तकारी के काम की और तैयार किये हुए माल की लिखते भी रखता है। कच्चा-शिक्षक इन लिखतों के वक्त मौजूद रहता है और इस तरह की लिखते रखना सीखता है। बुनियादी स्कूलों मे तीसरे दरजे के बच्चो को शुरू से ही अपनी तरक्की की लिखतें शिक्षक की देख-रेख में खानेदार कागज पर रखना सिखाया जाता है।

अभ्यास पाठों की निगरानी का हमने बड़ा लम्बा चौडा इन्तज़ाम किया है। क्लास के शिक्षकों के अलावा अभ्यास पाठों का एक स्थायी सुपरवाइज़र भी है जो रोज प्रैक्टिसिंग स्कूलों में जाता रहता है। सितम्बर १९४० से ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापक भी अपना कुछ समय अभ्यास-पाठो की निगरानी के लिए देते हैं। इसके अलावा ट्रेनिंग स्कूल का हेडमास्टर भी तीसरे पहर तीनों प्रैक्टिसिग स्कूलों में अभ्यास-पाठो की निगरानी करता है। मतलब यह है कि ट्रेनिग से सम्बन्ध रखने वाले हर शिक्षक को यह मौका दिया जाता है कि वह बुनियादी अनुबन्ध पद्धति के विकास में भरपूर हिस्सा ले।

३. प्रैक्टिसिंग स्कूलों की समस्याएँ

हमारे यहाँ बुनियादी स्कूलों के सघन हलके नहीं बनाये गये हैं। अभी तो यह इन्तज़ाम किया गया है कि ट्रेनिंग स्कूल से सम्बन्धित तीनों प्रैक्टिसिंग स्कूलों के शिक्षक हर महीने एक जगह इकट्ठे होते हैं और अपनी सफलताओं और कठिनाइयों के बारे में चर्चा करते हैं। इन मीटिंगों में स्कूल का हेडमास्टर या सुपरवाइज़र भी मौजूद रहता रहता है। इस माहवारी कान्फ्रेंस में बुनियादी शिक्षक तीनों बुनियादी दस्तकारियों के अगले महीने के अनुबन्धित पाठ्यक्रम पर चर्चाएँ करते हैं। वे लोग पिछड़े हुए बच्चों के लिए उपाय सोचते हैं और बच्चों के रोज़ाना काम को ठीक ढंग पर लाने की तरकीबें निकालते हैं। वे लोग मिलकर पढ़ाई के सामान में सुधार करने और पढ़ाई का सस्ता सामान बनाने का काम भी करते हैं।

जब प्रैक्टिसिंग स्कूलों के आस-पास के स्कूलों में भी बुनियादी पाठ्यक्रम जारी हो जायगा तब हर प्रैक्टिसिंग स्कूल अपने-अपने हलके के स्कूलों के लिए एक स्फूर्ति देने वाला केन्द्र बन जायगा।

शुरू में तो इन प्रैक्टिसिंग स्कूलों को आस-पास के समाज का खुला विरोध सहना पड़ा, लेकिन एक ही साल में लोगों का विरोध ठंडा पड़ गया और अब तो उनका रुख कुछ-कुछ सहानुभूतिपूर्ण भी हो चला है। स्कूलों में भर्ती होने के लिए आने वाले बच्चों की संख्या खूब बढ़ रही है और कभी तो जगह भर जाने से हमें इन्कार भी करना पड़ता है।

४. लिखतें

बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग में लिखतों का बड़ा भारी महत्व है। चूँकि बुनियादी तालीम अभी प्रयोग की हालत में है, इसलिए जो कुछ काम किया जाय उसकी लिखत रखनी चाहिए और धीरज के साथ नतीजों पर गौर करना चाहिए। अगर रोज़ाना अभ्यास की लिखतें बाकायदा रक्खी जायँ तो उनसे अनुसन्धान के लिए और शिक्षकों की रहनुमाई के लिए बहुत कीमती मसाला मिल सकता है।

ट्रेनिंग स्कूल में कच्चे शिक्षकों के तमाम अभ्यास-पाठों की तफ़सीलें और बिलकुल सही लिखतें रक्खी जाती हैं और उन्हें दर्जों के सिलसिले से जमा दिया जाता है। हरएक दर्जे के लिए एक अनुबन्ध का रजिस्टर रहता है। अनुबन्धों का

सिलसिला इस तरह जमाया जाता है कि कौनसा अनुबन्ध बुनियादी दस्तकारी के साथ होता है, कौनसा बच्चे के भौतिक और समाजी चौगिर्द मे और कौनसा इन सबसे अलग। स्कूल में ८००० से ज्यादा अभ्यास-पाठों की लिखतें जमा हो गयी हैं। बुनियादी तालीम की सम्भावनाओं के सम्बन्ध में यह एक बड़ी कीमती चीज है।

कच्चे शिक्षकों के अभ्यास-पाठों के समय सुपरवाइज़र लोग उनकी उन्नति की लिखतें बनाते जाते हैं। पाठ के लिए क्या क्या मसाला इकट्ठा किया गया और उस मसाले का उपयोग किस तरह किया गया, इसे बहुत सावधानी के साथ देखा जाता है और इन दोनों के बारे में कच्चे-शिक्षकों को पूरी-पूरी सलाह दी जाती है। चूंकि बुनियादी तालीम की योजना अभी एक छोटा सा पौधा है, इसलिए वक्त की और खर्च की बचत करने वाले तरीके सोचने का समय अभी नहीं आया है। पहले तो हमें मेहनत करके अच्छी तरह जमीन तैयार करनी है। पिछले साल की तैयारी से इस साल समय और शक्ति की बहुत कुछ बचत हो गयी है।

ट्रेनिंग स्कूल के शिक्षाक्रम में तीन दस्तकारियाँ रक्खी गयी हैं और इनकी ट्रेनिंग देनेके तरीके अलग-अलग हैं।

(१) **कताई-बुनाई**—कताई-बुनाई की ट्रेनिंग के तीन हिस्से कर दिये गये हैं:—

(अ) **कताई से पहले की क्रियाऐं**—इन क्रियाओं में कपासों और ऊन की पहचान और उन्हें छाँटना, औटना, धुनना और पूनियाँ बनाना शामिल है। यह क्रियाएं सौंपे हुए काम की पद्धति (Assignment Plan) और संयोजन पद्धति (Project Plan) दोनों से कराई जाती हैं।

(आ) **कताई**—इसमें तकली, स्थानीय चरखे, बारडोली चरखे और यरवडा चरखे पर कताई शामिल हैं। कताई की क्रियाओं की तमाम वैज्ञानिक बातें कच्चे-शिक्षकों को समझायी जाती हैं और वे लोग खुद अपने हाथ से काम करके सब कुछ सीखते हैं। एक निश्चित समय मे नियत कस और समानता का सूत कातने की परीक्षा मे पास होना हरेक के लिए लाज़िमी है। छीजन का हिसाब रखने में कभी चूक नहीं की जाती।

(इ) **कताई के बाद की क्रियाऐं**—इनमें बट देना, अटेरन और परेते पर सूत लपेटना और लट्टिया व गुडिया बनाना शामिल है।

(ई) **बुनाई की पूर्व-क्रियाएं**—इनमें करघा सजाना व लगाना और उसके नापों की लिखतें रखना शामिल है। जबतक कच्चा-शिक्षक करघा सजाना नहीं सीख जाता तबतक उसे ताना व बाना भरना नहीं सिखाया जाता। ताना व बाना भरने की क्रियाए कच्चे-शिक्षक टोलिया बनाकर करते हैं पर सिखानेवाले को यह देखना पड़ता है कि हर कच्चा-शिक्षक इस क्रिया की तमाम बारीक बातों को पूरी तरह समझ गया है या नहीं।

इसके बाद उसे डिज़ाइनों का परिचय कराया जाता है। हर कच्चे-शिक्षक को कम-से कम छै डिजाइनों की पूरी जानकारी होना जरूरी है। हर कच्चे-शिक्षक को अलग-अलग डिजाइनों के करीब १०० नमूने दिखलाये जाते हैं और बतलाया जाता है कि कौन-सा डिज़ाइन किस नक्शे का है।

(उ) **बुनाई**—हर कच्चे-शिक्षक को पहले एक-डेढ गज़ कपड़ा सिखाने वाले की निगरानी में बुनना पड़ता है। होस्टल मे अभ्यास के लिए करघे हैं और स्कूल के करघे पर बुनाई शुरू करने से पहले कच्चे-शिक्षकों को होस्टल के करघों पर कम-से-कम १२ घन्टे अभ्यास करना पड़ता है ताकि वह बुनाई की तमाम शास्त्रीय बातों से परिचित हो जाय। होस्टल का अभ्यास भी एक विशेषज्ञ की निगरानी में होता है।

(२) **गत्ते और लकड़ी का काम**—सबसे पहले कच्चे शिक्षकों को औजारों का परिचय कराया जाता है और उनका उपयोग बतलाया जाता है। इतना हो जाने के बाद वह उन औजारों से काम शुरू करता है।

(अ) **गत्ते का काम**—कच्चे-शिक्षकों को गत्ते के नमूने देकर वज़न और मोटाई से उनकी क़िस्में पहचानना बतलाया जाता है। इसके बाद उसे क़रीब एक दर्जन नमूने दिखाये जाते हैं और वह हरेक नमूना सिखाने वाले की देखरेख में बनाता है। हर नमूने को वह अपने हाथ से बनाये हुए अबरी-कागज़ से मढता है। कच्चे-शिक्षकों को अबरी और लेही बनाना भी सिखाया जाता है।

नमूने बनाने में संयोजन प्रणाली (Project System) का उपयोग किया जाता है जिससे समय और शक्ति दोनों की बचत हो जाती है।

(आ) **लकड़ी का काम**—लकड़ी के काम के लिये काश्मीर में पैदा होनेवाली क़रीब बारह तरह की इमारती लकड़ियों की पहचान बतायी जाती है।

इसके बाद गत्ते के काम वाला तरीका काम मे लिया जाता है और दूसरी तिमाही यानी दिसम्बर के आखिर तक हर कच्चा-शिक्षक स्टूल, अलमारी, मेज़ बेंच, वगैरा जैसी चार-पॉच घर उपयोग की चीज़ें बनाने मे कुशल हो जाता है। चीजें बनाने से पहले उसे लकड़ियो को जोडना सिखाया जाता है।

(२) खेती का काम—खेती का काम सौंपे हुए काम की पद्धति (Assignment Plan) से सिखाया जाना है। हर कच्चे शिक्षक को ज़मीन का एक टुकड़ा सौंप दिया जाता है जिसे वह भरसक खूब अच्छा बनाने की कोशिश करता है इस टुकड़े का कुछ हिस्सा ऐसे प्रयोगों के लिए रक्खा जाता है जैसे साग-भाजी, नाज, दाल, वगैरा पर तरह-तरह की खादों का असर देखना। कच्चे-शिक्षकों को हर पौधे के पूरे जीवन की लिखतें रखनी पडती हैं।

इ. अनुबन्ध शिक्षा की पद्धति

बुनियादी तालीम के पाठो मे अनुबन्ध को कौन-सा स्थान दिया जाय इसके बारे मे कोई कडे नियम नहीं बनाये जा सकते। अनुबन्ध तो इस पर निर्भर रहता है कि बच्चो की मानसिक योग्यता कितनी है और शिक्षक ने उनके दिल मे दस्तकारी या अनुबन्ध के लिए कितनी दिलचस्पी पैदा की है।

अगर हम दस्तकारी से शुरू करके अनुबन्ध पर ख़त्म कर दें तो इसमे यह डर है कि आगे चलकर दस्तकारी बच्चो मे दिलचस्पी पैदा नहीं कर सकेगी और पाठ्यक्रम का एक नीरस विषय बन जायगी। स्कूलो में फिर वही पुराने ढर्रे का कार्यक्रम चलने लगेगा, फ़र्क़ सिर्फ़ इतना ही होगा कि दस्तकारी एक महत्वपूर्ण विषय समझा जायगा और उसे दो घटिया (Periods) दी जायंगी। लेकिन यह भी अच्छा नही है कि जब बच्चे खुद ब-खुद दस्तकारी मे दिलचस्पी जाहिर कर रहे हों तो अनुबन्ध को घसीट लाया जाय। यह सावधानी रखने की जरूरत है कि बच्चो का ध्यान असली बात को छोडकर इधर-उधर न भटक जाय। जब दस्तकारी मे दिलचस्पी कुछ कम माल्म होने लगे तब अनुबन्ध करने का अच्छा मौक़ा मिल सकता है।

खेती के काम के पाठों मे कभी कभी काम करते-करते ही अनुबन्ध सम्भव हो जाता है। मसलन जब खेत की क्यारियॉ बनानी हों तो नापजोख की जरूरत

पड़ती है और इसके लिए नाप के पैमानों का ज्ञान देना जरूरी हो जाता है। लकड़ी के काम मे भी इसी तरह नाप-जोख की जरूरत होती है।

लेकिन एक औसत दर्जे के शिक्षक के लिये यह कल्पना से बाहर की बात है कि वह यह ठीक-ठीक जाच सके और पता लगा सके कि अनुबन्ध का उचित मौका कब आता है। इसलिए दस्तकारी और उसमे होनेवाले अनुबन्ध के बारे मे कुछ समय-विभाग कर देना जरूरी मालूम होता है।

पाठ शुरू तो दस्तकारी से किया जाय और अनुबन्ध उसके बाद मे हो। लेकिन जब पाठ चल रहा हो तो ऐसे अनुबन्ध जिनसे दस्तकारी की किसी क्रिया में दिलचस्पी बढे या उस क्रिया का कोई गूढ रहस्य प्रकट हो, बाद के लिए नहीं छोड़ने चाहिए।

बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग कैसी हो

[उत्तमसिंह तोमर]

बुनियादी स्कूलों में काम करने के लिये शिक्षकों की ट्रेनिंग का विषय जितना लम्बा-चौडा है उतना ही महत्वपूर्ण भी है। इसके बहुत से हिस्से और बहुत से पहलू है जिसमें से हरएक का ढाचा खूब सोच-समझ कर बनाने की ज़रूरत है। इस छोटे-से निबन्ध मे उन सब बातों पर रोशनी डालना कठिन है, इसलिए मैं कुछ थोड़ी-सी बातें मोटे तार पर वर्णन करूगा।

१. उम्मीदवारों का चुनाव

ट्रेनिंग किस तरह के लोगों को दी जाय, यह सवाल सब ट्रेनिंग स्कूलों के लिए बहुत महत्व रखता है! मामूली तौर पर यह शर्त सुझायी गयी है और मान भी ली गयी है कि बुनियादी ट्रेनिग स्कूल मे भर्ती होने वाला उम्मीदवार कम से कम मैट्रिक पास तो होना ही चाहिए। दुर्भाग्यवश व्यवहार में इसके सिवा शायद और कोई आदर्श-नाप ही नहीं है। लेकिन क्या मैट्रिक की शर्त रखने से बुनियादी ट्रेनिंग स्कूलों को ऐसे शिक्षक मिल सकेंगे जिनकी उन्हें ज़रूरत है? मुझे इसमें बहुत सन्देह है। ज्यादातर बुनियादी स्कूलों को ऐसे शिक्षक की ज़रूरत है जो देहाती वातावरण में रहा हो और इस वातावरण के हर अग से परिचित हो, क्योंकि उसे ऐसे ही वातावरण में काम करना है। मैट्रिक पास उम्मीदवार तो एक दूसरी ही तरह के वातावरण में से निकल कर आते हैं। और फिर मैट्रिक पास होने मे ही ऐसी क्या विशेषता है? सिर्फ यही न कि उसे एक हद तक दूसरी चीजों की अपेक्षा किताबी विषयों का ज्ञान कुछ अधिक होता है। लेकिन क्या यह बात इतनी जरूरी है कि उसी को आदर्श मान लिया जाय? और क्या इस दिक्कत से छुटकारा पाने का कोई दूसरा रास्ता नहीं है?

मान लीजिये कि कम से कम मैट्रिक पास लोगों को ही भर्ती करने से हमें ऐसे आदमी मिल जाते हैं जिन्हें किताबी विषयों का कुछ आवश्यक ज्ञान है। लेकिन कम से कम योग्यता का यह बन्धन लगा कर क्या हम देहात से आने वाले उन लोगों का रास्ता बन्द नहीं कर रहे हैं जो मैट्रिक पास लोगों से

ज्यादा होनहार, परिश्रमी और उत्साही हैं। हिन्दुस्तान गावो का देश है। इसमें बहुत से गाव ऐसे हैं जिनमें प्रायमरी स्कूल तक नहीं हैं और मिडिल स्कूल तो कुछ गिने चुने गावों में ही हैं। लेकिन इन देहाती मिडिल स्कूलो में कुछ विद्यार्थी जरूर ऐसे मिल सकते हैं कि अगर उन्हें अवसर और साधन प्राप्त होते तो वे किसी भी विश्व-विद्यालय की शोभा बढ़ा सकते। क्या मैट्रिक पास का बन्धन लगा कर ऐसे विद्यार्थियो को छोड़ दिया जाय? मेरी राय मे बुनियादी ट्रेनिग स्कूलों मे प्रवेश के लिए योग्यता का कोई ऐसा छोटे से छोटा नाप रक्खा जाय कि इस तरह के लोगो को भी उसमें ट्रेनिंग पानेका मौका मिले। हा, कोई ऐसी विशेष प्रवेशिका परीक्षा रख ली जाय जिससे उम्मीदवारो के तालीमी ज्ञान का भी पता लग जाय और उनकी समझदारी और योग्यता का भी। और ट्रेनिग देने का ढग इस तरह का बनाया जाय कि वे ट्रेनिग स्कूल से बुनियादी कक्षाओं का काम संभालने लायक योग्यता और ज्ञान प्राप्त करके निकले। ट्रेनिग देने के अलावा ट्रेनिंग स्कूलो का काम यह भी होगा कि उन्हे ज़रूरी शिक्षा भी दें। लेकिन इसके लिए हर प्रान्त अपनी आवश्यकताओं और हालतो के अनुसार प्रवेशिका और परीक्षा का कम से कम आदर्श निश्चित करना होगा और बुनियादी ट्रेनिंग स्कूल की पढाई का पाठ्यक्रम बनाना होगा।

बुनियादी शिक्षा का पाठ्यक्रम बनाने वालों का ख़याल है कि सात साल की शिक्षा के बाद उसके द्वारा बच्चे के मास्तिष्क का विकास कम से कम मैट्रिक के दर्जे तक का तो हो ही जायगा। जो लोग प्रवेश के लिए कम से कम मैट्रिक तक योग्यता ज़रूरी समझते हैं, उनके दिमाग में अगर सात साल की बुनियादी शिक्षा की यही कल्पना हो, तब तो झगड़े की कोई बात ही नहीं है। लेकिन जब तक सात साल की बुनियादी शिक्षा प्राप्त किये हुए विद्यार्थी न मिल सके तबतक कुछ कामचलाऊ व्यवस्था तो करनी ही होगी। अभी तो लोग बुनियादी शिक्षा को चलाने की जल्दी मे हैं, इसलिए शिक्षकों की ट्रेनिंग के लिए पूरा समय नहीं देते। इस जल्दबाज़ी का बुनियादी स्कूलों के काम पर का बहुत बुरा और उल्टा असर पड़ता है। मेरी राय में इन तमाम बातों को प्राप्त करने के लिए कम से कम कुछ साल तक बुनियादी ट्रेनिग स्कूलों मे उन्हीं शिक्षकों को भर्ती किया जाय जो हाल ही में किसी नार्मल स्कूल से ट्रेनिंग पाकर निकले हो और जिनका काम अच्छा रहा हो।

२. ट्रेनिंग की अवधि

ज्यादातर लोगो की राय है कि पहली चार कक्षाओ के लिए शिक्षकों को एक साल की ट्रेनिंग दी जाय और सातों कक्षाओ के लिए दो साल की। इस तरह की ट्रेनिंग शायद उन उम्मीदवारों के लिए ठीक रहे जिन्होंने बुनियादी स्कूल में शिक्षा प्राप्त की हो और जो बुनियादी दस्तकारी के हर पहलू मे खूब अच्छी तरह परिचित हो। लेकिन जब तक हमे ऐसे उम्मीदवार न मिले तब तक हमें सिर्फ नार्मल स्कूलो मे नये निकले हुए उम्मीदवारों को भर्ती करना चाहिए। हालाकि नार्मल ट्रेनिंग पाये हुए शिक्षक बुनियादी दस्तकारी से परिचित न होंगे पर इन्हे शिक्षा के तरीको वगैरा की जानकारी का लाभ मिलेगा। लेकिन बिलकुल नये उम्मीदवारो को सभी बातों की ट्रेनिंग देना ज़रूरी होगा और उसके लिए ऊपर बतायी हुई ट्रेनिंग काफी न होगी। इसलिए मेरा ख़याल है कि बिलकुल नये उम्मीदवारो की ट्रेनिंग चार कक्षाओं के लिए दो साल से कम मे, और सात कक्षाओं के लिए तीन साल से कम मे पूरी नहीं हो सकती।

३. बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग का पाठ्यक्रम

बुनियादी शिक्षको की ट्रेनिंग का जो पाठ्यक्रम रक्खा गया है वह काफी अच्छा है। लेकिन वह इतना बडा है कि ट्रेनिंग की निश्चित अवधि मे पूरा नहीं हो सकता। हा, अगर मेरे सुझाव के अनुसार ट्रेनिंग की अवधि बढ़ा दी जाय तो वह पूरा हो सकता है। लेकिन इसके लिए पाठ्यक्रम में कुछ कतर-ब्योंत की जरूरत पडेगी और इस मामले मे हर प्रात को स्वतन्त्रता देनी पड़ेगी।

४. ट्रेनिंग की विशेषताएँ

जिस तरह बुनियादी शिक्षा में बच्चे स्कूल के काम और जीवन से बहुत-सी ऐसी बातें सीखते हैं जो उन्हें पाठों के द्वारा नहीं सिखायी जा सकतीं। इसी तरह बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग भी ऐसी होनी चाहिए कि वे कोरी जानकारी प्राप्त करने के बजाय काम करके कुछ सीखें। मतलब यह है कि उनकी ट्रेनिंग जितनी व्यावहारिक हो सके उतना ही अच्छा। बहुत-सी सैद्धातिक (Theoretical) बातो का सीखना भी ज़रूरी होगा, लेकिन ट्रेनिंग के हर अंग के व्यावहारिक कार्यक्रम होंगे और उन्हे ट्रेनिंग स्कूल के जीवन मे इस तरह गूँथ दिया जायगा कि कच्चे शिक्षक सैद्धान्तिक ज्ञान को व्यवहार के द्वारा पक्का कर सकें और व्यावहारिक कामो

से सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त कर सकें। कच्चे-शिक्षक दस्तकारी का काम तो व्यावहारिक तरीके से सीखेंगे ही, पर उन्हें दस्तकारी से सम्बन्ध वाली बातों के दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक और वार्षिक हिसाब-किताब, ग्राफ, नक़्शे, और रजिस्टर इस क़ायदे के साथ रखने होंगे कि रोज़ हिसाब लगाने की ज़रूरत पड़े और इस बात का पता चाहे जब लगाया जा सके। दस्तकारी के सामान को भंडार में रखने और भंडार का प्रबन्ध व हिसाब-किताब रखने की व्यावहारिक ट्रेनिंग देने का भी प्रबन्ध होना चाहिए। दस्तकारी के काम के तरीके और हर बच्चे व पूरी कक्षा के काम के हिसाब-किताब रखने के ढंग में हमेशा अनुसन्धान होते रहने चाहिए।

ट्रेनिग स्कूलों में समाज-विज्ञान की व्यावहारिक ट्रेनिंग के लिए बहुत मौके रहते हैं। कक्षा और स्कूल के काम से सम्बन्ध रखनेवाले कार्यक्रमों को इस तरह बाट दिया जाय कि बच्चे-शिक्षक अपनी-अपनी ज़िम्मेदारी के कामों को आपसी सहयोग और सद्‌भावना के साथ करें। दस्तकारी, खेल-कूद, बाग़वानी, बालचर्य, स्कूल के प्रदर्शन संग्रहालय, उत्सव होस्टल का जीवन, स्कूल की व्यवस्था, ये तमाम ऐसी चीजे ह जिनमें व्यावहारिक शिक्षा के अद्‌भुत अवसर भरे हुए हैं। समाज विज्ञान के व्यावहारिक पहलू को जहा तक हो सके ट्रेनिंग स्कूल के वास्तविक जीवन के साथ ही गूंथ लेना चाहिए। इसके अलावा, बच्चे-शिक्षकों से समाज-सेवा के भी कुल काम कराने चाहिए। समाज-सेवा की कुछ बातें समझाने के लिए अगर जबानी पाठ देने की ज़रूरत हो तो वह भी करना चाहिए।

समाज विज्ञान की तरह साधारण विज्ञान की बहुत सी बातों का ज्ञान भी व्यावहारिक रूप में प्रयोगों के द्वारा या वैज्ञानिक निरीक्षणो के सुरचित और सुसगठित कार्यक्रमो के द्वारा देना चाहिए। इन कार्यक्रमों की व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि कच्चे शिक्षकों को यह स्पष्ट कल्पना हो जाय कि वस्तुओं को किस तरह क्रम-बद्ध किया जाता है और व्यावहारिक काम के द्वारा किस तरह नियमित और तर्क-संगत ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। दूसरे विषयों की तरह साधारण विज्ञान की कुछ बाते भी पाठ देकर पढ़ानी पड़ेंगी यह भी ध्यान रखना होगा कि साधारण विज्ञान के प्रयोग ऐसे सादे ढंग से किये जायं कि एक औसत दर्जे के देहाती स्कूल में संभव हो सके। ट्रेनिग स्कूलो को इस दिशा में कुछ ठोस काम करना पड़ेगा।

शिक्षा के दो ललित अंगों—कला और संगीत—पर बहुत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इन दोनों विषयों की शिक्षा व्यावहारिक तरीके से दी जानी चाहिए। ट्रेनिंग स्कूल के जीवन में कला और संगीत के व्यावहारिक उपयोग के बहुत से अवसर आते हैं और इनका खूब उपयोग करना चाहिए। दुर्भाग्यवश कला और संगीत को शिक्षा में वह जगह नहीं दी जाती जो इनको मिलनी चाहिए। इसलिए ट्रेनिंग स्कूलों का पवित्र कर्तव्य है कि इनके तालीमी महत्व पर जोर दें और इनके असाधारण गुणों को सिद्ध करें।

बागवानी और खेती-बाड़ी भी दो ऐसे विषय हैं जिनके बिना बुनियादी शिक्षा कभी पूरी हो ही नहीं सकती। इसलिए बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग में इनपर भी उचित जोर दिया जाना चाहिए। ये विषय हिंदुस्तान के हर देहाती स्कूल के लिए आवश्यक हैं और इनसे साधारण विज्ञान की शिक्षा में भी सहायता मिलती है। यह बतलाने की ज़रूरत नहीं है कि बागवानी और खेती—बाड़ी का सब काम ज्यादा-तर व्यावहारिक होगा। हर कच्चे-शिक्षक से हर फ़सल का हर काम कराना चाहिए। चूंकि खेती बाड़ी एक बुनियादी उद्योग मान लिया गया है, इसलिए लोग समझते हैं कि अगर स्कूल में किसी दूसरे बुनियादी दस्तकारी के द्वारा शिक्षा दी जाती हो तो खेती-बाड़ी को ट्रेनिंग का विषय रखने की जरूरत नहीं है। लेकिन शिक्षा देने के लिए चाहे जो दस्तकारी चुनी जाय, खेती-बाड़ी का काम तो ट्रेनिंग में शामिल करना ही चाहिए।

बुनियादी ट्रेनिंग स्कूल के शिक्षा-क्रम के इन विषयों के अलावा और भी बहुत से काम और कार्यक्रम हैं जिनका बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग में बहुत महत्व और मूल्य है; जैसे, खेल-कूद, सयानों की शिक्षा, बालचर्या, खेलों की प्रतियोगिताएं, नाटक, सैरें, हस्तलिखित पत्रिका निकालना, इत्यादि। बच्चों के घर और समाज के क्रियात्मक सहयोग के बिना बुनियादी शिक्षा पूरी नहीं हो सकती। चूंकि यह सहयोग प्राप्त करना बहुत कठिन है, इसलिए बुनियादी शिक्षक को इसे प्राप्त करने के ढंग और तरीकों की ट्रेनिंग मिलनी चाहिए। यह ट्रेनिंग भी जहां तक हो व्यावहारिक होनी चाहिए।

५. पढ़ाने का अभ्यास (अभ्यास-पाठ)

बुनियादी ट्रेनिंग स्कूलों के लिए यह एक टेढ़ा सवाल है कि कच्चे-शिक्षकों को कक्षा पढ़ाने का अभ्यास किस तरह कराया जाय। बुनियादी शिक्षा में विषय

अलग-अलग तो माने नहीं जाते और न उसमें कक्षाओं की निश्चित घटिया होती है। हालाकि काम नियमित रूप से जरूर होता है, पर शिक्षक को बहुत कुछ स्वतन्त्रता रहती है और शिक्षा का सिलसिला भी लगातार चलता है। बुनियादी शिक्षा स्कूल के कमरे मे या स्कूल के मैदान मे ही सीमित नहीं रहती, बल्कि उसका क्षेत्र बहुत लम्बा चौडा होता है। ऐसी अवस्था में कच्चे-शिक्षको के लिए कच्चा पढ़ाने के अभ्यास का प्रबन्ध करना बड़ा कठिन हो जाता है। इसके लिए ४०-४० मिनिट की घटियो से काम नहीं चल सकता, और न हफ्ते मे एक दिन देने से काम चल सकता है, क्योंकि बुनियादी स्कूलो में अलग–अलग कार्यो के लिए हफ्ते में अलग–अलग दिन नियत होता है। मुझे तो सबसे ज्यादा स्वाभाविक बात यह जॅचती है कि कच्चे-शिक्षको को हर तिमाही मे हर बुनियादी कक्षा एक सप्ताह अभ्यास-पाठ के लिए दी जाय। लेकिन इसमे व्यवस्था की कठिनाइयाँ पैदा होंगी। एक तो यह कि कक्षा का शिक्षक अपना काम न कर सकेगा, और दूसरी यह कि हर साल हर बुनियादी कक्षा मे सिर्फ दस के लगभग कच्चे-शिक्षक पढाने का अभ्यास कर सकेंगे। इसलिए या तो ट्रेनिंग स्कूल में कच्चे शिक्षकों की सख्या घटानी पडेगी या एक से ज्यादा प्रैक्टिसिग स्कूलो का प्रबंध करना पडेगा। लेकिन इन दोनों हालतों मे खर्च बहुत बढ़ जायगा, इसलिए अभ्यास-पाठ की अवधि ही कम रखनी पड़ेगी। यह भी ज़रूरी है कि कक्षा का शिक्षक सप्ताह में कम-से कम तीन दिन तो अपनी कक्षा को पढ़ा सके। अगर ये तीन दिन एक-एक दिन छोड़कर रक्खे जायँ तो ऐसा हो सकता है कि दो कच्चे-शिक्षक सप्ताह मे लगातार दो दिन तो कक्षा की पढाई को देखें और तीसरे दिन खुद उसे पढावे। शिक्षक को साल-भर मे ऐसी छै बारी मिल जाय तो बहुत अच्छा है, वरना कम-से कम चार तो मिलनी ही चाहिए।

अभ्यास-पाठों की निगरानी भी एक महत्वपूर्ण चीज है। सब से अच्छी और ज़रूरी बात तो यह है कि निगरानी का काम ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापक करें क्योंकि कच्चे-शिक्षको को ट्रेनिंग देना और उनके अभ्यास-पाठों को ठीक रास्ते पर चलाना उन्हीं का काम है। ट्रेनिग स्कूल मे जो कुछ सिखाया जाय और प्रैक्टिसिंग स्कूल मे जो अभ्यास-पाठ दिये जाय इन दोनों चीजो में पूरा मेल होना। ट्रेनिग स्कूल के अध्यापको और प्रैक्टिसिग स्कूल के शिक्षकों मे भी हार्दिक सहयोग बना रहना चाहिए।

निष्कर्ष

इन बातो से यह निष्कर्ष निकलता है कि बुनियादी शिक्षको की ट्रेनिग जहा तक हो सके व्यावहारिक होनी चाहिए। जो कुछ पढ़ाया और सिखाया जाय उसका व्यावहारिक प्रयोग भी हो। अगर हम बुनियादी स्कूलों मे स्वतंत्र अनुशासन का वातावरण बनाना चाहते है तो हमे ट्रेनिंग स्कूलों मे भी ऐसा ही वातावरण रखना जरूरी है। खेल की प्रतियोगिताओं की व्यवस्था करने का ढग खेल की प्रतियोगिताओं का आयोजन करके ही सिखाया जाय। अगर समाज सेवा के कार्य-क्रम बनाना और पूरे करना सिखाना है तो कच्चे-शिक्षको से ऐसे कार्यक्रम बनवा-कर पूरे करवाने चाहिए। इतने व्यावहारिक कार्यक्रमों का आयोजन तो कठिन होगा कि सब बातें उन्हीं के द्वारा सिखायी जा सके, लेकिन समय-समय पर इस तरह के कार्यक्रमों का आयोजन करने से कच्चे-शिक्षको को बुनियादी शिक्षा के उद्देश्यो को समझाने मे सहायता मिलेगी। इन कार्यक्रमो को पूरा करने में उन्हे कठिनाइयो से बचने के रास्ते और तरीके तलाश करने पडेंगे। इससे ट्रेनिंग स्कूल के अध्यापको को भी व्यावहारिक अनुभव होगा और बुनियादी शिक्षक की कठि-नाइयों और कमियों को अच्छी तरह समझकर यह पता लगा सकेंगे कि उसमें कम से कम कितनी योग्यता होनी जरूरी है। बुनियादी शिक्षा के लक्ष्य बहुत ऊँचे हैं और यह निश्चय करना बुनियादी ट्रेनिंग स्कूलो का काम है कि एक औसत दर्जे के और कम वेतन पर गुज़र करने वाले शिक्षक के द्वारा उन्हें किस हद तक और किस तरह प्राप्त किया जा सकता है।

बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग पर कुछ विचार

[मिस्टर डब्ल्यू डब्ल्यू. वुड]

जहा तक मैं समझता हूँ बुनियादी शिक्षा मोटे पर ७ और १४ साल के बीच की उम्र वाले बच्चों से सम्बन्ध रखती है। इसके मूल सिद्धात ये हैं कि शिक्षा किसी दस्तकारी के द्वारा और उसे केन्द्र मान कर दी जाय और दस्तकारी की कक्षा में बनी हुई चीजों की बिक्री से शिक्षक के वेतन का पूरा या अधिकाश भाग

निकल आवे। इनमें से पहली बात मेरे लिए नयी नहीं है। इंग्लैंड मे हम लोग १३ और १६ साल के बीच की उम्र के लड़के और लड़कियों दोनों को ऐसे स्कूलों मे शिक्षा देते आ रहे हैं जिनको कोई मौलिक नाम न होने के कारण 'जुनियर टैक्निकल स्कूल'[१] 'जूनियर कमर्शल स्कूल'[२] 'जूनियर डुमेस्टिक सायन्स स्कूल'[३] 'जूनियर आर्ट डिपार्टमेंट'[४] कहा जाता है। इनके फलों को देख कर इस प्रणाली की योग्यता पूरी तरह सिद्ध हो जाती है। लेकिन अभी तक मेरे अनुभव में यह बात नहीं आयी थी कि किसीने इसके माली पहलू की तरफ भी नज़र की हो। इसलिए प्रयोग के इस पहलू के अध्ययन मे मुझे बहुत दिलचस्पी होगी।

दस्तकारी के द्वारा शिक्षा देने के लिये शिक्षकों को सबसे पहले खुद दस्त-होना चाहिये। शिक्षक का काम शुरू करने से पहले उन्हें २ से ५ साल तक दस्त-कारी के द्वारा अपनी जीविका पैदा करनी चाहिए। इन शिक्षकों को मेरे ख़याल से सिर्फ़ शिक्षा के तरीक़ों (Methods of teaching) की ट्रेनिंग दी जाय। ये लोग दिन में कुछ घंटे दस्तकारी का काम करके अपने अध्यापकों का वेतन तक निकालने में मदद दे सकते हैं। आर्थिक और सामाजिक दोनों ही दृष्टियों से विद्यार्थियों में दस्तकारी की निपुणता का होना सिर्फ पढने लिखने की योग्यता से ज्यादा महत्वपूर्ण और स्थायी है। जिस अध्यापक का दस्तकारी ज्ञान—चाहे हिन्दुस्तान में प्राप्त किया गया हो या दूसरे देशों के कालिजों मे—ऊपरी तौर का है, वह अच्छे दस्तकार नहीं तैयार कर सकता। मेरा बुनियादी शिक्षाक्रम यह है कि विद्यार्थी को इतनी साक्षरता हो जाय कि वह मामूली तौर के हिसाब-किताब, जिसमें साधारण गणित भी शामिल हैं, रख सके और साथ ही उसे शरीर की सफ़ाई और समाजी स्वास्थ्य विज्ञान व शारीरिक शिक्षा का भी ज्ञान हो जाय। हर हालत में पाठ्यक्रम को जहा तक हो सके शिक्षक की ही मर्ज़ी पर छोड़ देना चाहिए, क्योंकि दस्तकार होने के कारण उसका मस्तिष्क स्थिर होगा और उसमें कम से कम एक बात के लिये तो उमंग होगी। अपनी शक्तियों और अपने विद्यार्थियों की योग्यता

१. बच्चों के कला स्कूल।

२. बच्चों के व्यापारिक स्कूल।

३. बच्चों के घरेलू विज्ञान स्कूल।

४. बच्चों के कला विभाग।

के अनुसार शिक्षक शिक्षाक्रम में अपनी मर्जी से घटा-बढ़ी कर ले। इनको मैं शिक्षाक्रम की हलचलें (Extra-curricular activities) की श्रेणी में रक्खूगा और दिलपसन्द कामों (Hobbies) की क्लब या टोलिया बना कर हर लड़के, लड़की और शिक्षक तक को यह मौका दूगा कि बातचीतों या प्रदर्शनों (Demonstrations) के द्वारा सारी कक्षा के ज्ञान की वृद्धि मे हिस्सा ले। मैंने १४ साल के कितने ही विद्यार्थियों को उन विषयों पर जिनमे उनका व्यक्तिगत और विशेष रस था, उस कक्षा के सामने जिसमे खुद शिक्षक कक्षा का नम्र विद्यार्थी बना बैठा था, ऐसे व्याख्यान देते देखा है जो शिक्षक की समझ से भी कुछ ऊँचे थे। सम्भव है देहाती जीवन मे ज्यादा विषय न मिल सकें, लेकिन एक चतुर शिक्षक उसमे से विचित्र प्रकार की विभिन्नताएं ढूँढ-निकाल सकता है। आपसी सहायता की इस प्रणाली में, मेरे विचार मे, बहुत अधिक सम्भावनाए हैं—न केवल दिल-पसन्द कामो को चलाने वाले बच्चों के लिए बल्कि उसमें हिस्सा लेने वाले सभी के लिए, खास कर उस अवस्था में जब कि सब लोग सहयोग के साथ मिल-जुल कर काम करें। बुनियादी शिक्षा का यह पहलू अगर शिक्षकों की ट्रेनिंग में शामिल कर दिया जाय तो बडा अच्छा हो और इस पर अमल करने से उनका ससारी ज्ञान जरूर बढेगा।

छठा भाग

बुनियादी शिक्षा में कला का स्थान

१. कला के द्वारा आत्म-भाव-प्रकाशन

२. बुनियादी शिक्षा मे कलाकार का स्थान

कला के द्वारा आत्म-भाव प्रकाशन

(डा० इबादुर्रहमान खां)

इलाहाबाद के बेसिक ट्रेनिंग कालेज में हमने दस्तकारी के साथ-साथ कला पर ज़ोर दिया है और इस सिलसिले में हमने कई प्रयोग किये हैं। इनसे हमें जो तजरबे हासिल हुए हैं उनके नतीजे मैं आपके सामने रखना चाहता हूँ।

विलायत मे बच्चों की तालीम में आर्ट (कला) को बहुत तरजीह (महत्व) देते हैं। इसकी वजह यह है कि बच्चों को अगर अपने भावों को ज़ाहिर करने का मौक़ा दिया जाय तो वे शब्दों के बनिस्बत पैन्सिल या रंग के जरिये अपने भावों का इजहार करने में ज्यादा शौक दिखलाते हैं। इस तरह की चित्रकारी उनके दिमाग़ के लिए एक तरह से शार्ट-हैन्ड (संकेत-लिपि) है।

बच्चों को दीवारों वग़ैरा पर तसवीरें बनाते हुए सबने देखा होगा। अलग-अलग रंगों का भी बच्चों के विकास पर बहुत असर होता है। अगर बच्चे कोई अच्छी चीज़ देखते हैं तो अगर उनके पास रंग हों तो वे बड़े शौक से उसे रंगने की कोशिश करते हैं। कताई और गत्ते का काम भी बच्चे शौक से करते हैं, मगर इससे भी ज्यादा मोहब्बत उन्हें रंगो से होती है। इसलिए शिक्षा-प्रणाली में आर्ट को भी दस्तकारी का-सा ही महत्व देना चाहिए।

कोई भी काम तब तक अच्छा नहीं होता जब तक उसमें सफ़ाई (finish) न हो। इसी तरह दस्तकारी की चीज़ में भी जब तक सफ़ाई न हो तब तक वह सुन्दर नहीं दिखाई देती। किताबों की जिल्दों और गत्ते के नमूनों को जब तक सजाया (decorate) न जाय तब तक वे सुन्दर नहीं लगते। इसलिए आर्ट में भी हमे सफ़ाई और सजावट पर ज्यादा जोर देना चाहिए।

मेरी नज़र में आर्ट के दो हिस्से हैं। एक तो वह जिसमें बच्चों को अपने भावों को जाहिर करना सिखाया जाय जिससे वे अपने दिल से शकलें बनावें और उनमें रंग भरें। इसके बाद उन्हें बाकायदा आकृतिए बनाना सिखाना चाहिए। आर्ट का दूसरा हिस्सा यह है कि बच्चों में रचना-शक्ति (creative-power) पैदा करने के लिये उन्हें शुरू-शुरू में तसवीरों के जरिये कहानिया सिखायी जायं।

इससे वे कहानी सुनकर या पढ कर खुद तसवीरों के जरिये उसे समझाने की कोशिश करेंगे ।

लोगों का ख़याल है कि यूरुप वगैरा मे आर्ट ज्यादा है, मगर मेरा तजरबा है कि हिंदुस्तान मे उससे ज्यादा आर्ट है । हम आर्ट में पिछडे हुए इसलिए हैं कि मौजूदा शिक्षा–प्रणाली में हमारी कलात्मक प्रवृत्तियों को खिलने का मौक़ा नहीं दिया जाता । हमने देखा है कि बच्चों को आर्ट की शिक्षा देना मुश्किल नहीं है । १५–२० फ़ीसदी बच्चे आर्ट में दिलचस्पी लेते हैं और उन्हें बडी आसानी से आर्ट की शिक्षा दी जा सकती है ।

आर्ट या कला के जरिये आजादी के साथ भावों को जाहिर करने का ढंग अपने स्कूलों में चालू करने मे हमे खर्चे की तरफ भी ध्यान देना पडा है, क्योंकि बुनियादी स्कूलों के लिए तकलिया देने मे ही ७५ हजार रुपये खर्च हो गये । रगने के ब्रशों का खर्च बचाने के लिए हम बच्चों से खजूर या बास की कूंचिया बनवाते है । बच्चे महगे विलायती रंगो की जगह सस्ते देसी रग काम मे लाते है और उन्हें चीनी की प्यालियो के बजाय मिट्टी के शकोरों मे रखते हैं ।

आर्ट की शिक्षा देने के लिए हमने अपने स्कूलों मे मिट्टी के बरतन बनने का काम भी शुरू किया है । बच्चे जो बरतन बनाते हैं वे हाथ से ही बनाते हैं, चाक पर नहीं । बच्चों के हाथों को सधाने के लिये हम उन्हें सीढ़ी ार दस्त-कारिया सिखाते हैं । मसलन पहले कागज मोड़ना सिखा कर फिर गत्ते का काम सिखाते हैं और उसके बाद लकडी का काम । जिल्द-साजी का पाठ्यक्रम अभी जारी नहीं किया गया है । यह काम तो पाचवे दर्जे के गत्ते के काम के सिलसिले मे ही सिखाया जा सकता है । इसके बाद छठे और सातवें दर्जो में सजावट करना सिखाना चाहिए । लेकिन इसके लिए हर स्कूल मे एक कला-विशेषज्ञ (Art Expert) रखना पड़ेगा । जिस तरह कताई के विशेषज्ञ तैयार किये जाते हैं, उसी तरह कला के विशेषज्ञ भी तैयार करने पडेंगे ।

स्कूलो मे धातु का काम हमने टीन से शुरू किया है । इसके लिये हर सेन्टर मे एक छोटी धौंकनी दे दी गई है और सारा सामान छ रुपये में पूरा हो गया है ।

मेरी राय में दस्तकारी की शिक्षा में आकृतिएं बनाना (Design-making) भी शामिल कर देना चाहिये। होली के दिनों में आलू पर अक्षर वगैरा काट कर लोग छापे बनाते हैं। हम भी डिज़ाइन सिखाने के लिये आलू का उपयोग कर सकते हैं।

शिक्षको के लिये भी आर्ट एक बडे उपयोग की चीज़ है। इसकी मदद से वे पढ़ाई के लिए तसवीरें, मॉडल वगैरा बना सकते हैं। अगर बच्चों को कोई असली चीज़ दिखाना सम्भव न हो तो आर्ट जानने वाला शिक्षक उसकी तसवीर का नमूना बना कर दिखला सकता है।

आर्ट सिखाने मे हम एक दूसरी चीज़ से भी मदद ले सकते हैं। बच्चो को मिट्टी में खेलना बहुत पसन्द होता है। अगर इस मिट्टी के खेल में हम उन्हे मिट्टी के बर्तन बनाना सिखावेंगे तो वे बडे शौक से उसे सीखेंगे। जैसा कि मैं बतला चुका हूँ, हमारे स्कूलों के बच्चे मिट्टी के बर्तन हाथ से ही बनाते हैं। इन बर्तनों को वे 'कॉइल प्रोसेस' (coil process) से बनाते हैं। यानी गीली मिट्टी की लम्बी-लम्बी-बत्तिया कर उन्हें एक के ऊपर एक गोलाकार रखते जाते हैं। इन्हें पकाने के लिए दो-ढाई रुपये मे आवा तैयार हो जाता है। पकाने के बाद वे इनको रग देते हैं।

मै कला को दस्तकारी नहीं मानता बल्कि उसे दस्तकारी की मददगार समझता हूॅ। मेरा खयाल है कि जब कला और दस्तकारी दोनों साथ-साथ चलेंगी तब बच्चों को शिक्षा देने की एक बड़ी चीज़ पैदा हो जायगी। आप एक बार आर्ट की उपयोगिता को आजमा कर तो देखें। जब आपको यक़ीन हो जाय कि इसमें शिक्षा का कितना मसाला है, तब आप इसे पाठ्यक्रम में शामिल करें।

बुनियादी शिक्षा में कलाकार का स्थान

(नीहार रञ्जन चौधुरी)

बुनियादी शिक्षा के ट्रेनिग केन्द्र मे कलाकार का मुख्य काम यह है कि वह कच्चे—शिक्षको और विद्यार्थियों के लिए काम के एक क्रमबद्ध और अनुबन्धित

कार्यक्रम की रचना करे। हरेक बुनियादी दस्तकारी के काम की योजना अलग होगी और हरेक योजना को बनाने में कलाकार को सूझ-बूझ और योग्यता के साथ प्रयत्न करना पड़ेगा।

कला की शिक्षा का कार्यक्रम रचने में शिक्षक को सौन्दर्य, चित्रकला, रंगसाजी, आकृति-लेखन इत्यादि के नियमों और देशी शैली और क्रिया को ध्यान में रखना होगा। साथ ही उसे शिक्षा के सिद्धान्त, बाल-मनोविज्ञान, अनुबन्ध की पद्धति, आदि बातों को भी ध्यान में रखना पड़ेगा। 'उसे बुनियादी दस्तकारियों से सम्बन्ध रखने वाले नकशों (technical drawings) के तमाम पहलुओं को खूब अच्छी तरह-अध्ययन करना होगा और उनके बारे में सब बातों को जमा करना होगा, क्योंकि बच्चो को दस्तकारी के साथ सुरुचि, काम में लगन और वस्तुओं को सुन्दर बनाने की शिक्षा भी देना आवश्यक है। उसे यह भी ध्यान में रखना होगा कि कला की शिक्षा दस्तकारी, बचत और ज्ञान के दूसरे पहलुओं से सम्बन्धित होनी चाहिये। उसका काम सिर्फ इतना ही नहीं है कि वह बच्चों में सुरुचि, क्रियात्मक उत्साह और दस्तकारी के प्रति सजीव लगन उत्पन्न कर दे, बल्कि यह भी है कि वह दस्तकारी को उस शिक्षा-प्रणाली में ठीक तरह बिठा दे जिसका उद्देश्य बच्चों को सर्वांगीण शिक्षा देना है।

कला की योजना तैयार करने मे कलाकार को पुस्तकों के रूप में इन बातों को सग्रह करना पडेगा: बुनियादी शिक्षा मे कला का स्थान, बुनियादी दस्तकारियों में चित्रकला की शिक्षा, स्थानीय शैलिया और ढंग, नकशे, लौकिक कला का विवरण। इनके आधार पर उसे पाठ भी बनाने होंगे। इसके अलावा उसे नीचे लिखे विषयों की पुस्तको के लिए चित्र इत्यादि भी बनाने होंगे—

(१) कपडे पर बेलबूटों का काम।
(२) कपड़े पर छपाई।
(३) चमडे पर चित्रांकन और बेलबूटे बनाना।
(४) आभूपणो पर चिताई या मीनाकारी।
(५) मिट्टी के बरतनों की सजावट।
(६) गुड़ियॉ बनाना।
(७) पुस्तकों को सचित्र करना।

(८) रगभूमि की सजावट ।

(९) अल्पना और त्यौहारो पर घरों की सजावट ।

(१०) प्रदर्शिनी ।

(११) इमारते बनाना और गाँवों में मकानों का ढंग ।

(१२) जीवन, यात्रा, इत्यादि के विवरण ।

(१३) ज्ञान और विज्ञान ।

(१४) चित्रकला और ड्राइंग ।

परन्तु बुनियादी शिक्षा के कलाकार का काम यहीं समाप्त नहीं हो जाता । उसे दूसरे महत्वपूर्ण पहलुओ को भी दृष्टि में रखना होगा । पहली बात तो यह है कि कला का हरेक केन्द्र इस तरह सजाया जाय कि उससे देखने वाले को सारी योजना का अर्थ और उसकी शिक्षा संबंधी संभावनाओ का बोध हो जाय । उसकी बाहरी सजावट एक सास्कृतिक केन्द्र के अनुरूप होनी चाहिए । दूसरे, हर प्रातीय केन्द्र मे एक स्थायी प्रदर्शिनी होनी चाहिए जो शिक्षा मे दिलचस्पी रखने वालो के लिए और साधारण जनता के लिए एक परिचायक केन्द्र (Information Bureau) का काम दे । तीसरे सब केन्द्रों में एक-एक गश्ती प्रदर्शिनी की भी व्यवस्था की जाय । इसके लिए तम्बुओ पर बनावटी रगो (Aniline dyes) से या दीवारों पर चित्रकारी करने के रंगो (Egg tempera) से दस्तकारियो की क्रियाओं के और अनुबन्ध पाठो के चित्र व नकशे बनाये जाय । तह करके रक्खी जा सकें ऐसी आलमारियों मे कला और दस्तकारी के आदर्श नमूने रक्खे जायं । ये गश्ती नुमायशें गावों में ज्ञान का प्रकाश फैलाती हुई घूमेंगी । इनकी रचना और आयोजन खूब सोच-विचार के बाद होना चाहिए । चौथे, बुनियादी स्कूलो को सजाने का काम भी क़ायदे के साथ हाथ मे लिया जाना चाहिए । इस सजावट में स्कूल की स्थानीय परिस्थिति का ध्यान रखना जरूरी होगा और इस कारण से हर स्कूल की सजावट भिन्न प्रकार की होगी । अगर किसी सघन हलके मे पचास स्कूल हो तो इनको सजाने मे अलग-अलग शैलियों और ढंगों का सहारा लिया जा सकता है और ये स्कूल अपनी-अपनी सजावट की चीज़ो को आपस में बदल-बदल कर बहुत लाभ उठा सकते हैं । इस तरह गावो मे कला के बहुत से अंगो का प्रवेश हो सकता है ।

सजावट की इस योजना मे बहुत कम खर्च होगा। देशी रग और मसाले बहुत सस्ते पडेंगे और सजावट का काम स्कूल के शिक्षक और बच्चे गाव के लोगो की सहायता से कर सकेंगे। इससे बचत तो होगी ही, लेकिन साथ ही बच्चो को और गाव के लोगो को यह शिक्षा मिलेगी कि कोई काम किस तरह किया जाता है, किसी कल्पना की रूपरेखा कैसे बनायी जाती है और उसके अनुसार काम कैसे किया जाता है, और किसी योजना को पूरी बारीकियों के साथ किस तरह पूरा किया जाता है। इन कामो के द्वारा बुनियादी शिक्षको को यह लाभ होगा कि वे बच्चों के सामने वास्तविक उदाहरण रख सकेंगे।

अन्त में मैं इतना ही कहूँगा कि यदि हमे बुनियादी शिक्षा के उद्देश्य के सब पहलुओं को प्राप्त करना है, तो इसमें कलाकार को अपना कर्तव्य व्यावहारिकता के साथ पूरा करना पडेगा।

सातवां भाग

बुनियादी तालीम की प्रदर्शिनी

प्रदर्शिनी के कुछ सस्मरण

प्रदर्शिनी के कुछ संस्मरण

(प्रभाकर दिवाण)

बुनियादी तालीम की दूसरी कॉन्फ्रेंस के साथ बुनियादी तालीम की एक छोटी नुमाइश भी रक्खी गई थी।

नुमाइश की सजावट जामिया मिल्लिया के ट्रेनिंग स्कूल के विशाल भवन में की गई थी। लाल ईंटो की दोमजिली वह ऊँची इमारत, उसकी सफेद किवाडों वाली वे चौड़ी खिड़कियां और उसका वह खोह के माफिक छोटा गोल दरवाजा खुद ही एक नुमाइश की चीज थी। इमारत के सामने लाल मुरुम की पगडंडियों के बीच पत्तियों से हरा-भरा, फूलों से रंग-बिरंगा, ज्यामिट्री की तरह-तरह की शकलें और गमलों से सजाया हुआ छोटा बगीचा भी कम नुमाइशी नहीं था। बगीचे के दोनों ओर दस्तकारी के सफेद सायबान (Sheds) थे और उनके सामने थोडे फासले पर कॉन्फ्रेन्स का शामियाना तना हुआ था।

१२ अप्रैल १९४१ की शाम को मिस्टर जे. सी. चटर्जी, सुपरिन्टेन्डेन्ट ऑफ ऐज्युकेशन, देहली, और वाइस-चान्सलर, आगरा युनिवर्सिटी ने, नुमाइश का उद्घाटन किया। नुमाइश खोलने के लिए मिस्टर चटर्जी से अर्ज करते हुए डॉ. जाकिर हुसेन ने नुमाइश का थोडे में सिलसिलेवार बयान किया और कहा कि मिस्टर चटर्जी को और उनके जैसे तालीम का काम करनेवाले दूसरे लोगों को, जिनका बुनियादी तालीम से खास ताल्लुक नहीं है, इस नुमाइश के देखने से यकीन हो जायगा कि बुनियादी तालीम का काम करनेवाले अपना वक्त फ़िजूल बरबाद नहीं कर रहे हैं, और हालाकि बुनियादी तालीम का काम बिलकुल नया है, उन्होंने कुछ ठोस काम किया है।

इसके बाद मिस्टर चटर्जी ने अपनी तकरीर में कहा, "नुमाइश में रक्खी हुई चीजें देखकर मैं प्रभावित हुआ हूँ। तालीम का पुराना तरीका हद दर्जे का यान्त्रिक हो गया है। लेकिन मैं कह सकता हूँ कि बुनियादी तालीम ने बच्चों की शख्सियत को बढ़ाने का खासा मौका दिया है और उन्हें तालीम के पुराने जकड़-बन्दों से छुडाने में काफ़ी कामयाबी हासिल की है। नई तालीम की दूसरी खासि-

यत यह है कि उसने बच्चों और शिक्षकों दोनों को काम में लगाया है। नुमाइश में रक्खे हुए उनके चार्ट व चीज़ों से कोई भी कह सकता है कि बुनियादी तालीम का प्रयोग बहुत सोच-विचार, खोज और सावधानी से चलाया जा रहा है।" आखिर में मिस्टर चटर्जी ने कहा कि उन्हें यह देखकर बहुत खुशी हुई कि बुनियादी तालीम में कई तरह के हुनर और दस्तकारियों से काम लिया जा रहा है और बुनियादी तालीम, जैसा कि कुछ लोगों का ख़याल है, कताई का दूसरा नाम नहीं है।

दरवाज़े से अन्दर जाते ही बाँई तरफ़ के पहले कमरे में कश्मीर और जम्मू के बुनियादी स्कूलों की चीज़ें सजाई गई थीं। हिमालय की चोटियों की तरह काश्मीर के हुनर और ज़हन भी ऊँचे रहे हैं, इसका सबूत यहाँ मिले बिना नहीं रहता था। बच्चों और शिक्षकों की बनाई हुई कागज़, दफ़्ती, लकड़ी, मिट्टी, चमड़े और सूत की चीज़ें, तसवीरें और चित्र बहुत ही खूबसूरत थे। बच्चों का कता हुआ सूत, उनके लिखावट के नमूने और उस्तादों के बनाए हुए पाठ भी अच्छे थे। लेकिन काश्मीर की ख़ास बात उसकी दस्तकारी की चीज़ें ही थीं। एक-से-एक खूबसूरत चीज़ों से यह कमरा इस तरतीब से सजाया गया था कि देखनेवाले को दस्तकारियों के म्यूज़ियम का अंदेशा होता था। इसमें और एक ख़ास बात यह थी कि चीज़ों की सजावट में तरह-तरह के रंगों और उनकी छटाओं को कारीगरी के साथ और आज़ाद हो कर बच्चों और शिक्षकोंने इस्तेमाल किया था।

दूसरे कमरे में जामिया ट्रेनिंग स्कूल की चीज़ें थीं। उनकी गत्ते, फ्रेट और लकड़ी के काम की चीज़ें तालीमी नज़र से देखने काबिल थीं। उनमें रोज़ के काम में आनेवाली काम की चीज़ें—तरह तरह की संदूकें, ट्रे वगैरा, बच्चों के खिलौने हाथी, ऊंट, बंदर, बिल्ली, वगैरा जिनमें उनकी कुदरती आदतें दिखाई गई थीं; बुनियादी दस्तकारियों के औज़ार—खुरपी, कैंची, चाकू, आरी, धुनकी, वगैरा; और महापुरुष और नेताओं के फ्रेट के चित्र—गांधीजी, अन्सारी, वगैरा काफ़ी शिक्षाप्रद थे। तालीम की मदद के लिए बनाए हुए चित्र और माडल भी इस कमरे की एक देखने लायक़ चीज़ थी। लेकिन सबसे बढ़िया चीज़ जो यहाँ देखने की थी वह थी समाजी तालीम और जनरल साइन्स की पढ़ाई के लिए बनाई हुई छोटी छोटी किताबें। वे किताबें हाथ से बहुत सुन्दर हरफ़ों में लिखी हुई और अच्छी-

अच्छी तसवीरों से सजाई हुई थीं। इन किताबों की विशेषता यह थी कि एक किताब में एक ही विषय लिया गया था। बुनियादी तालीम की पाठ्य पुस्तकों का सवाल हल करने की यह एक अच्छी कोशिश थी और इसमे दूसरे ट्रेनिंग स्कूलों के लिए काम की एक दिशा दर्साई गई थी। महेंजोदडो के घर का मॉडल और वहाँ के सिक्कों के नमूने भी अच्छे थे। यहीं जामिया मे तैयार की हुई फौटेनपेन की स्याही, सुगन्धित तेल, पोमेड, वगैरा प्रदर्शित करने और बेचने के लिए रक्खे गये थे।

तीसरे कमरे में बुनियादी स्कूलो का सामान था। शुरू मे तालीमी मरकज करौलबाग़, देहली, के बच्चों और शिक्षकों की चीजें थीं। पहले दरजे के बच्चो के बनाये हुए अबरी काग़ज और क्रेयान की तसवीरें और कापियों पर बनाए हुए डिज़ाइन देखने लायक थे। बच्चो के इकट्ठे किए हुए अलग-अलग विषयों के चित्र संग्रह अच्छे थे। पढ़ाई की मदद के लिए शिक्षकों के बनाए हुए पाठ, चित्रमय कहानियाँ और मुख्तलिफ ज़मानों के चित्र वग़ैरा भी काफी शिक्षाप्रद थे। पाचवें छठे दरजों के बच्चों की बनाई हुई गत्ते की चीज़ें विशेष सुन्दर थीं। इसके बाद बुनियादी स्कूल, पिलानी, के सचित्र पाठ, रुई, कपास, सूत, दरी और आसन के नमूने रक्खे हुए थे। इनमे पिलानी के दस्तकारी की आमदनी के आकड़े ख़ास कर जानने लायक थे। उसीके साथ रायपुर डिस्ट्रिक्ट कौंसिल के बुनियादी स्कूलों के बच्चों के सूत की बनी हुई रंगीन और सादी खादी रक्खी हुई थी। पास में ही बुनियादी स्कूल, सेवाग्राम, के कताई के चार्ट लगे हुए थे, जिनमें साल–भर के काम के माहवारी आकडे दिए गए थे। हर माह सूत की पैदाइश, कातने की गति, कताई–धुनाई से आमदनी वगैरा बातें इनमें बहुत बारीकी से दिखाई गई थीं, जिनसे बुनियादी दस्तकारी के आर्थिक पहलू पर अच्छी रोशनी डाली गई थी। साथ ही बच्चों के सूत की खादी भी प्रदर्शित की गई थी, जिससे पहले दरजे के बच्चों के सूत से अच्छी, मजबूत और सुन्दर खादी बन सकती है, यह साबित होता था। इसीके नजदीक सिवनी के प्रैक्टिसिंग स्कूल का प्रदर्शन था जिसमें सूत और खादी के नमूने, दफ़्ती की तख्तियाँ और हस्तलिखित मासिक–पत्र आदि चीज़ें थीं।

चौथे कमरे विजय विद्या-मदिर, अवधा, का प्रदर्शन था। इसमें बच्चों की इकट्ठी की हुई डाक की टिकटें, चिड़ियो के पर, रंग-बिरंगे पत्थर और पेड़ों के

के तालीमी काम की सराहना किये बिना नहीं रह सकते थे। इनमें स्कूल और कॉलिजों के विद्यार्थियों के लिए हर विषय की किताबें और आम लोगों के पढ़ने की पुस्तकें भी थीं। डॉ. जाकिर हुसैन ने अपनी तकरीर में कहा कि अदबी किताबों का यह इकट्ठा जमाव देख कर उन्हें भी यह पहली दफा मालूम हुआ कि उन्होंने इतनी किताबें प्रकाशित की है।

इसके अलावा दस्तकारियों के सायबानों में गत्ते और कागज का काम और कताई के काम की असली नुमाइश (Demonstration) भी रक्खी गई थी।

इस तरह सारी नुमाइश बुनियादी तालीम के काम का एक सच्चा खाका था। दस्तकारी के जरिये तालीम देने के तजुर्बे अलग-अलग सूबों में किस तरह किये जा रहे हैं, उसका इस नुमाइश में अच्छा प्रदर्शन हुआ। बुनियादी तालीम के उसूलों पर हर सूबा अपने कुछ निराले ढंग से अमल कर रहा है और इसमें बच्चों और शिक्षकों की शख्सियत और जहन की आजाद तरक्की का मौका दिया जा रहा है। लेकिन तरह-तरह की दस्तकारियों का प्रदर्शन देख कर मेरे जैसे व्यक्तियों का इस तरफ़ ज़रूर ध्यान जाता था कि हम विविधता (Variety) के पीछे पड कर असली दस्तकारियों को दरगुज़र तो नहीं कर रहे हैं ? नुमाइश में कताई जैसी बुनियादी दस्तकारी का प्रदर्शन बहुत कम था और दस्तकारी के स्वावलम्बी और माली पहलू को दिखाने की कोशिश नहीं के बराबर थी। बुनियादी तालीम में काम करने वालों का ध्यान मैं इस तरफ खास तौर पर खींचना चाहता हूँ।

लेकिन तो भी कहना पडेगा कि नुमाइश शिक्षाप्रद और दर्शनीय थी और वह बुनियादी तालीम के काम करने वालों में नई कल्पनाएँ और उमंगे पैदा करने में कामयाब रही है।

नुमाइश में ज्यादातर लिखावट उर्दू में होने से उर्दू न जानने वाले लोग उसे अच्छी तरह नहीं देख सके। कान्फ्रेंस का काम–काज सुबह से लेकर शाम तक इस तरह बंधा हुआ था कि लोगों को नुमाइश देखने के लिए वक्त भी नहीं मिल सका। इसीलिए कान्फ्रेंस के आख़री दिन श्री काका कालेलकर ने कहा कि प्रदर्शनी इतनी आकर्षक थी और उसे देखने के लिए इतना कम वक्त दिया गया था कि हमारी हालत उस भूखे आदमी जैसी हो गई थी कि जिसके सामने बढ़िया मिठाइयों से भरी हुई थाली तो रक्खी हो लेकिन खाने की मुमानियत हो। इसलिए उन्होंने कहा कि आइन्दा से कान्फ्रेंस के कार्यक्रम मे नुमाइश देखने के लिए रोज़ एक घंटा ख़ास तौर पर रक्खा जाना चाहिए।

आठवां भाग

कांफ्रेन्स के निर्णय

सम्मेलन के प्रस्ताव

सम्मेलन के प्रस्ताव

१. सम्मेलन यह अनुभव करके खुश है कि सरकारी, गैर-सरकारी और निजी संस्थाओं के बुनियादी स्कूलों की रिपोर्टों से यह अनुमान किया गया है कि उनमें से हरएक के विचार में इस शिक्षा ने बच्चों के स्वास्थ्य, उनके बर्ताव और मानसिक विकास को बहुत अच्छा बना दिया है। बुनियादी स्कूलों के बच्चे ज्यादा फुर्तीले, खुश और अपने ऊपर भरोसा करने वाले हैं, अपनी बात को अच्छी तरह कह सकते हैं, उनमें मिल-जुल कर काम करने की आदतें पैदा हो रही हैं, वे समाजी बन्धनों और जकड-बन्दों से स्वतन्त्र होते जा रहे हैं। शुरू में हर नये काम में जो दिक्कतें होती हैं, उन्हें देखते हुए हम इन नतीजो से बहुत खुश हैं और उम्मीद करते हैं कि भविष्य में इससे भी अच्छे नतीजे निकलेंगे।

२. सम्मेलन को बहुत खेद के साथ यह कहना पड़ता है कि उड़ीसा की सरकार ने बहुत कम दिन के प्रयोग के बाद बुनियादी स्कूलों के बन्द कर देने का निश्चय कर दिया। सम्मेलन के विचार में यह निश्चय बहुत जल्दबाजी और नासमझी का है। वह यह भी कहना चाहता है कि २८ फरवरी १९४१ का सरकारी हुक्म ग़लत और धोखे में डालने वाला है। बुनियादी शिक्षा का अच्छी तरह प्रयोग किये बिना यह कह देना कि उड़ीसा मे यह प्रयोग असफल रहा, बड़ी हठ-धर्मी की बात है। इस सिलसिले में तालीमी संघ के प्रधान ने जो बयान दिया है, सम्मेलन उसका समर्थन करता है। इसी सिलसिले में सम्मेलन, उत्कल (उडीसा) के बुनियादी तालीम के बोर्ड की तारीफ़ करता है, जिसने प्रयोग को जारी रखने का काम शुरू किया है। सम्मेलन इस बोर्ड के साथ अपनी पूरी सहानुभूति और मदद प्रगट करता है।

३. सम्मेलन उन सरकारों, लोकल बोर्डों और निजी सस्थाओं की कोशिशों का स्वागत करता है, जो बुनियादी तालीम के बताये हुए मार्गों पर चल कर, बुनियादी शिक्षा के काम को, कहीं छोटे पैमाने पर और कहीं बडे पैमाने पर, फैलाने में लगे हुए हैं। लेकिन काम क तरीक़ों में जगह-जगह कुछ महत्वपूर्ण और कुछ मामूली फ़र्क़ पैदा हो गए हैं। इसलिए सम्मेलन चाहता है कि कम-से-कम

थोड़े से स्कूल बिलकुल उन्ही मार्गों पर चलाये जायें जो योजना मे बताये गये है। और इसलिए संस्थाओं से और ख़ासकर तालीमी सघ से प्रार्थना करता है कि कुछ ऐसे स्कूल भी स्थापित किये जाय ताकि कुछ वैज्ञानिक नतीजे निकाले जा सकें।

४. यह सम्मेलन विश्वास के साथ यह बात जानता है कि बुनियादी शिक्षा की उन्नति के लिए अच्छी और सहानुभूतिपूर्ण निगरानी बहुत ज़रूरी है। इसलिए यह सिफ़ारिश करता है कि तमाम सस्थाएं जो इस काम मे लगी हुई हैं, सुपरवाइजरों की ट्रेनिंग का जल्दी से जल्दी इन्तजाम करे, ताकि ये सुपरवाइज़र बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्त से परिचित होकर इस नये प्रयोग मे मार्ग दिखाने का काम कर सकें।

५. चूंकि बुनियादी तालीम का पाठ्यक्रम अपनी असली या थोडी बहुत बदली हुई सूरत मे तीन साल से ज्यादा से व्यवहार में आ रहा है, इसलिए सम्मेलन का ख़याल है कि इस अनुभव के आधार पर ऐसी बातें जमा की जायें, जिनसे पता चल सके कि इसमे कुछ चीजों का बदलना और बढाना जरूरी है या नहीं। पाठ्यक्रम एक बढती हुई और लचकदार चीज है, इसलिए शिक्षा के विशेषज्ञों को इस पर बराबर नजर रखनी चाहिए। इसलिए सम्मेलन सिफारिश करता है कि विभिन्न संस्थाएं और खासकर तालीमी सघ को अपनी व्यावहारिक खोज शुरू करनी चाहिए कि उसकी मदद से पाठ्यक्रम की जॉच-पडताल के बाद उसे बच्चों के जीवन के निकट लाया जा सके, और शिक्षकों की रहनुमाई की जा सके कि वे अपने काम के परखने का क्या मान रक्खें।

६. अलग-अलग जगहो की रिपोर्टों मे पता लगता है कि अनुबन्ध की शिक्षा में बडी गुजाइश है। लेकिन यह सम्मेलन पहले की तरह अब भी इस बात पर ज़ोर देता है कि अनुबन्ध को मशीन की तरह काम मे नहीं लाना चाहिये। बल्कि बुनियादी दस्तकारी, बच्चों और उनके चौगिर्द तीनों चीज़ो से पूरी पूरी मदद लेनी चाहिये।

७. सम्मेलन का खयाल कि बुनियादी तालीम के शिक्षकों को अनुबन्ध के काम मे बडी मदद मिलेगी अगर अच्छे शिक्षकों की डायरियों को सम्पादन करके उन्हे छाप दिया जाय। इसालिये सम्मेलन का ख़याल है कि कुछ स्कूल खास तौर पर अच्छे शिक्षकों के हाथ मे दिये जाये और उनके रोजाना काम की रिपोर्ट को जमा करके

छपवा दिया जाय। इसी तरह बच्चों और शिक्षकों की ज़रूरत के लिये भी पढ़ाई का काफ़ी सामान छापने की ज़रूरत है।

८. यह सम्मेलन बुनियादी दस्तकारी कमेटी के बनाये हुए कताई के उस पाठ्यक्रम को मंजूर करता है, जो तीन दर्जों और शिक्षकों के लिये बनाया गया है।

९. सम्मेलन का खयाल है कि जिन जगहों पर पुराने स्कूल बड़ी संख्या मे बुनियादी स्कूल बनाये जा रहे हैं, वहा के मौजूदा नार्मल स्कूलो और ट्रेनिंग सेन्टरों मे बुनियादी शिक्षा की ज़ुरूरत के अनुसार परिवर्तन होने चाहिये।

१०. सम्मेलन के खयाल मे बुनियादी स्कूलों में पॉच साल तक पढाने के लिए शिक्षकों के लिए कम से कम दो साल की ट्रेनिंग ज़रूरी है, यह ट्रेनिंग चाहे दो साल तक दी जाये या अलग-अलग एक-एक साल करके।

११. सम्मेलन पहले की तरह इस बार भी इस बात पर जोर देता है कि बुनियादी स्कूलों में कला की शिक्षा को ख़ास जगह दी जाय ताकि वह बुनियादी दस्तकारी के काम का एक ज़रूरी हिस्सा बन जाय।

परिशिष्ट भाग

(क) पहिले तीन दर्जों के लिए बुनियादी दस्तकारी कताई का पाठ्यक्रम

(ख) बुनियादी शिक्षकों के लिए कताई का पाठ्यक्रम

(ग) कॉन्फ्रेन्स में शामिल होने वाले प्रतिनिधियों की सूची

(क)

बुनियादी दस्तकारी कताई

का

पाठ्यक्रम

पिछले तीन बरसो मे हम लोग बुनियादी तालीम के पाठ्यक्रम पर अमल करने की कोशिश में लगे हुए हैं। इस अर्से मे शिक्षको के २२ ट्रेनिंग स्कूल और बहुत से बुनियादी स्कूल शिक्षकों और बच्चो की शिक्षा मे तरह तरह के तजरबे करते रहे। ये तजरबे ज्यादातर बुनियादी दस्तकारी कताई के जरिये से किये गये।

तीन साल के इन तजरबों की रोशनी में इस बात की जरूरत महसूस की गयी कि (१) बुनियादी दस्तकारी कताई के पाठ्यक्रम में ज़रूरत के मुताबिक कुछ बदलाव किये जॉय और (२) शिक्षकों की ट्रेनिंग के लिये कताई की दस्तकारी का एक तफसीलवार पाठ्यक्रम तैयार किया जाय।

यह काम हिन्दुस्तानी तालीमी सघ ने दस्तकारी के विशेषज्ञों की एक कमेटी के सुपुर्द कर दिया था। इस कमेटी ने जो संशोधित पाठ्यक्रम तैयार किया है वह नीचे दिया जाता है।

पाठ्यक्रम में जो बदलाव किये गये हैं उन्हें समझने से पहले कुछ बातें जान लेना ज़रूरी है।

(१) पिछले पाठ्यक्रम ने कुछ हलकों में यह गलत-फहमी पैदा कर दी थी कि यह पाठ्यक्रम दस्तकारी के काम के परिणाम और उनके आर्थिक पहलू पर ज्यादा जोर देता है। इस लिए यह बता देना ज़रूरी मालूम होता है कि दस्तकारी के काम में मज़दूरी का जिक्र करके जो आर्थिक आदर्श कायम किया गया था उसका मक़सद सिर्फ़ यह था कि उस दस्तकारी की अच्छाई का अन्दाज़ा लगाया जा सके, इसलिये कि मजदूरी काम के परिणाम और उसकी अच्छाई दोनों को देख कर दी जाती है। नये पाठ्यक्रम में इस ग़लत-फहमी को दूर करने की कोशिश की गयी है। काम का अन्दाज करने के लिये उसकी अच्छाई और

उसका परिमाण दोनों का खयाल रखने पर ज़ोर दिया गया है। शिक्षकों को सब से पहले विद्यार्थियों के काम की अच्छाई की तरफ ध्यान देना चाहिए और काम की रफ्तार और परिणाम को उसका एक कुदरती नतीजा समझना चाहिए। फिर भी शिक्षकों के लिए यह जान लेना जरूरी है कि दस्तकारी के काम से पूरा तालीमी फ़ायदा उठाने के लिये उसकी अच्छाई और उसके परिणाम दोनों पर बराबर ध्यान देना ज़रूरी है।

(२) दस्तकारी की लिखतें रखने को भी दस्तकारी की तालीम का एक ज़रूरी हिस्सा समझा गया है और यह डर है कि इन लिखतों को रखने में भी लोग बिना सोचे समझे मशीन की तरह काम करना शुरू न कर दें। इसलिए शिक्षकों को इस बात की तरफ बहुत ज्यादा ध्यान देना चाहिए कि वे दस्तकारी की लिखतों को भी दस्तकारी के काम और मातृभाषा, हिसाब, साधारण विज्ञान व ड्राइंग के बीच अनुबन्ध का एक खास जरिया बनावें।

(३) पिछले पाठ्यक्रम के बारे में एक खास शिकायत यह भी थी कि उसमें दस्तकारी के लिए बहुत ज्यादा वक्त रक्खा गया है। नये पाठक्रम में यह वक्त घटा कर पहले दर्जे में दो घंटे और दूसरे दर्जे में ढाई घंटे कर दिया गया है। यह बात कि वक्त को किस तरह बांटना चाहिए, अलग–अलग संस्थाओं के अपने–अपने तजर्बों और ज़रूरतों पर छोड दी गयी है।

(४) बुनियादी दस्तकारी की कुछ क्रियायें जैसे, बुनना, दस्तकारी के औज़ार बनाना, वग़ैरा भी पाठ्यक्रम में शामिल कर दी गयी हैं।

(५) तकली कताई के काम ने पिछले कुछ बरसों में बहुत ज्यादा तरक्क़ी करली है और इसका एक बाकायदा हुनर बन गया है। इसलिए पहले दो साल खास तौर पर तकली कताई के लिये रक्खे गये हैं और इस बात पर भी जोर दिया गया है कि तकली कताई ऊंचे दर्जों में भी हर रोज़ कम से कम पढाई की एक घन्टी (period) तक जरूरी करायी जाय।

(६) तीसरे दर्जे में यरवडा या स्थानीय चर्खे की जगह एक नयी तरह का चर्खा धनुष-तकुवा इस्तेमाल करने की सलाह दी गयी है। यह चर्खा पोलेन्ड के एक इन्जीनियर मिस्टर मॉरिस फ्रीडमैन ने ईजाद किया है। यह आसान भी है

और सस्ता भी और हर जगह सिर्फ चार आने से लगाकर आठ आने तक में बनाया जा सकता है। इसे बच्चे भी आसानी से चला सकते है।

पहली कक्षा

पहली छमाही—काम का वक्त २ घंटे

इस छमाही में नीचे लिखे हुए काम सिखाये जायँ

(१) तकली पर कातने के नीचे लिखे तरीके सिखाये जायं —

(अ) पालथी, ज़मीन–चुटकी, हवा-लपेट

(ब) पालथी, हवाई–चुटकी, हवा-लपेट

(स) पालथी, ज़मीन-चुटकी जमीं-लपेट

(द) पालथी, हवाई-चुटकी, जमीं-लपेट

इन तरीकों के अभ्यास अंगूठा और पहिली अंगुली, अंगूठा और बीच की अंगुली से अलग–अलग कराने चाहिए। तकली पर शुरू मे एक महीना सिर्फ बायें हाथ से कातना सिखाया जाय—बाद में दोनो हाथों से बारी-बारी। दायें और बांये हाथों से कातते वक्त सूत को बट दायीं तरफ ही देना चाहिए।

(२) मुर्री लगाना

मुर्री लगाना सिखाने के लिये माडी लगाये हुये धागे काम में लिये जायँ। मुर्री लगाने की खूबी समझाने के लिए अगर हो सके तो बच्चों को बुननेवालों के यहा ले जाकर नली भरना, बुनना, वगैरह काम दिखाने चाहिए।

(३) अटेरन पर सूत अटेरना

दोनो हाथों से बारी-बारी अटेरने का काम सिखाना चाहिए। अटेरने का काम खड़े-खड़े और गिनती के साथ ख़ास तौर पर करना चाहिए।

(४) भिगोकर सूत सुखाना, साथी बाधना, गुंडी बनाना (बटना, मोड़ना और फंसाना)।

(५) सूत की समानता और कस पहचानना।

(६) कताई के काम और सामान का ज़बानी बयान।

छमाही के अन्त में काम का आदर्श

सबसे पहले सूतकी समानता का ख़याल रखना चाहिए ।

(१) सूतकी कम से कम समानता ६०% होनी चाहिए ।

(२) सूतकी कम से कम मजबूती ४०% होनी चाहिए ।

(३) तकली पर कातने की गति दोनों हाथो को एकसा समय देकर और अटेरना छोड कर, आध घंटे में १० नंबर सूत के ३० तार ।

(४) अटेरने की रफ्तार फी मिनट में ८ तार ।

रोजाना औसत काम

(१) २ घंटे में १० नंबर के ७० तार ।

(२) कताई की ज्यादा से ज्यादा छीजन ५% ।

दूसरी छमाही—काम का वक्त २ घन्टे

(१) रुई खोलना (तुनाई में किया जानेवाला पहिला काम) दो तोला रुई खोलना ।

(२) तकली पर कातना ।

(अ) तकली पर कातने के पहिली छमाही के तरीक़ों का अभ्यास कराया जाय ।

(ब) खडी, हवाई-चुटकी, हवा-लपेट ।

(ज) कताई का ज़बानी व लिखित हिसाब रखना ।

दूसरी छमाही के अन्त मे काम का आदर्श

(१) सूत की समानता कम से कम ६०% । समानता का सबसे पहिले ख्याल रखना चाहिए ।

(२) सूत की मजबूती कम से कम ४०% ।

(३) तकली पर कातने की रफ्तार दोनों हाथों को एकसा समय देकर और अटेरना छोड़कर १ घण्टे में १० नम्बर सूत के ९० तार ।

रोज़ाना औसत काम

(१) एक घण्टे में १२ नम्बर के ५० तार ।

(२) कताई की ज्यादा से ज्यादा छीजन ५% ।

दूसरी कक्षा

पहली छमाही—काम का वक्त २॥ घन्टे

इस छमाही में नीचे लिखे काम सिखाये जायें:—

(१) बुनने की चटाई बनाना। चटाइया बाँस की तैयार खपच्चियों, तैयार सरकण्डों, वग़ैरा से बनायी जायें।

(२) तुनना और धनुष-धुनकी से धुनना। तीन तोला रुई तुन कर धुनना और पोनी बनाना।

(३) धनुष-धुनकी सजाना।

(४) हाथ-धुनकी से धुनना। कातने के लिए जितनी रुई धुनना जरूरी हो उतनी धुनना।

(५) पोनी बनाना—एक तोले में १६ पोनी बनानी चाहिए। पोनी की मोटाई, सख्ती या नर्मी और लम्बाई क़ायदे के मुताबिक़ एकसी होनी चाहिये।

(६) तकली पर नीचे लिखे हुए तरीकों से कातना .—

(अ) जाघ-हथेली, ज़मीं-लपेट

(ब) पिंडली-हथेली, जमीं-लपेट

(ज) तलवा-हथेली, ज़मीं-लपेट

इस छमाही के अन्त में काम का आदर्श

(१) सूत की समानता ६०% होनी चाहिये। समानता की तरफ़ ख़ास तौर पर ध्यान देना चाहिए।

(२) मजबूती कम से कम ५०%।

(३) धुनने की रफ्तार, पोनी बनाने का वक्त मिला कर (१ तोला में १६ पोनी) १ घंटे मे २½ तोले।

(४) सिर्फ पोनी बनाने की रफ्तार आधा घण्टे मे २½ तोला यानी ४० पोनियाँ।

(५) तकली पर कातने की रफ्तार दोनों हाथों को एकसा समय देकर और अटेरना मिला कर १ घण्टे मे १२ नम्बर के १०० तार।

रोजाना औसत काम

(१) कताई—एक घण्टे में १२ नम्बर के ७५ तार।

(२) धुनाई—एक घण्टे में १½ तोला (पोनी बनाना मिला कर)

(३) कताई की छीजन ज्यादा से ज्यादा ४%।

दूसरी छमाही—काम का वक्त २॥ घन्टे

(१) नीचे लिखी हुई चीज़े हाथ से बनाना।

(अ) बास की खपच्चियों से धनुष-धुनकी बनाना।

(ब) बास की खपच्चियो से लटकन बनाना।

(ज) रस्सी बनाना। मूज, घास, वग़ैरा स्थानीय चीज़ो से रस्सी बनाना। १० गज़ रस्सी बनाना।

(२) तुनना और धनुष्र-धुनकी से धुनना। ४ तोला रुई तुन कर धुनना और पोनी बनाना।

(३) तकली पर कातना।

(४) अपनी और क्लास की (अगर हो सके) लिखतें रखना।

इस छमाही के आख़िर में काम का आदर्श

(१) सूत की मज़बूती कम से कम ५०%

(२) धुनने की रफ्तार पोनी बनाना मिला कर (१ तोले में १६ पोनिया) १ घण्टे में तीन तोला।

(३) सिर्फ पोनी बनाने की रफ्तार आध घण्टे में ३ तोला, यानी ४८ पोनिया।

(४) तकली पर कातने की गति दोनों हाथों की एकसा समय देकर और अटेरना मिला कर १ घण्टे में १२ नम्बर के १२० तार।

रोज़ाना औसत काम

(१) कताई—एक घंटे में १२ नम्बर के ९० तार।

(२) धुनाई—एक घण्टे में पोनी बनाना मिला कर २ तोले।

(३) कताई की छीजन ज्यादा से ज्यादा ४%।

तीसरी कक्षा

पहली छमाही—समय ३ घण्टे

इस छमाही में नीचे लिखे हुए काम सिखाये जायें —

(१) बास की तकलियाँ बनाना (नाक वाली और बिना नाक वाली)। तकली की चकती मिट्टी, खपरैल, पत्थर, वगैरा स्थानीय चीजों से बनाई जाय। पाच तकलिया बनाना।

(२) टुनना और धनुष-धुनकी से धुनना। ४ तोला रुई तुन कर धुनना और पोनी बनाना। तुनाई की पोनी तकली पर सूत कातने के काम में लानी चाहिए।

(३) धनुष-तकुवे पर दाहिने हाथ से कातना।

(४) धनुष-तकुवा साफ करना, तेल देना और पट्टे मे राल लगाना।

(५) तकली पर दोनों हाथों से कातना (वक्त ४० मिनट रोजाना)।

(६) इस छमाही मे बच्चों को अपनी और क्लास की लिखतें रखना और कताई का रोजनामचा [लागबुक] लिखना सिखाना चाहिए। तकली-कताई और चर्खा-कताई की लिखतें अलग-अलग रखनी चाहिए।

(७) कपास की फिरकिया बनाना।

(८) इस छमाही में बच्चों को सूबे की हर तरह की और हिन्दुस्तान की ख़ास-ख़ास कपासो की पहचान सिखायी जाय। बच्चों को यह भी बताना चाहिए कि स्थानीय कपास में रेशों की लम्बाई कितनी होती है और उनसे किस नम्बर का सूत निकल सकता है।

इस छमाही के आख़िर में काम का आदर्श

(१) सूत की समानता ७०% होनी चाहिए।

(२) सूत की मज़बूती कम से कम ५०%।

(३) धुनने की गति पोनी बनाना मिलाकर १ घंटे मे ३$\frac{1}{2}$ तोले।

(४) धनुष-तकुवे पर कातने की गति परतेना मिलाकर २ घटे में १४ नबर के ४०० तार।

रोजाना औसत काम

(१) तकली पर कातना (अटेरना मिलाकर) ४० मिनट में ६० तार।

(२) धनुष-तकुवे पर कातना—१ घंटे मे १ लट्टी (१६० तार)।

दूसरी छमाही—समय ३ घन्टे

इस छमाही में नीचे लिखे हुए काम सिखाये जायें:-

(१) कपास साफ़ करना।

(२) कपास ओटना।

(अ) अँगुलियों से बिनौले निकालना।

(ब) हाथ-ओटनी से ओटना।

(३) तुनना और धनुप-धुनकी से धुनना।

(४) इस छमाही मे बच्चों को सूत का नंबर निकालने का तरीक़ा सिखाया जाय।

गुर :— $\frac{\text{तारों की सख्या}}{\text{सूत का वज़न (आनो मे)}}$ = सूत का नंबर

इस छमाही के आख़िर में काम का आदर्श

(१) सूत की समानता ७०% होनी चाहिए।

(२) तकली के सूत की कम से कम मजबूती ५०%।

(३) धनुष-तकुवे के सूत की कम से कम मज़बूती ५०%।

(४) तकली पर कातना—अटेरना मिलाकर १ घटे में १२ नंबर के १२० तार।

(५) धनुष-तकुवे पर कातना—परेतना मिलाकर २ घंटे मे १६ नं. के ५२० तार।

(६) धुनने की रफ्तार—पोनी बनाना मिलाकर १ घटे में ४ तोला।

रोजाना औसत काम

(१) तकली पर कातना—पहली छमाही के मुताबिक।

(२) धनुष-तकुवे पर कातना—१ घंटे मे १६ नंबर के २०० तार।

(३) धुनना-पोनी बनाना मिलाकर १ घंटे मे ३ तोला।

(४) कताई की छीजन ४%।

कताई के सिलसिले मे आने वाले यन्त्र-शास्त्र संबंधी सवाल

कक्षा पहली —पुराने पाठ्यक्रम के अनुसार।

कक्षा दूसरी —धनुष-धुनकी में कमान (स्प्रिंग) का उपयोग।

(२) तात और रस्सी में कंपन और आवाज़ क्यों और कैसे पैदा होते हैं।

(३) दाहिनी और बायीं गति का ज्ञान। बच्चों को यह ज्ञान साधर्म्य और वैधर्म्य दृष्टांतों के द्वारा व्यावहारिक रूप से दिया जाय।

(४) रस्सी बनाने के लिये उलटा और सीधा बट क्यों देना चाहिए ?

(५) धुनने से कपास के रेशे चमकीले क्यों होते हैं ?

कक्षा तीसरी:—(१) धनुष-तकुवे के पट्टे पर राल क्यों लगानी चाहिए ?

(२) धनुष-तकुवे पर हलकी या भारी चकती लगाने से गति पर क्या असर होगा ?

(३) धनुष-तकुवे में तेल क्यों देना चाहिए ?

(४) तेल देने पर तकुवा आसानी से क्यों चलता है ?

इस सिलसिले मे बच्चों को संघर्ष का सिद्धान्त सिखाना। चाहिए उन्हें दर्वाज़े के कब्जे, झूले, और पानी देने की घिर्री मे तेल देने का परिणाम भी दिखाना और समझाना चाहिए।

(५) कमान पर अधिक कसी हुई या अधिक ढीली बांधी हुई तात का धुनने पर क्या असर होता है ?

(ख)

बुनियादी शिक्षकों की ट्रेनिंग के लिये कताई का पाठ्यक्रम

पहले पाँच दर्जों को पढ़ाने के लिए

पाठ्यक्रम को दो हिस्सों में बाँटा गया है। पहले हिस्से को एक साल और दूसरे को एक साल, इस तरह पाठ्यक्रम को दो साल दिये गये हैं। पहले साल में पहली, दूसरी व तीसरी कक्षाओं का पाठ्यक्रम पूरा किया जायगा और दूसरे साल में चौथी और पाँचवी कक्षाओं का पाठ्यक्रम पूरा किया जायगा।

ऐसी अपेक्षा की जाती है कि पहले साल की ट्रेनिंग प्राप्त करने के बाद शिक्षक दो साल बुनियादी स्कूल में प्रत्यक्ष पढ़ाई का काम करेंगे और उसके बाद दूसरे साल का पाठ्यक्रम शुरू करेंगे।

काम के दिन—साल में स्कूल के काम के दिन २०० होंगे। वे इस तरह बाँटे जायेंगे।

(१) ३० दिन शनिवार के जो आदर्श-पाठ आदि के लिये दिये जायेंगे।

(२) १५ दिन प्रत्यक्ष पढ़ाने के अभ्यास के लिए (प्रैक्टिस टीचिंग)।

(३) पाँच दिन भ्रमण, सैर आदि के लिये दिये जायेंगे।

इस तरह २०० में से ५० दिन निकल जायेंगे और दस्तकारी के लिये कुल १५० दिन मिलेंगे। ऐसा मान कर दस्तकारी का यह पाठ्यक्रम तैयार किया गया है।

रोजाना समय विभाग—कताई की शिक्षा के लिये रोज़ चार घंटे समय दिया जाय। उसमें से—

(१) तीन घंटे अमली काम

(२) बीस मिनिट लिखतें, हिसाब आदि लिखना

(३) चालीस मिनिट कताई के शास्त्रीय विषयों पर पाठ

पहला साल · अमली तालीम

इस साल नीचे लिखी क्रियायें सिखायी जायँ —

(१) कपास साफ़ करना।

छै सेर कपास साफ़ करना। समय ९ घंटे

विद्यार्थियों को साफ़ चुना हुआ कपास दिया जाय। ख़राब कपास नहीं देना चाहिए। ख़ास कर योग्य कपास का ज्ञान कराना कपास साफ़ करने का उद्देश है। थोड़ा ख़राब कपास भी अभ्यास के लिये दिया जाय।

(२) उंगलियों से कपास की फिरकियाँ बनाना। एक हज़ार फिरकियाँ यानी क़रीब छै तोले कपास की फिरकियाँ बनाना। समय १२ घंटे

(३) ओटना–(क) उंगलियों से ओटना।

बनाई हुई एक हज़ार फिरकियों के बिनौले निकालना समय ८ घंटे

(ख) सलाई ओटनी से ओटना

आधा सेर कपास ओटना। समय ८ घंटे

(ग) हाथ-ओटनी से ओटना।

पाँच सेर कपास ओटना। समय ६ घंटे

(४) तुनना (नालवाड़ी तरीके से) यानी रुई खोलना, तोड़ना और रेशे सीधे करना।

आठ तोले रुई तुन कर तैयार करना। समय २४ घंटे

(५) धुनना और पूनी बनाना।

(क) धनुष धुनकी से धुनना। तुनी हुई रुई धुन कर आठ तोले पूनी बनाना। समय १६ घंटे

(ख) छोटी धुनकी से धुनना।

(ग) पूनी बनाना। एक तोले की १६ पूनियाँ बनाना चाहिये। पूनी की मोटाई, लंबाई व कड़ाई शास्त्र के मुताबिक एक-सी होनी चाहिए।

(६) धुनकी सजाना। तांत लपेटना, काकर बांधना, तांत चढ़ाना व जीभ बिठाना।

(७) मुर्री लगाना। सौ मुर्रियाँ लगाना। समय ४ घंटे

सहूलियत के लिये माड़ी चढ़ाये हुये धागे मुर्री लगाने के अभ्यास के लिये काम में लेने चाहिए।

(८) नली और नला भरना।

२८ गुंडिया सूत उतारना। समय १४ घंटे

(९) कातना।

(क) उंगलियों से कातना—४० तार कात कर तकली पर लपेटना। उंगलियों से काते हुए धागे का बट दाहिनी तरफ होना चाहिए। समय ४ घंटे

(ख) तकली पर कातना। तकली पर कातने के नीचे लिखे तरीके सिखाये जायं —

१. पलथी जमीन चुटकी हवा लपेट
२. पलथी हवाई चुटकी हवा लपेट
३. पलथी जमीन चुटकी जमीं लपेट
४. पलथी हवाई चुटकी जमीं लपेट
५. खड़ी हवाई चुटकी हवा लपेट

इन तरीकों से दस गुंडिया सूत कातना।

ऊपर लिखे तरीकों से कातने का अभ्यास बीच की व पहली उंगलियों से अलग-अलग करना ज़रूरी है।

६. जाघ हथेली जमीं लपेट
७. पिंडली हथेली जमीं लपेट
८. तलवा हथेली जमीं लपेट

इन तरीकों से दस गुंडिया सूत कातना।

इस तरह तकली पर १० से १६ नंबर की कुल १० गुंडिया सूत कातना जिनका वज़न लगभग ६६ तोले होगा

कताई का समय (८ घंटों में १ गुंडी के हिसाब से) १६० घंटे
धुनाई का समय (१ घंटे में ३ तोले के हिसाब से) २२ घंटे

कुल समय १८२ घं०

(ग) धनुष-तकुवे पर कातना—

१२ नंबर की १० और १६ नंबर की १०, कुल २० गुंडिया सूत कातना जिनका वजन करीब ५८ तोले होगा।

कताई का समय (१ घंटे में सवा लट्टी के हिसाब से) ६४ घंटे

धुनाई का समय (१ घंटे ३ तोले के हिसाब से) २० घंटे

कुल समय ८४ घंटे

तकली और धनुष-तकुवे पर दोनों हाथ से अदल बदल कर और दोनों हाथों को एकसा समय देकर कातना चाहिए। दाहिने व बायें हाथ से कातते समय सूत को बट दाहिनी तरफ ही देना चाहिए।

(घ) अटेरन पर सूत अटेरना और परेते पर सूत परेतना।

दोनों हाथों से बारी-बारी से अटेरने का व परेतने का काम लेना चाहिए। सूत अटेरने का काम ख़ास कर खड़े-खड़े किया जाय।

(च) भिगो कर सूत सुखाना, जोग बांधना, लच्छी बनाना।

१०. कताई-धुनाई की नीचे लिखी चीज़े बनाना:-

(क) धनुष-धुनकी बनाना—बांस फाड़ कर फट्टे तैयार करना, धनुष बनाना, तांत चढ़ा कर धुनने के लिये तैयार करना।

समय ५ घंटे

(ख) लटकन बनाना—बांस के फट्टों से लटकन बनायी जाय।

समय ३ घंटे

(ग) धुनने की चटाई बनाना—चटाई बांस की छड़ियों से या सरकंडों से बनायी जाय।

समय ५ घंटे

(घ) रस्सी बनाना—सन, घास आदि स्थानीय चीज़ों से रस्सी बनायी जाय। रस्सी लटकन और चटाई बनाने के काम में लायी जाय। १५ गज़ रस्सी बनाना।

समय १० घंटे

(च) पूनी सलाई बनाना—बांस की छडियों से या लकडी से सलाई बनायी जाय।

समय २ घंटे

(छ) बांस की तकलियां बनाना—नाकवाली और बिना नाकवाली दोनों तरह की तकलियां बनायी जायं। चकती के लिए मिट्टी, खपरैल, पत्थर आदि स्थानीय चीज़ें काम में लायी जाय।

१० तकलिया बनाना । समय २० घंटे

(ज) धनुष-तकुआ बनाना—बांस-फट्टों से डंडी व धनुष बनाना, लकड़ी की पट्टी से मोढिया बनाना, चमड़े से पट्टा व चमरखे बनाना । पट्टे के लिए राल बनाना । तकुआ बना बनाया काम मे लिया जाय । समय १० घंटे

साल के अन्त में अपेक्षित गति

१. सलाई ओटनी से ओटने की गति—आध घंटे में १ छटाक कपास ।

२. हाथ ओटनी से ओटने की गति—आध घंटे मे आध सेर कपास ।

३. तुनने की गति—एक घंटे में दस आने भर रुई ।

४. धनुष-धुनकी पर धुनने की गति—पूनी बनाना मिला कर—एक घंटे मे एक तोला ।

५. छोटी धुनकी से धुनने की गति—पूनी बनाना मिला कर—एक घंटे मे साढ़े तीन तोले ।

६. सिर्फ पूनी बनाने की गति—१ तोले की १६ पूनियों के हिसाब से—आध घंटे में साढे सात तोले ।

७. तकली पर कातने के पहले २० तरीकों की आखरी गति—अटेरना छोड कर और दोनों हाथों को एक-सा समय दे कर—

एक घंटे मे १२ नंबर के १२० तार ।

८. तकली पर कातन के आखरी छै तरीकों की गति—अटेरना मिला कर और दोनों हाथों को एक सा समय दे कर—

एक घंटे मे १६ नंबर के १६० तार ।

९. अटेरन पर सूत अटेरने की गति—एक मिनिट में १६ तार ।

१०. धनुष-तकुवे पर कातने की गति—दोनो हाथो को एक-सा समय दे कर और परेतना मिला कर—

एक घंटे मे १६ नंबर की डेढ़ लट्टी ।

नोट—एक हाथ की गति दूसरे हाथ की गति की तीन चौथाई से कम नहीं होनी चाहिये ।

औजारों की मरम्मत और फिटिंग

मरम्मत और फ़िटिंग का अमली काम कताई-धुनाई आदि क्रियाओं के साथ-साथ होगा । उसके लिए खास अलग समय देने की ज़रूरत नहीं है ।

१. तकली-अनी नुकीली बनाना, तकली सीधी करना, डंडी खुरदरी करना।

२. छोटी धुनकी—सिरपट्टी लगाना, कीलें बनाना, रस्सी लगाना।

३. हाथ ओटनी—पच्चें छील कर ठीक बनाना, लोहे का छड़ घिस कर साफ़ करना, बैठक, खम्भे, हत्था आदि हिस्से हिलते हों तो उन्हे ठीक कर देना।

४. धनुष-तकुआ—तेल देना, धनुष पर राल लगाना।

५. तकली, धुनकी, ओटनी, धनुष-तकुवे के हिस्से अलग-अलग करके फिर उन्हें जोड़ना (फिटिंग करना)।

६. मरम्मत, फिटिंग और धनुष आदि चीजे बनाने के लिए नीचे लिखे औज़ार चला सकना:-

१. बरमा	५. रेती	९. पेंचकस
२. रंदा	६. हतौड़ी	१०. चाकू
३. पटासी	७. निहाई	११. कैंची
४. आरी	८. पकड (पेंचिस)	

पहला साल : शास्त्रीय ज्ञान

कताई के शास्त्रीय विषयों पर साल में १५० पाठ दिये जाय। प्रत्येक पाठ ४० मिनट का होगा।

(१) हिन्दुस्तान के समाज-शास्त्र और अर्थशास्त्र का साधारण ज्ञान। खादी का सामाजिक और आर्थिक पहलू। वस्त्र-स्वावलम्ब के बुनियादी उसूल। १५ पाठ

(२) भारतीय वस्त्र-व्यवसाय का इतिहास। ५ पाठ

(३) हिन्दुस्तान की कपास की खेती, व्यापार और भूगोल। कपास की पैदावार बढ़ाने और अच्छे किस्म की कपास पैदा करने की भारत सरकार की नीति और उसका काश्तकारों पर प्रभाव।

कपास का बाज़ार, ख़रीद-फरोख्त और दूसरे देशों से व्यापार। कपास का भाव, दलाली और सट्टा। काटन मार्केट का प्रबन्ध, सेन्ट्रल काटन कमेटी का कार्य। कपास की खेती और व्यापार के बारे मे सरकारी कानून। १५ पाठ

(४) प्रान्तीय और भारतीय कपास की मुख्य-मुख्य किस्मों की जानकारी। रेशों का ज्ञान। अच्छे-बुरे कपास व रुई का ज्ञान। कपास के तौल के प्रचलित नाप-खंडी, मन, गठान, बोझा आदि। ५ पाठ

(५) कताई का गणित—सूत का नम्बर, मज़बूती (कस) और समानता निकालना। बट और फलित-गति निकालना। सूत की क़ीमत और कताई-धुनाई आदि की मज़दूरी लगाना। वस्त्र-स्वावलम्बन की दृष्टि से व्यक्ति, कुटुम्ब और गाँव के लिए अन्दाज़ पत्रक (कूता या एस्टिमेट) बनाना। स्कूल और क्लास के लिए कताई का मासिक और वार्षिक अन्दाज़-पत्रक बनाना।

गति, गति से सम्बन्धित उपक्रियाये, बट, कस, समानता, नंबर, पैदावार मजदूरी वगैरा बातों से सम्बन्धित गणित के सवाल हल करना। कताई की परीक्षा की पद्धति व उससे सम्बन्धित गणित।

गणित से सम्बन्धित प्रत्यक्ष क्रियाये ज्यादातर कताई के काम के साथ साथ होंगी। ४० पाठ

(६) कताई की लिखते [रेकार्ड], आलेख [ग्राफ], और हिसाब-किताब।

(क) व्यक्तिगत व कक्षा की दैनिक व मासिक लिखते व गोशवारा रखना।

(ख) दस्तकारी का रोज़नामचा [लाग बुक] रखना, जिसमे रोज़ के कार्य पर टिप्पणियां, हरएक क्रिया का सचित्र विवरण और अन्य विषयों से समवाय आदि के बारे मे शास्त्रीय दृष्टि से नोट्स लिखे होंगे।

(ग) पहली, दूसरी व तीसरी कक्षा में बच्चों को व शिक्षक को रखने की लिखतों का ज्ञान।

(घ) व्यक्तिगत और क्लास की ओटाई, धुनाई, कताई, आदि कामों का और कपास, रुई, पूनी व सूत का आय-व्यय, बचत, छीजन समय व मज़दूरी का हिसाब-किताब रखना।

(च) व्यक्तिगत और क्लास की दैनिक गति का दाहिने और बाये हाथ का आलेख रखना। व्यक्तिगत और क्लास की कम-से-कम, ज्यादा से ज्यादा और औसत गति का मासिक स्तम्भ—आलेख [पिलर—ग्राफ] रखना। २० पाठ

(७) कताई—धुनाई का यन्त्र-शास्त्र—पाठ्यक्रम मे पहली, दूसरी व तीसरी कक्षाओं के लिए दिये गये यन्त्र—शास्त्र के सवालो का ज्ञान। १५ पाठ

(८) कताई के माल और औज़ार आदि की व्यवस्था—भंडार [स्टोर] मे ठीक तरह से सामान लगाना, सूत छाटना, औज़ारो पर नंबर डालना, कच्चा माल, पक्का माल और औज़ारो का हिसाब—किताब रखना, स्टाक—बुक, खाता—बही, रोकड़ रखना। १० पाठ

व्यवस्था के प्रत्यक्ष अनुभव के लिये स्कूल के भंडार का काम शिक्षक की देखरेख में विद्यार्थियों को टोलिया बनाकर दिया जाय ।

(९) कताई की परिभाषा—कताई व उससे सम्बन्धित क्रियाओं के पारिभाषिक शब्दों का ज्ञान । ५ पाठ

(१०) कताई के औज़ार और रुई, पूनी, सूत आदि कच्चे व पक्के माल की गुण-दोष चिकित्सा—ओटनी, धुनकी-तकली, तात, आदि कताई के औज़ार और माल के गुण-दोष जानना । उनके अलग-अलग हिस्सों और उनके उपयोगों को जानना । क्लास के और कातने व धुनने के कमरों के ढाचे का और उन्हें सजाने का ज्ञान । २० पाठ

दूसरा साल : अमली तालीम

बुनियादी तालीम की चौथी और पाचवी कक्षाओं को पढ़ाने के लिए शिक्षक तैयार करना ।

काम के दिन व रोज़ाना समय विभाग—पहले साल के मुताबिक ।

(१) यरवडा चरखे पर दाहिने व बायें हाथ से बारी बारी से कातना ।

(क) ९० फेरे वाले तकुवे से १२, १६, व २० नंबर का सूत कातना ।

(ख) ४२० फेरे वाले तकुवे से २४ व २८ नंबर का सूत कातना ।

ऊपर लिखे हरएक नंबर की दस दस गुंडिया सूत कातना । कुल ५० गुंडिया होंगी, जिनका वज़न करीब ११० तोले होगा ।

कातने का समय—३ घंटे में ४ लट्टियों के हिसाब से—१५० घंटे ।
धुनने का समय—१ घंटे में ४ तोले के हिसाब से— २८ ,,
कुल समय ४७८ ,,

(२) छोटी धुनकी और मझोली धुनकी से धुनना—कताई के लिए आवश्यक रुई धुनना । धुनाई का समय कताई के समय के साथ-साथ दिया गया है ।

(३) चरखे की मोटी माल बनाना । १० मोटी मालायें बनाना ।

(४) चरखे की पतली माल बनाना—चरखे पर कातने के लिए आवश्यक माल विद्यार्थी खुद बना कर काम में लायेंगे ।

(५) आन्ध्र तरीके से ओटना, तुनना, धुनना, और चरखे पर ४० व ६० नंबर का सूत कातना ।

(क) मछली के जबडे से या कंघी से फिरकिया बनाना। ८ तोले कपास की फिरकिया बनाना। समय ६ घटे

(ख) सलाई–ओटनी से ओटना। २५ तोले कपास ओटना। समय ५ घटे

(ग) आन्ध्र तरीके से तुनना। ९ तोले रुई तुनना। समय १२ घंटे

(घ) धनुष-धुनकी से धुनना–

तुनी हुई रुई धुन कर ९ तोले पूनी बनाना। समय ५ घटे

(च) यरवडा या स्थानीय चरखे पर ४० और ६० नबर का सूत कातना।

४० नंबर की पाच और ६० नबर का चार गुंडिया सूत कातना। कुल ९ गुंडिया होगी जिनका वज़न करीब ९ तोले होगा।

कातने का समय १ घंटे मे १ लट्टी के हिसाब से– समय ३६ घंटे

तुनने, धुनने आदि का समय– समय २८ घंटे

कुल ६४ घटे

(६) सावली या स्थानीय चरखे पर सिर्फ दाहिने से कातना।

२४ नबर की साढ़े सत्रह गुंडिया कातना जिनका वजन २० तोले होगा। कातने का समय ३ घटे में ५ लट्टियों के हिसाब से– ४२ घटे

धुनने का समय १ घंटे में ४ तोले के हिसाब से– करीब ८ घंटे

कुल समय ५० घटे

(७) तकली पर दोनो हाथो से बारी-बारी से कातना।

१६ नबर की ६ गुंडिया कातना जिनका वज़न करीब १५ तोले होगा। कातने का समय ६ घटे में १ गुंडी के हिसाब से–३६ घटे

धुनने का समय १ घटे में ४ तोले के हिसाब से–करीब ४ घंटे

कुल समय ४० घटे

नोट–तकली पर कातने के लिये हफ्ते मे ४० मिनिट की घटियाँ (Periods) दी जायं।

कताई के औजारों की मरम्मत

१. यरवडा चरखे की मरम्मत करना–मोढिये के खाचे ठीक करना, परेता दुरुस्त करना, धुरी कसना, मूलचक्र की मूठ बिठाना, स्प्रिग जरूरत के मुताबिक तनी हुयी या ढीली करना।

२. तकुआ सीधा करना। समय २० घंटे

३. सावली या स्थानीय चरखे की मरम्मत करना ।

४. धनुष, छोटी व मझोली धुनकी की मरम्मत करना ।

५. हाथ ओटनी की मरम्मत करना ।

६. सलाई-ओटनी की मरम्मत करना, सलाई घिस कर साफ़ करना, रंदा चला कर पटरी खुरदरी बनाना ।

कताई व उससे संबधित क्रियाओं के औज़ारों के हरएक हिस्से की मरम्मत करना आ जाना चाहिए ।

औजारों का फिटिंग

१. मछली के जबड़े को हाथ में पकड़ने के लिए लकड़ी बाधना ।

२. धुनकिया, ओटनी, यरवडा सावली व स्थानीय चरखों की फिटिंग करना । औजारों का हरएक हिस्सा अलग अलग खोल कर फिरसे उन्हें जोड़ना चाहिए ।

३. मरम्मत व फिटिंग के वास्ते मामूली बढ़ईगिरी का ज्ञान ।

४. पहले साल में दिये गए बढ़ईगिरी के औज़ारों को अच्छी तरह चला सकना ।

मरम्मत, फिटिंग व बढ़ईगिरी के अमली काम के लिए, तकुआ सीधा करना मिला कर, कुल समय ८० घटे

साल के अन्त में अपेक्षित गति

१. यरवडा चरखे पर कातने की गति—परेतना मिला कर और दोनों हाथों को एक सा समय देकर—३ घंटे में २८ नंबर की ५ लट्टिया ।

२. धुनने की गति—पूनी बनाना मिला कर—

[क] धनुष धुनकी पर— आध घण्टे में १ तोला ।

[ख] छोटी धुनकी पर— एक घण्टे में ४ तोले ।

[ग] मझोली धुनकी पर— एक घण्टे में ६ तोले ।

३. फिरकिया बनाने की गति—एक घण्टे में डेढ़ तोले कपास ।

४. सलाई ओटनी से ओटने की गति--आध घण्टे मे ५ तोले कपास ।

५. आन्ध्र तरीके मे तुनने की गति--एक घण्टे में पौन तोला ।

६. ४० नंबर का सूत कातने की गति, परेतना मिला कर-- एक घंटे में डेढ़ लट्टी ।

७. ६० नंबर का सूत कातने की गति—परेतना मिला कर—
एक घंटे मे एक लट्टी।

८. सावली या स्थानीय चरखे पर कातने की गति, परेतना मिला कर और सिर्फ दाहिने हाथ से–१ घंटे में २५ नंबर की दो लट्टिया।

९. तकली पर कातने की गति, दोनों हाथों को एकसा समय दे कर और अटेरना मिला कर— १६ नंबर के १६० तार।

दूसरा साल : शास्त्रीय ज्ञान

साल में १५० पाठ दिए जायं। प्रत्येक पाठ ४० मिनिट का होगा।

१. भारतीय समाज–शास्त्र और अर्थशास्त्र का तथा खादी के समाज–शास्त्र और अर्थ–शास्त्र का विशेष ज्ञान। १५ पाठ

२. भारतीय और संसार के वस्त्रव्यवसाय का इतिहास। २० पाठ

३. भारतीय और संसार के कपास की खेती, व्यापार और संगठन। २० पाठ

४. कपास का भूगोल। ५ पाठ

५. कताई के कच्चे माल का इतिहास, उसका विकास, वर्त्तमान व्यापार और महत्व। विभिन्न कालों और देशों में कातने और उससे सबंधित क्रियाओं के और औज़ारों का इतिहास व विकास। हिन्दुस्तान के विभिन्न भागों में प्रचलित अलग-अलग तरह के कताई के औज़ारों का ज्ञान। २० पाठ

६. कताई का गणित—पहले साल के पाठ्यक्रम का विशेष ज्ञान। चरखे से संबंधित गणित का ज्ञान। बुनाई से संबंधित गणित का सामान्य ज्ञान। तकुवे के फेरे, सूत का बट, व्यास, कपड़े का पोत, ताना, बाना, पुंजम, नंबर और वजन से संबंधित गणित। चरखा, धुनकी, ओटनी आदि औज़ारों का और उनके हरएक हिस्सों का नाप–जोख।

ऊपर की गणित से संबंधित प्रत्यक्ष क्रियायें ज्यादातर कताई के साथ-साथ होंगी। २० पाठ

७. कताई की लिखतें, आलेख और हिसाब–किताब—पहले साल के इस बारे के पाठ्यक्रम का तफसील के साथ अभ्यास। चौथी और पाचवीं कक्षाओं के बच्चे और शिक्षकों को रखने की लिखतों का ज्ञान। १० पाठ

८. कताई–धुनाई का यंत्र–शास्त्र—चौथे और पाचवे दर्जे के पाठ्यक्रम के यंत्रशास्त्र संबंधी सवालों का ज्ञान।

यंत्र-शास्त्र के सिद्धान्तों का प्राथमिक ज्ञान २५ पाठ

९. बढ़ईगिरी के औज़ारों का इतिहास व भूगोल । १० पाठ

१०. कताई के भन्डार की व्यवस्था—पहले साल के मुताबिक । भन्डार के अमली काम का समय प्रति टोली १८ घंटे । ५ पाठ

आवश्यक जगह (Class-room accommodation)

कताई की दस्तकारी के लिए प्रति विद्यार्थी नीचे लिखे मुताबिक जगह लगेगी—

तकली, धनुष-तकुवा और चरखे पर कातना, तुनना, आदि आदि क्रियाओं के लिए	प्रति विद्यार्थी जगह (Floor-space per pupil) ४×४=१६ वर्ग फुट

इमारत

स्कूल की इमारत ऐसी हो, जिसमें धूप, वर्षा और वायु से पूरी रक्षा हो सके । क्लास का कमरा वर्षा और वायु से सुरक्षित न हो तो वहा कताई का काम करना मुश्किल होगा ।

क्लास का कमरा

कमरा कताई के काम की दृष्टि से पूरा सजाया हुआ (well-equipped) होना चाहिए । इसी कमरे में शिक्षा के अन्य विषयों की भी पढाई होगी, क्योंकि दस्तकारी के साथ-साथ अन्य विषयों का अनुबन्ध करके पढ़ाना आवश्यक है । इसलिए इस दृष्टि से भी कमरा सजाया हुआ होना चाहिए ।

२० विद्यार्थियों के लिए क्लास का कमरा २०×१६=३२० वर्ग फुट का होना चाहिए ।

धुनाई का कमरा

२० विद्यार्थियों के लिए १० विद्यार्थी एक साथ धुन सकें इतना बड़ा कमरा काफ़ी होगा । धुनने के लिए प्रति विद्यार्थी ५×५ वर्ग फुट जगह लगेगी । अर्थात् २० विद्यार्थियो के लिए धुनने का कमरा १०× [५×५]=२५० वर्ग फुट का होना चाहिए ।

धुनने का कमरा वायु से पूरा सुरक्षित हो, लेकिन उसमें रोशनी का पूरा प्रबन्ध होना चाहिए । इसके लिए काच की खिड़कियाँ या कबेलू रखना आवश्यक होगा ।

दूसरे कामों का कमरा

ओटना, तकुवा सीधा करना, तकली, लटकन, आदि कताई की चीजें तैयार करना, सरजाम की मरम्मत करना, आदि कामों के लिए और एक कमरा लगगा। इन कामों के लिए प्रति विद्यार्थी ४×४ वर्ग फुट जगह लगेगी। २० विद्यार्थियों के लिए १० विद्यार्थी एक साथ काम कर सकें इतना बडा कमरा काफी होगा। अर्थात् यह कमरा १०×[४×४]=१६० वर्ग फुट का होना चाहिए।

भन्डार का कमरा

दस्तकारी का सरंजाम, कपास, पूनी सूत आदि कच्चा और पक्का माल और औजार आदि के लिए एक भन्डार का कमरा होगा। यह कमरा खासकर चूहों और दीमकों से अच्छी तरह सुरक्षित होना चाहिए।

२० विद्यार्थियों के लिए १२×१५ फुट का कमरा काफी होगा।

सरंजाम की सूची

२० विद्यार्थियों की क्लास के लिए निम्नलिखित सरंजाम लगेगा। सरजाम की कीमतें अन्दाज से लिखी गई हैं, वे कम ज्यादा हो सकती हैं।

पहला साल

सख्या	सरंजाम	दर	कीमत
५	ओटने की चरखी	२॥	१२॥
१०	सलाई–ओटनी के सेट	॥	५
२०	धनुष–धुनकी	।	५
१०	धुनने और पूनी बनाने के सेट	२	२०
५	नली भरने के सेट	२	१०
४०	तकलिया	=	५
२०	लपेटे	–)॥	२
२०	धनुष–तकुवे	॥	१०
१	बढ़ई के औज़ारों का सेट	१०	१०
१	छोटा काँटा [बाट के साथ]	२॥	२॥
१	बड़ा काँटा [बाट के साथ]	२॥	२॥
१	कस निकालने का काटा	२॥	२॥

२०	तकली-पेटिया	=)॥	३
२०	टीन के डिब्बे	॥	१०
१	आलमारी या सन्दूक	१०	१०

कुल ११० रु.

खपने वाला कच्चा माल

१२०	सेर कपास	३०

इस कपास से जो रुई निकलेगी, उसी से पहले साल की कताई का काम चलेगा। और रुई खरीदने की ज़रूरत नहीं पडेगी।

पहले साल का कुल खर्च १५० रु.

दूसरा साल

१०	मझोली धुनकी	१	१०
४०	तकलिया	=	५
२०	लपेटे	-)॥	२
२०	तकली पेटिया	=)॥	३
१०	यरवडा चरखे	२॥	२५
१०	स्थानीय चरखे	४	४०
६	तकुवा दुरुस्ती के सेट	१	५
१	छोटा काटा (बाट सहित)	२॥	२॥
१	बडा काटा (बाट सहित)	२॥	२॥
१	कस काटा	२॥	२॥
२०	टीन के डिब्बे	॥	१०
१	आलमारी या सन्दूक	१०	१०

११७॥

पहले साल के ओटने, धुनने व बढ़ई के औज़ारों के सेट दूसरे साल भी काम देंगे।

खपने वाला कच्चा माल

५०	सेर रुई	।।।	३७॥
	अन्य खर्च		१०
	दूसरे साल का कुल खर्च		२२५
	दोनों साल का कुल खर्च		३७५

नोट—यह कम से कम आवश्यक सरजाम का हिसाब है।

कान्फ्रेंस में शामिल होने वाले प्रतिनिधियों की सूची

कुमारी अन्नपूर्णा देवी, सेवाघर, बरीकटक [उड़ीसा]
श्री अनाथनाथ बसु, डायरेक्टर, पोस्ट ग्रेजुएट ट्रेनिंग, कलकत्ता यूनिवर्सिटी
अब्दुल गफ़ूर साहब, मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ़
श्री अपूर्व कुमार चन्दा, प्रिंसिपल, डेविड हेअर ट्रेनिंग कालेज, कलकत्ता
ए. ए. काज़मी साहब, स्पेशल आफिसर फॉर प्रायमरी एज्युकेशन, पटना.
श्री अमृतलाल नानावटी, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा
* श्री आर्यनायकम्, मंत्री, हिंदुस्तानी तालीमी सघ, सेवाग्राम (वर्धा)
* श्रीमती आशादेवी, हिन्दुस्तानी तालीमी सघ, सेवाग्राम (वर्धा)
डॉ. आबिद हुसेन, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, जामियानगर, दिल्ली
कुमारी इन्दुमती चिमनलाल सेठ, अहमदाबाद
डॉ. इबादुर्रहमान खा, प्रिंसिपल, बेसिक ट्रेनिग कालेज, इलाहाबाद
श्री उमाकात पाडे, गाधी आश्रम, दिल्ली
श्री उत्तम सिंह तोमर, बेसिक नार्मल स्कूल, सिवनी [मध्य-प्रात]
श्री ओंकारनाथ शर्मा, लोको फोरमैन, सोजत रोड, [जोधपुर]
श्री के. अरुणाचलम, रामकृष्ण विद्यालय, कोयम्बटूर
* श्री कृष्णदास गाधी, सेवाग्राम (वर्धा)
* आचार्य काका कालेलकर, वर्धा
श्री कान्तिलाल मेहता, वर्धा
श्री के. आर. पथिक, आर्य अनाथालय, दिल्ली
श्री के. पाडे, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना.
प्रो. ख़्वाजा गुलामुस्सैयदेन, डायरेक्टर ऑफ ऐज्युकेशन, काश्मीर स्टेट
श्री गोपबन्धु चौधरी, चेयरमैन, बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड, बरीकटक [उड़ीसा]
श्री गयालाल, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री गोपालराव कुलकर्णी, विजय विद्या-मंदिर, अविधा [राजपीपला]
जी. ओ. मुख्तार साहब, डायरेक्टर ऑफ ऐज्युकेशन के पर्सनल असिस्टेन्ट, काश्मीर स्टेट

श्री जी. जी. शर्मा, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री चन्द्रशेखर प्रसाद सिंह, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री चन्द्रगुप्त वार्ष्णेय, हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम [वर्धा]
मि. जे. सी. चटरजी, सुपरिन्टेन्डेन्ट ऑफ ऐज्युकेशन, दिल्ली, अजमेर मेरवाडा और सेन्ट्रल इडिया, दिल्ली
* डॉ. ज़ाकिर हुसैन, अध्यक्ष, हिंदुस्तानी तालीमी संघ, जामियानगर (दिल्ली)
श्री जीवनलाल पडित, बेसिक स्कूल, पिलानी [राजपूताना]
* आचार्य जे. बी. कृपलानी, सेवाग्राम (वर्धा)
मि. जोहन एम. लाल, फ्रेन्ड्स आश्रम, जमई [इटारसी]
श्री पाडेय जदुनन्दन प्रसाद, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री ज्योतीप्रसाद, गाधी आश्रम, दिल्ली
श्री जे. बी. ठाकुर, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री झीनाभाई देसाई, प्रिंसिपल, सेठ चिमनलाल विद्यालय, अहमदाबाद
राव साहब टी. वी. जोग, बेसिक नॉर्मल स्कूल, वर्धा
श्री टी. एम. पारेख, विजय विद्या-मदिर, अविधा (राज पीपला)
श्री टी पी. सिंह, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री टी. सिंह, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री टी. एस त्रिपाठी, बेसिक नॉर्मल स्कूल, सिवनी (मध्य प्रात)
श्री टी. थडानी, प्रिंसिपल, हिन्दू कॉलेज, दिल्ली
* बेगम दुर्रहतुल बैजा हसन, दिल्ली
श्री द्वारकानाथ लेले, ग्रामसेवा-मंडल, वर्धा
श्री दयालचन्द्र सोनी, विद्या-भवन, उदयपुर [राजपूताना]
श्री देवधारीप्रसाद, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री द्वारकासिंह, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री धनीराम वर्मा, बेसिक सुपरवाइजर, डिस्ट्रिक्ट कौंसिल, रायपुर [मध्य प्रात]
श्री धर्मवीर गुप्त, बेसिक स्कूल, हीरपुर (काश्मीर)
श्री एन. जे. पटेल, विजय विद्या-मंदिर, अविधा [राजपीपला]
श्री नीहाररंजन चौधरी, गाधी आश्रम, रनीवा (संयुक्त प्रांत)
श्री प्रभुदास गाधी, गाधी सेवा सदन, आसफ़पुर [संयुक्त प्रात]

मि. पी. एफ. क्यूरिअन, फ्रेन्ड्स आश्रम, जमई [इटारसी]
श्री प्रभाकर दीवान, हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम [वर्धा]
सेठ फूलचद, पी. सी द्वादश श्रेणी एन्ड कं. लि., अलीगढ
फैजुल हक साहब, इन्सपेक्टर ऑफ स्कूल्स, काश्मीर स्टेट
श्री बी. एल. श्रीवास्तव, बेसिक ट्रेनिंग कालेज, इलाहाबाद
श्री बी. एस. तपोधन, विजय विद्या-मंदिर, अविधा [राजपीपला]
* आचार्य बद्रीनाथ वर्मा, बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड, पटना
श्री बी. ब्रम्हचारी, गाधी आश्रम, रनीवा [सयुक्त प्रात]
श्री बी. चौधरी, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना
श्री भगवती भूषण, गाधी आश्रम, रनीवा (संयुक्त प्रात)
मिस एम. साइक्स, विश्व भारती, शातिनिकेतन (बगाल)
श्री मुद्गल, डायरेक्टर ऑफ स्कूल ऐज्युकेशन, इन्दौर स्टेट
* प्रो एम. मुजीब, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, जामिया-नगर [दिल्ली]
श्री एम. पटेल, गाधी सेवा सघ, वर्धा
श्री एम. सबनीस, राष्ट्र-भाषा प्रचार समिति, वर्धा
एम. अब्दुलअज़ीज़ साहब, काश्मीर
मोहम्मद अज़ीर साहब, प्रिन्सिपल, गवर्नमेंट कालेज, हैदराबाद
श्री रामतीर्थ अग्रवाल, मेहरचन्द एन्ड सन्स, मोगा [पजाब]
श्री रघुनाथ मत्तो, काश्मीर
श्रीमती रमादेवी, सेवाघर, बरी-कटक (उड़ीसा)
श्री रामदेव ठाकुर, बिहार चरखा संघ, मधुवनी (बिहार)
रायसाहब पं. रामशरण उपाध्याय, सेक्रेटरी, बेसिक ऐज्युकेशन बोर्ड, पटना
श्री लक्ष्मीनारायण, बिहार चरखा सघ, मधुबनी (बिहार)
श्री एल. राजगोपालराव, जोगन्नापालयम्
श्री लालसिंह, गाधी-आश्रम, रनीवा [संयुक्त प्रात]
* श्री बी. बी. अतीतकार, तिलक राष्ट्रीय विद्यापीठ, पूना
पडित बी. नटेसन, पार्कटाउन, मद्रास
मि. डब्ल्यू. डब्ल्यू. वुड, डायरेक्टर, दिल्ली पोलीटेकनिक, दिल्ली
आचार्य हरिहर दास, पुरी [उड़ीसा]

श्री शिवकुमारलाल, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना

श्री शिवदयालसिंह, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना

श्री शांति स्वरूप, असिस्टेंट इन्स्पेक्टर ऑफ स्कूल्स, काश्मीर स्टेट

श्री शरतचंद्र महाराना, स्पेशल ऑफिसर बेसिक ऐज्युकेशन बरी-कटक (उड़ीसा)

* श्री श्रीकृष्णदास जाजू, वर्धा

श्री शंकर रामचंद्र लोढे, सुपरवाइज़र, बेसिक स्कूल्स, वर्धा

श्री श्रीनारायण चौधरी, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना

डॉ. सईद अंसारी, प्रिन्सिपल, टीचर्स ट्रेनिंग सेन्टर, जामिया-मिल्लिया इस्लामिया, जामियानगर (दिल्ली)

श्री सत्यकाम, बिड़ला कॉलेज, पिलानी (राजपूताना)

मौलवी सिराजुलहुदा, सुपरवाइज़र, बेसिक स्कूल्स, चम्पारन (बिहार)

श्री एस. डी. सरदल, बेसिक स्कूल, सासवद [पूना]

श्री एस. सी. वर्मा, बेसिक स्कूल, पटना

श्री सुन्दरलाल गोल्हानी, बेसिक नार्मल स्कूल, सिवनी [मध्य-प्रांत]

श्रीमती हन्ना सेन, डायरेक्ट्रेस, लेडी इर्विन कॉलेज, नई दिल्ली

श्री हरिभाऊ उपाध्याय, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली

श्री एच. एन. मंडल, बेसिक ट्रेनिंग स्कूल, पटना

श्री एस. एन. चतुर्वेदी, हिन्दुस्तानी तालीमी संघ, सेवाग्राम [वर्धा]

पं. सीताराम चतुर्वेदी, ट्रीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, हिन्दू यूनिवर्सिटी (बनारस)

---

* हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के सदस्य ।